Government Oriental Library Series

Bibliotheca Sanskrita No. 46

पूर्वमीमांसादर्शनम्

श्रीखण्डदेवविरचितया भाट्टदीपिकया सहितम्

तृतीयसम्पुटम्

THE PURVAMIMAMSA-DARSANA

WITH

KHANDADEVA'S BHATTA-DIPIKA

Vol. III

EDITED

A. MAHADEVASASTRI, B.A.,

Curator, Government Oriental Library, Mysore

AND

NIVASACHARYA,

nt Oriental Library, Mysore

DER THE AUTHORITY OF THE
T OF HIS HIGHNESS THE
AJA OF MYSORE

परिशिष्ट-ए.



कवीचें निरंकुशत्व. (Poetic License.)

(श्लोकार्थ) 'अपि माषं मषं कुर्याच्छंदोभंगं त्यजेद्गिराम्' ॥

(गीति) 'कोठें दूरान्वितपद, कोठें चुकली असेल यति मात्र, ।
अतिमात्र दोष ऐसे न वदोत कवी समस्तगुणपात्र'. ॥ (मंत्ररामा. उपक्रम. १९)

(१) **अग्राह्य समास** (संस्कृतप्राकृतसमास):-(१) तोडूनियां **गृहबेड्या,** आलां झालां न देखतां मज वेड्या. ॥ (कृष्णविजय ३२-२९), **क्रियाबेड्या** (कर्ण. ४१-१९), (२) तव दर्शन बा पांचा प्राणां सुख; लाभ हा **जननिबापांचा** ॥ (कृष्ण० ३९-६) (३) पाहे हाहि पसरनि प्रभुसि **तपःपदर** विप्र भव्यास ॥ (अनुशासनपर्व ६-५६) (४) नवल रविपुढें कीट स्वकृत **तमोनाशकाज** वाखाणी ॥ (वनपर्व) (५) एक ब्राह्मण-सत्तम, एक क्षत्रावतंस **धीटपती** ॥ (कर्ण. १०-१५) (६) झाला हा **निबरवया** हानि बरवया न जाणतां होय ॥ (अश्व०३-७) (७) दूत त्रासासि घेती म्हणुनि सुमति ते जोडिती **पायमाचे** ॥ (कृष्णविजय उत्तरार्ध ७२.५३) (८) कुंकुम **माथानीचे** ज्या कर तो पाविजेल माथानीचें (कृष्णवि० १६-३८) (९) हा **विधिनेम** उगे हा म्हणतां तो जाय होउनी मऊ, गेहा (कृष्ण०४.१८) (१०) मृदुरक्त सहज चरण **व्याळशिरोमणिखड्यावरी** संचरण ॥ (कृष्ण१६.३५) (११) किति जेवति वरद गडी कुसुमफळीं **सिक्थपल्लवांकुरदगडी** ॥ (कृष्णविजय अ० १२.७) (१२) हा **साहावाध्याय** श्रवण करावा रसज्ञमुख्यांनीं ॥

(कुशलवोपाख्यान अ० ६) (१३) त्या सुगुणसागराचा पावेल न अंत **सुकविधीटिटवी** ॥ (द्रोणपर्व) (१४) **सुरतश्रांतगोपिकाननधामा** (कृष्णविजय पूर्वार्ध ३३.२१) (१५) **स्नेहरिण** (कृष्णविजय ३२-२९) (१६) **स्वजनभरवसा** (कृष्णविजय उत्तरार्ध) (१७) **स्वपापशिदोरी**–'मग कुजकी जशि दोरी आयुष्याची तुटे स्वपापशिदोरी ॥' (कृष्णविजय-पूर्वार्ध४९.३६) (१८) **स्वात्मघरसें** (कुशलवोपाख्यान).

(२) **अनुस्वारव्यत्ययदोषः**—'काननीं चेष्टा–कां न नीचेष्टा' (हरि.२३-७) (२) 'तज्जननी–तज्जननी' (आदि. १७-७१) (३) 'नन्द नवनीतें–नन्दनवनीं तें' (उद्योग. ८-१५) (४) 'नयनींच्या–नय नीच्या' (आदि. १९-३५) (५) 'नवनवी रजनी–भवन वीरजनीं' (मंत्रभाग.११-५१३) (६) 'राजमणी–नाथ रणीं' (कर्ण.४७-२९) (७) 'सदार जनी–सदा रजनी (मंत्ररामा-अरण्य) (८) 'स्थानीं–ज्ञानी (ब्रह्मो.११-५) (९) हा हानी–हाहांनीं (उद्योग.४-८२) परंतु 'ण', 'न', 'म' ह्या अनुनासिक वर्णांवरील अनुस्वारव्यत्यय सदोष मानणें योग्य होणार नाहीं असें मानल्यास तशीं उदाहरणें सोडून आतां पुढें इतर वर्णांवरील अनुस्वारव्यत्ययदोषांचीं कांहीं उदाहरणें दिलीं आहेतः—(१) देवा व्हावे चक्षुस्तेजःसंपन्न **आश्रमांमाजी** । मामाजी ऐसें धा मति साहेनाचि त्या **श्रमा माजी**. ॥ (वन. १३-६६) (२) असुरांचें **उर गाजे** उत्सरणें वर्ण्य करिकरां **उरगां जे** ॥ (कृष्णविजय ३८-३२) (३) पौरव रौरव गौरव कर्ता भर्ता भला **मला गमसी** । समशील बुद्धि होउनि नीतीनें आजि बोलुं **लाग मसीं**. ॥ (आदि. ११-७६) (८) संजय म्हणे कृतैकश्रितसर्वस्वर्द्रुशौरि **संगति ही** । कां जी करिजेल इतर मणिमंत्रौषधिरसज्ञ **संग तिहीं**. ॥ (भीष्म.६-५)

(३) आकारांत शब्दास तृतीया विभक्तीचा स्वरप्रत्यय लाविल्याचें उदाहरणः—(१) करितों तच्छिक्षित मी, बैस उगा, तूं न होसि कवि **तोरें**. ॥ (सभापर्व अ० ४ गी० ३७)

(४)'छ' अक्षराचा कधीं कधीं 'च्छ' जोडाक्षराप्रमाणें उपयोगः—(१) बहु तेज प्रकट करी शुचि सत्वगुण **छळीं**, हिरा ऊनीं. (वन. ४-७४) (२) कीं यांत **छळ** पुष्कळ जो सावध तोचि शुद्ध यश लाहे ॥ (हरिश्चंद्रा. ५-२५) (३) चारीही हय वेधिले ध्वज मग **छेदूनियां** पाडिला. ॥ (कुश.) (४) रागे वदतां झाली प्रकट **छंदोमयी** अशी वाणी. ॥ (मंत्ररामायण प्राकृत, बालकांड); (५) ह्मणउनि याचि **छंदें** नवमींची वर्णितों कथा सुरसा ॥ (भीष्मभक्ति. गी० ११)

(५) पुढें जोडाक्षर असून मागचें अक्षर दीर्घ होत नाहींः—(१) मथिले त्वदनुजहि **म्ह**णत होते आम्हां रणांत न तरा जे. ॥ (गदा० २-७) (२) साधुनि देईन **सख्या** राया दुर्योधना जशी महिला. ॥ (कर्ण. ६-७.)

(६) यतिभंगः-(१) मागे सुधेविणें **अज–रामरता** केतुवास वरदा त्या ॥ (आदि. अ० ४) (२) शोधूं बरें करूं **कर—णें** तें न विचारितां नव्हे नीट. ॥ (आदि० ३४-८०) (३) नानाभूपशिरः **किरीटमणिदी**-पा ह्या रिपुघ्नाप्रती ॥ (कुशलवो० ६-७) (४) आश्रय देइल कवि **मृग—पागस्कर** मत्त सिंधुरा जगती ॥ (स्त्रीपर्व अ०५-१८) (५) असा

करुनियां बरा दृढ विचार **लंकापति**—। **कुळांतक** असें वदे कठिण कीं श्रुती कांपती ॥ (कुशलवो०३-२०) (६) झाला तसा, जसा **सुनृ-पा** पाहुनि दस्यु वचकला होतो. ॥ (ऐषिक. २-६) याचीं शोधक वाचकांस आणखी पुष्कळ उदाहरणें सांपडतील. विस्तारभयास्तव येथे जास्ती दिलीं नाहींत.

(७) यमकासाठीं शब्दाची ओढाताणः—'अ' काराचा अशुद्ध लोपः— (१) गृध्रद्विज अनुजातें करूनियांऽ**पांजलि**प्रदान, मनीं. ॥ (मंत्ररामा. किष्किंधा.१२१) (२) 'असतो' स्तव **'अस्तो'.** रथहयचतुष्टय, जसे प्रेरित **अस्तो** कवि प्रतोदानें; ॥ (द्रोण. ४-९७) (३) 'असला' स्तव **'असिला'.**—खवळेचि पीडकावरि पन्नग भोगार्धशेष जरि **असिला** ॥ (कर्ण. ३६-३१) (४) 'उरवी' स्तव **'उर्वी'**—तरि कुरुपांडवयुद्धारंभसमय यश तिचें न तें **उर्वी** ॥ (कर्ण.८-३१-१५) (५) 'एकटका' स्तव **'येकटका'.** अतुलबल श्रीमारुति घेउनि औषध्यगासि **येकटका**; ॥ (मंत्ररामायण ६-५४७) (६) 'जुन्या' स्तव **'जुनिया'.** जो भावी अपकारा हृदयांत सदा नव्याचि राम **जुनिया** ॥ (आश्रम.२-९२) (७) 'जो' स्तव **'जा'.** मामाजीस म्हणसि, तें न म्हण, म्हण तयांसि आर्य **आजाबा** ॥ (आदि.३३-७२) (८) 'ज्या' स्तव **'जा'.** कीं त्या अयश नसावें, म्हणती उचितज्ञ देव वीरा **जा** ॥ (बालमंत्ररामा० बाल. २२) (९) 'ज्याला' स्तव **'जाला'.** शक्रहि रक्षूं न शके संहाराया,सजे न मी **जाला** ॥ (कर्ण. १४-४०) (१०) **'झ' स्तव 'ज'.** 'तुझी' स्तव **'तुजी'** (केका १०७), (११) आजा धर्मे गमेलचि जो त्यासि पहा प्रताप हा **माजा** ॥ [ऐषिक. ३-१४] (१२) न करावा शोक तुम्हीं अवलोकुनि हे असी दशा **माजी** (गदा. १९-२३) (१३) 'झाली' स्तव **'जाहली.'** 'कृष्णानुजा सुभद्रा लग्नाला योग्य **जाहली** आहे ॥' (कृष्णवि० ८६ २) (१४) 'झाले' स्तव **'जाहले'** केका ८२ (कर्ण. २८-५८) (१५) **'ठ' स्तव 'ट'.** केली हे मर्यादा, जे आतां चालती जगी **मोटी.** (आदि. १८-४८) (१६) **'ड' स्तव 'ढ'.** गांधारी त्यासि म्हणे हूं म्हण बा वासवप्रभा **वढिला.** ॥ (आश्रम. ६-४८) (१७) 'ती' स्तव **'ते'.** पाहे शिळा बिळाच्या वदनीं, फोडी भुजाबळें पर **ते** ॥ (मंत्ररामा० किष्किधा ३७) (१८) 'तीनदा' स्तव **'तिंदा'**—प्रिय पार्थ मी न देतां परिभव **तिंदा** कशास हा याला. ॥ (द्रोण. १५;९१) (१९) तुझ्यास्तव **'तुझिया'**—केका ४१. (२०) 'तुमच्या' स्तव **'तुमचिया'**–केका १८. (२१) 'त्वां' स्तव **'तां'**—केका ९१ पृ० २२५. (२२) 'त्वां' स्तव **'तुवां'**—केका ९०. (२३) 'दा' स्तव **'धा'**—ते केले दुर्विधिहतमतिशशकांनीं हरी **परागंधा** (आदि. २९-१८) (२४ 'दूर गे' स्तव **'दुर्गे'**—त्वत्पदभजनीं बहुसुख, म्हणुनि म्हणे भक्त मुक्तिला **दुर्गे** ॥ (भीष्म. १.४४) तसेंच 'दुर्गास्तव' १४ पहा. (२५) 'न्हाला' स्तव **'नहाला'**—शरणागतासि सांग, श्रेय क्षीरें सदा **नहाला** जो ॥ (मौसल २-७९) (२६) 'दोघे' स्तव **दोघ**—भिन्ना मूर्तींच त्यांच्या नमन निवसती यापरी **दोघ** वंधू ॥ (कुश. अ० ५-३५) (२७) 'परतावें' स्तव **'पर्तावें'**—पडतां गिरिशिखरच्युतबृहदुपलें कीं खलें न **पर्तावें** ॥ (कर्ण. २८-६) (२८) **'पादुका'** स्तव **'पादु'.** स्वामीच्या श्रीपादू पीठीं स्थापूनि चालवी कार्य (दिव्यरामा. १५) (२९) 'प्याला' स्तव **'पियाला-'** ग्या स्वजनार्थ क्रोधा जेंवि विषा विश्वनायक **पियाला.** ॥ (उद्योग. १२.७८) (३०) 'बहिरी' स्तव **'भेरी**—वाजति, तेव्हां

झाली केवळ ते राक्षसीचमू **भेरी** ॥ (मंत्ररामा. युद्ध. ६२१) (३१) 'बहिरी' स्तव **'भैरी'**–भेरीप्रभृत्यखिलवाद्यखनें करुनि **भैरी**च होय जगती ॥ (कुश० १३-८८) (३२) 'भ्याले' स्तव **'भेले'** विभ्रम झाला रावण, पाहुनि रक्षःक्षया सचिव **भेले.** ॥ (प्रयागरामायण ९३) (३३) 'मर्दीन' स्तव **'मरदीन'**—कीं तो पामर दीन स्वबळेंचि म्हणे, त्रिलोकपा **मरदीन** ॥ (कृष्णवि. ३९-२७) (३४) 'मातें' स्तव **'मतें'**—हा मकरालय दुस्तर याहुनिही जानकी-वियोग **मतें** ॥ (मंत्ररामा. युद्ध. १८) (कुश. ४-४२ पहा.) (३५) 'मानी' स्तव 'मनी'.–शोकाकुळ होउनि, तो स्वदशा तेव्हां सुखप्रदा न **मनी** ॥ (मंत्ररामा. किष्किंधा. १२१) वरील दोन रूपें 'अपि माषं मषं कुर्यात् छंदोभंगं न कारयेत् ।' या नियमाप्रमाणें योग्य आहेत. (३६) 'मामातें' स्तव **'माम्यातें'**—कथुनि तसें व्हावें कां नृप पळवी मूर्छिता **स्वमाम्यातें** (कर्ण. ४४-८) **'मामातें'** हें शुद्ध रूप (गदा. ३-५) यांत दिलें आहे. अनुसरलासि, अव्हेरुनि त्याला, तूं परम मत्त **मामातें.** ॥ (३७) 'वणव्यांत' स्तव **'वणवयांत'**–स्वाघस्मरणांत मला ताप जसा कुंजरा **वणवयांत** (आश्रम. १-४४) (३८) 'शकून' स्तव **'सकून'**—त्या नंदीश्वर शापी, प्रभुसामर्थ्यें वधासहि**सकून** (बालमंत्ररामा. उत्तर. ५) (३९) 'ष' स्तव **'ख'**– सखिया हंसति हंसविती ह्मणती वांछितवरा **उखा** लाहो (हरिवंश ४१.४७) (४०) कोणी न क्षत्रिय या **खु**मतें कल्पूनि **दोख** टाकु सवा ॥ (स्त्रीपर्व ३-११) (४१) हीरक वीरकरगनवटंकेंहि चिरे न, जेंवि **पाखाण** (विराट. ४-३२) (४२) ज्याहुनि अन्य प्रियतर नरलोकीं नच मना **पुरुख**.गमला ॥ (ऐषिक. १-६१) (४३) 'सवित्यास' स्तव **'सवितयास'** (आश्रम. १-३१) (४४) 'स्कंद' स्तव **'स्कंध'** गरुडस्कंधीं मधुरिपु जेवि मयूरद्विजावरी **स्कंध** ॥ (मंत्ररामा. युद्ध. २९) (४४) 'हिंवसा' स्तव **'हिंसा'**—कीं व्हावा बहु दुःसह जठरानलताप भलतसा **हिंसा** ॥ (कर्ण० ४१-४९) (४६) ही' स्तव **'हे'**—**हे** मानसचारांची वाङ्मुक्तांची सदैव रसिका कीं ॥ (मंत्ररामा. युद्ध. ७. ५३) (४७) 'होउनि' स्तव **'होनि'** आर्यसुता ! स्वर्गातें गेलाशि, कसा न **होनि** कृतकार्य. ॥ (मंत्ररामा. ६-३५२) (४८) 'नातवातें' स्तव **'नातुवातें'** त्यजितां ह्मणविल बाई ! विरह तुझा कां न **नातुवातें** 'हा' ! ॥ (महाप्र० १-५) (९) 'चिखल' स्तव **'चिखोल'** हा शोणितमांसाचा झाला सर्वत्र दुर्गम चिखोल ॥ (कर्ण. १२-२५) ५० 'किती' स्तव **'कित्ती'** (त्रुटित रामायण, बाल. ९) (५१) 'हेका' स्तव **'हिका'** (मंजुरामायण ५८)

(८) **ऱ्हस्वास्तव दीर्घ**—(१) 'उचलायाला' स्तव **'ऊचलायाला'** हें रूप मंत्र-रामायण उत्तरकांड ११८ यांत आढळतें. **ऊचलणार** (साररामायण, बालकांडसर्ग ५,६) **'उचलिला'** (केका ४३ पहा.) (२) 'उदंड' स्तव **'ऊदंड'**—आखंडलविष्णूसे, गमती देतां प्रहर्ष **ऊदंड** (मंत्ररामा. ४-१६) (३) 'उठुनि' स्तव **'ऊठुनि**—धर्म प्रसन्नचित्ते **ऊठुनि** भेटे प्रभूसि कर जोडी ॥ (कर्ण. ४३ २२) 'उपडावया' स्तव **'ऊपडावया'** (साररामा. बाल-सर्ग ५-१) (४) 'कवि' स्तव **'कवी'**—अतिमात्र दोष ऐसें न वदोत **कवी** समस्तगुण-पात्र (मंत्ररामा. उपक्रम) (५) **तीच्या**—मंत्ररामा. (६-६०९) (६) **तूझी**—(कुशलवो. १३-४०) (७) **तूझे**—(कर्ण. ४३-७९.) (८) **तूजवरि**—केका ९२ (९) **दीसती, दीसतां**—केका ७७, ९१. (१०) **दूसरा**—मंत्ररामा. ६.२४९. (११) **पूरवूं**—केका

४८ (१२) घेउनि, देउनि अधरामृत, भोगी रत्न वासर**मणी** तें. ॥ (आदि. १६, १४). (१३) जें पाप ताप वारी **वारी** विश्वेश्वरासही तपीं ॥ (भीष्मभक्ति) २. (१४) नागपुरीं भगिनीचें **शकुनी** पूजूनि भूरिदान करी (आदि. १४, ९२) (१५) **हानी**—आदि २४, ३२. (१६) **तूकडे** (कुशलवो. १३, ५६) (१७) जननी जनकपदातें नित्य नमस्कारिती **प्रभूत**नय. ॥ (कृष्णवि. अ. १८) (१८) **'प्रायशः'स्तव-'प्रायशा'** (केका २६) (१९-२१) **देवर्षी ब्रह्मर्षी, राजर्षी,** तेथ तेधवां आले. ॥ (भीष्मभक्ति. ३६) (२२) **'स्रवती'** स्तव **'स्रौती'.** श्रुतिगंगासुरभींच्या त्या त्या सुगुणें-करूनि ज्या **स्रौती.** ॥ (आदि. १.२२) (२३) 'हरि'स्तव **हरी.** तोवरि मदग्रभागीं हा गीतामृतनिधी **हरी** राहो. ॥ (भीष्मभक्ति. ८४)

(९) **दीर्घास्तव ऱ्हस्वः**-(१) धर्ममतिला प्रजा तसि आवडते जेंवि **आइला** दुहिता ॥ (आश्रम. २-८३) (२) तो धृतराष्ट्र प्रमुख स्वगुरूंतें नमुनि जाय **आजि**कडे ॥ (अश्वमेध. ६-३३) (३) यज्जननीच्या होउनि दुग्धधिनें लोल वानिलें **कुशिला** (द्रोणपर्व) ('कुशीला' हें शुद्ध रूप कृष्णविजय प्रद्युम्नाख्यानांत आढळतें.) (४) ऐसें पुसतां मारुति सांगे **तिस** वृत्त सर्वही याचें. ॥ (मंत्ररामायण–सुंदरकांड ६५) (५) 'तीराळा' बद्दल **'तिराळा'** हें रूप मंत्ररामायण प्राकृत ७।१७५ यांत आढळतें. (६) 'तूं' बद्दल **'तुं'** हें ऱ्हस्व रूप त्रुटित रामायण अरण्य १२, व मंत्ररामायण प्राकृत ६।७३८ यांत आढळतें. (७) 'भाऊ' बद्दल 'भाउ'–धर्माच्या समरमखीं चोरातें करुनि न हुत- **भाउ** निघे. ॥ (मौसल. ५५.) (८) गंगेमाजि उलूपी तापोनि उडी, जसी **मगरिं** घाली ॥ (महाप्रस्थानिक १-२०) (९) दाखविती तोक **रिती,** पूजुनि गुरुसा कृतार्थ बहु तो करिती ॥ (कृष्णविजय) 'रीति' हें शुद्ध रूप भीष्मभक्तिभाग्य व उद्योगपर्व यांत आढळतें–**रीति** दहांची हे कीं पहिले समजाविती ल्हानातें– (उद्योग). कैंची इतर जनीं ती जी दावी ज्ञानराशि शुक **रीति** ? (भीष्मभक्ति) (१०) भ्रमतम रजकण वेची, **वाणि** न करि सत्प्रियतम रजकणवेची (कृष्णविजय पूर्वार्ध) (**'वाणी'** हें शुद्ध रूप मदालसाख्यानांत आढळतें).

(१०) वर्तमानकाळवाचक धातुसाधितानेंच पूर्णवर्तमानाचा अर्थ साधिला आहेः—

(१) अल्पभ्यासें जातों, तिळहि न चळतो मुखांत पाणि तमीं, । होईन शब्दवेधी तिमिरांतहि हें मनांत **आणित** मी. ॥ (आदि. २४, १४).

(११) समास असून संधि न केल्याचीं उदाहरणें—(१) तीणें दासीं मोहा कुळविरहीं अध**रअ**मृत पाजी शमोहा ॥ (कृष्णविजय पूर्वार्ध). बहु मानावें तोकें केलें **आंगउपायन** तातें. ॥ (ध्रुवचरित्र ३२) (३) ओ**कआ**त्मधनस्त्रीतें । ओक मानूनि मानसें ॥ (कुशलवो० ४) (४) अंध**जअं**धकहर हो तूं पुण्यश्लोक नीच कलि हा वा ॥ (गदा १,१०६) (५) नकुलशरगण गमे घन झांकाया **कर्णअ**र्यमा वळला. ॥ (कर्ण. १४, ५७) (६) **कृपाअ**रुणा—आर्याकेका (७) गुल्मद्रुमवल्ली**गणअं**तर्हित (मंत्ररामा. ४, ५५) (८) कंठीं मौक्तिकहार **चंदनउटी** अंगीं घनश्यामला ॥ (कुश. ४, ४१) (९) दुरितक-

रअसुरभर (१०) **धनुष्यअब्द** (विराट. ६.१०) (११) अस्मद्वधार्थ **धृतअसि** या करवीं काळही न टाकविता ॥ (विराट. ६,४२) (१२) ब्रह्म **स्वपरमआत्मा** ऐसें म्हणती सदा परतरा ज्या ॥ (अनुशा. ३, ३८) (१३) हर्षकरचि होती जरि पडती बहु **पशुइलाप** परि सव ते (स्त्री. ५, ४९) (१४) **भटआमलक** विखुरले होय तयांची मुखप्रभा मळकी, ॥ (कर्ण. ३९, ३०) (१५) मातृहगाब्जअर्क (कुश. १०) (१६) दुःशासना तसा तूं पुनरपि गौगौः **स्वआननें** ह्मण गा. ॥ (कर्ण. ४५, २३) (१७) लव लवकरिच **स्वआश्रमातें** । तव सुत आणिल; तूं त्यज श्रमातें. ॥ (कुश. ८, २२) (१८) तो येउनि सद्भावें, **स्वउरीं** प्रभुपादपंकजें कवळी. ॥ (कर्ण. २२, १३) (१९) **स्वआयु** (आश्रम. २, ६०) (२०) 'तेजओका' (कर्ण. ३२,९) (२१) **निजओक** (मंत्रभाग. १०-४०७) (२२) विरही**खिन्नअनादिप्रभु**दयितेतें (दशमस्तोत्ररामायण ३६) (२३) **सत्व-उडुप** (द्रोण. २२-२०)

(१२) समास नसून संधि केल्याचीं उदाहरणेंः—(१) **कुरवाळी** (कुरव अळी) [द्रोणपर्व १५, ८०] (२) रण जनविस्मयकारक दारकयुग्मासवें असें रामें । केलें खरतर शरवरधरकरपद्में **गुणांचियारामें** (=गुणांचिया आरामें) [कुशलवोपाख्यान] (३) असाधु अथवा साधु **परंत्वत्याज्य** (=परंतु अत्याज्य) लेंकरूं ॥ [कुशल० ४; ५२] (४) मातर्नमस्ते **क्षमस्वापराधी** (=क्षमस्व अपराधी) न [कुशलवो० ४, ३२] (५) होतां **वृथाग्निनें** तुज मृत्यु नृपा हा अनिष्ट मज वाटे. ॥ (आश्रमवासी ७, १५) (=वृथा अग्निनें). (६) **ग्रंथकृदजरामर** (=ग्रंथकृत्+अजरामर) (अनुशा. १,५५).

(१३) षष्ठी विभक्ति व तिचा संबंधवाचक शब्द (दूरान्वय):—मयूरक-वीच्या काव्यांत षष्ठी विभक्ति एकीकडे व तिचा संबंधवाचक शब्द भलतीकडे असा प्रकार पुष्कळदां आढळतो. परंतु तो संबंधवाचक शब्द कवितेंत अशा खुबीनें ठेविलेला असतो कीं षष्ठी विभक्तीचा संबंध इतर शब्दांशीं न लागतां त्याच दूरस्थ शब्दांशीं लागावा. याचीं कांहीं उदाहरणें:—(१) ज्यांत **शुकाच्या** केलें प्रकट कथुनि धर्मराजयश **तातें** ॥ (स्वर्गा-रोहण २, ३०) (२) दिधलें **सत्यवतीच्या** पुण्य, यश, अनंतशर्म **दायादें** ॥ (स्वर्गा-रोहण २, ३१) (३) **प्रभुचा** मर्मीं हाणी सर्वांसहि तीन तीन शर **भाचा.** ॥ (द्रोणपर्व) (४) **ज्याचा** शास्त्रीं शस्त्रीं व्यवहारीं वासुदेववत् **समज** ॥ (द्रोणपर्व) (५) **चैत्राचिया** प्रतीक्षा करि दीक्षा द्यावयासि **पुनिवेची** (अश्वमेध. ४, ९९) (६) रे उत्तरा ! **शकुनिचा** या व्यूहांत न दिसे मला **भाचा.** ॥ (विराटपर्व) (७) **आर्ताच्या** कां देइल धर्मज्ञ न हाक विप्र **सादास** ? (अश्वमेध. ७,३६).

(१४) दूरान्वय (इतर):—(१) गतगौरव दशरथनृप 'हाय !' ह्मणे, तळमळे, रथीं **तनया** । बसवी कथुनि सुमंत्रा **सस्त्रीका,** दोष लाविती जन या. ॥ (ऋषिरामायण १९)

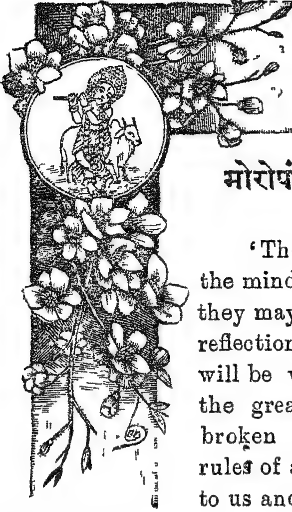
(१५) चमत्कारिक अन्वयः- मोल नव्हे चिंतामणिकोटि रजांचेंहि ज्याचिया पाय (मंत्रभागवत १०-५७) । (अन्वयः-) चिंतामणिकोटि ज्याचिया पायरजांचेंहि मोल नव्हे).

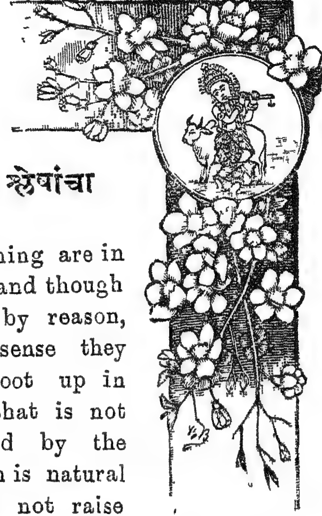
(१६) **अशुद्ध संस्कृतरूपें**:—(१) **'अनुष्ठातुं'** बद्दल **'अनुष्ठितुं'** (आदि. ३१-२७) (२) **'पूते'** बद्दल **'पुनीते'**–तीस ह्मणे द्रुहिण 'अये देवि ! त्रैलोक्यसुंदरि ! **पुनीते** !॥ (आदि. ३८. १३)

(१७) **समानार्थक एकाक्षरी अंत्य यमकें**:—वनपर्व अ० ४ गी० १०४,११९, १२१ यांत 'हा' व २८६ यांत 'ग' हे एकाक्षरी यमक समानार्थक आहे; बाकी या अक्षरांपूर्वी आणखी यमक साधिलेलें आहेच. जसें 'नळाला हो, गळाला हो; 'खरखरा गे', खरखरागे'; इत्यादि. (१७) पुढील श्लोकार्धांत द्वितीय पुरुषाचें बहुवचन व एकवचन एकाच प्रसंगीं योजिलें आहे, तें प्रशस्त नाहीं:—ऐसें ऐकोनि बोले वरदगुरु, **अहो ! हे** महाराज धर्मा !। **आरंभा** राजसूय क्रतु, उचित **तुला,** सत्य **तूं** पुण्यकर्मा; ॥ (कृष्णविजय७२.५)



परिशिष्ट-ऐ.





मोरोपंती काव्यांतील श्लेषांचा स्थलनिर्देश.

'The seeds of punning are in the minds of all men and though they may be subdued by reason, reflection and good sense they will be very apt to shoot up in the greatest genius that is not broken and cultivated by the rules of art. Imitation is natural to us and when it does not raise the mind to poetry, painting and music and other noble arts it often breaks out in puns and quibbles.' (*Addison—'Six papers on wit'*) (भावार्थ) शब्दश्लेषाचें बीज हें सर्व मनुष्यांच्या मनांत असतें. विचार, तर्कपरिचय व समंजसपणा यांनीं जरी त्याची वाढ कमी करितां येते, तरी ललितकलानियमांचा संस्कार नसणाऱ्या व अत्यंत थोर बुद्धिमान पुरुषांच्या मनांतही शब्दावर श्लेष (कोट्या) करण्याची हौस साहजिकपणें उत्पन्न होते. अनुकरण करणें हें मनुष्यास साहजिक आहे. ह्मणून काव्य, चित्रकला, गायन व इतर दुसऱ्या श्रेष्ठ कलांचा अभ्यास नसणारीं मनुष्यें शब्दावर श्लेप अथवा कोट्या करण्यास वारंवार प्रवृत्त होतात. नाट्यकविकुलगुरु शेक्सपीयर, ॲरिस्टाटल यांसारख्या जगद्वंद्य माणसांच्या ग्रंथांतूनही शब्दावर कोट्या करण्याची चटक आढळून येते. ग्रॅहाम नांवाच्या प्रसिद्ध इंग्रज ग्रंथकाराचा श्लेपासंबंधीं पुढील अभिप्राय फार वाचनीय आहे. तो ह्मणतोः—"Language has been like most other things subject to many and various abuses. Anagrams, chronograms, acrostics, &c. have each and all 'fretted their hour upon the stage and now are heard no more'. But the Pun seems likely to maintain its place both in conversation and in written composition. Let us not be misunderstood. It is not the practice, but the abuse of it that is to be condemned. We are strongly of opinion that there can be no greater pest to society than the inveterate and professional punster....But as we have endeavoured to show, the Pun when telling and well applied is as legitimate a form of wit as any other and quite as conducive to good feeling and good fellowship. (*Graham—A book about words*)." (भावार्थ) इतर बहुतेक वस्तूंप्रमाणें भाषेचाही पुष्कळ तऱ्हांनीं दुरुपयोग

केलेला आढळतो. शब्द साधून केलेली अनेकप्रकारची चित्रविचित्र बंधरचना ही पूर्वी कांहीं थोडा काळपर्यंत फार लोकप्रिय होती परंतु आतां तिचें नांवही ऐकूं येत नाहीं. परंतु शब्दावरील कोटी अथवा श्लेष हा प्रकार संभाषणांत अथवा लेखांत अजूनही आढळून येतो व पुढेंही तो आढळून येईल. श्लेषांचा बेताबेतानें उपयोग करणें हें निंद्य नसून त्यांचा दुरुपयोग करणें हें निंद्य आहे. उठल्या सुटल्या शब्दावर कोट्या करणारा मनुष्य समाजास अत्यंत त्रासदायक होतो. परंतु योग्य समयीं श्लेषाचा नेमका उपयोग करणें हें इतर विनोदी प्रकारांप्रमाणेंच योग्य असून त्यामुळें समाजांत परस्पर प्रेमभाव वाढण्यास साहाय्य होतें.

१ अंक (१ चिन्ह, २ लांछन) आदि. १७.२१
२ अचल (१ पर्वत, २ निश्चळ) मुक्ता. १०५ अनुशासन. ८.३१
३ अज (१ दशरथपिता, २ ईश्वर) मुक्तामाला.
४ अजभवप्रहित (१ अजन्म्या शंकरानें पाठविलेला, २ अजकुलोत्पन्न रामानें पाठविलेला) मुक्तामाला ७९.
५ अतिरुक्ष (निर्दय, २ निर्जल) विनायकमाहात्म्य ९३.
६ अंधकारातें (भंगश्लेष) (१ अंधकशत्रोशिवा !२अंधकाराला) हरिहरस्तव४
७ अधोगति (१ नरकवास, २ पातालगमन, ३ खालीं जाणें) कर्णपर्व,केका७५
८ अधःपतन (१ नरकपतन, २ खालीं जाणें,) अमृतमथन १-१०.
९ अनंग (१ काम, २ अंगहीन) हरिवंश ३५-६६.
१० अनंत (१ शेष,२अंतनाहीं) मुक्ता.७९
११ अनल (१ अग्नि, २नलराजा नव्हे तो) वन.४-३३.
१२ अनामया(१नामदेव जवळ नाहीं अशाला २ निरामय देवाला) ज्ञानदेवस्तव.
१३ अपार्थ (१ व्यर्थ, २ अर्जुन नव्हे तो) विराट. ६-४१.
१४ अंबर (१ वस्त्र, २ आकाश) कृष्णविजय २९-१.
१५ अमृत (१ मोक्ष, २ सुधा, ३ पाणी) केका ४१, अश्वमेध २-६६.
१६ अर्क (१ रुईचा वृक्ष, २ सूर्य) कृष्णविजय ८९-५७.
१७ अर्जुन (१ पार्थ, २ सहस्रार्जुन, ३ तृण) कृष्ण० ८९-५७.
१८ अर्थ (१ शब्दार्थ, २ द्रव्य) सन्मनोरथराजि १४.
१९ असती (१ असभ्य, २ जारिणी) कर्ण. २५-१७.
२० अस्तंगत (१ मृत २ मावळलेला) मुक्ता. ६४.
२१ आशुग(१ वेगवान्, २ बाण)मुक्ता.७९
२२ आत्मजाग्रह (१ कन्यारूप ग्रह, २ कन्येविषयीं आग्रह) केका ३३.
२३ आडवें येणें (१ सत्कारार्थ सामोरें जाणें,२प्रतिरोध करणें) विराट. ५-६१
२४ आर्या (१ सती, २ कुलीन पुरुपाला, ३ आर्यावृत्त, ४ पार्वती)सभा.५-११५ भीष्मभक्तिभाग्य, स्वर्गा. २-५२.
२५ इला (१ पृथ्वी, हिला) गदा. १. ३५ द्रोण. ५, ३५.
इलाप हा–इला पहा (अश्व. ५.८३)
२६ उडुप(१चंद्र, २ लघु नौका)कर्ण.७.२२

२७ उत्तर (१ अधिक चांगला, २ विराट-पुत्र) विराट. ६. ३३.
२८ उल्लससि (१ प्रकाशतोस २ उल्लास पावतोस) मुक्ता. ६४
२९ उलूक (१ राजनाम, २ घुबड) कर्ण. ३८-१२.
३० ओक (१ गृह. २ वांति) मंत्रभागवत १०. ४०७.
३१ कच (१ केश, २ बृहस्पतिपुत्र) आदि. ९-६३.
३२ कंठ भूषविणें (१ मालेनें व २ कीर्तिगानानें) कुश. २-३९.
३३ कनक (१ धोत्रा, २ सुवर्ण) कृष्ण. ८३.८१; मंत्रभाग. १०.४१४.
३४ कर (हस्त, २किरण)'आदि. १०-१३.
३५ करग्रहण (१ विवाह, २ हस्तग्रहण) परंतुरामा. १४.
३६ करद (१ हस्तदेणारा २ जकात देणारा) आश्रम. ४-२५.
३७ कर्ण(१कान,२भारती वीर)कर्ण.६-२७
३८ कलंक (१ डाग, २पाप) गोपीगोडवा.
३९ कवि (१ कवनकर्ता.२ज्ञानी. ३ शुक्राचार्य) केका १२२, वामनचरित्र १९५ ('सुकवि').
४० कांत (१ पति, २ सुंदर) मंत्रभाग. १०. ४०६.
४१ काढणें (वेलपत्ती व पत्रावळी) केका७.
४२ कालि (१ देवी, २ अग्निजिव्हा) द्रोण. ११-९८.
४३ कीलाल (१ जल, २रक्त) मुक्ता. ९६.
४४ कु (१ पृथ्वी, २वाईट) स्त्री. ५-१४; विराट. ५-५५.
४५ कुटिल (१ वांकडा, २ कुरळे, ३ कपटी) सत्संगस्तव ५० आदि. ९-६३.
४६ कुपति (१ दुष्टपति २राजा) मुक्ता. १४.
४७ कुमुदाक्षी(१ कमलनेत्राक्षी;२कमलरूपी नेत्र जिचे अशी रात्र) कृष्णविजय २९.
४८ कुलज (१ पर्वतोत्पन्न, २ सत्कुलोत्पन्न) नाममाहा. २५.
४९ कुशलं स्वस्त्यस्तु (१ कल्याण असो, २ मरून मोक्षास जा) सभा. १-९५.
५० कृष्ण (१ काळा, २ वसुदेवसुत, ३ पार्थ, ४ व्यास) कृष्णवि० ६५-१०; कर्ण. ४४.३६; अश्वमेध० ६-८५; मंत्रभाग १०.३९८.
५१ कृष्णा (१ द्रौपदी, २काळी) विराट १,१२४. कृष्णाश्रिता (१ द्रौपदीची आश्रिता, २ कृष्णदेवाची आश्रिता) विराट. १.११.
५२ कृष्णागुरुला (१ चंदनाला, २ कृष्णप्रभुला) भीष्मभक्ति. १९५
५३ कोटि (१ धनुष्कोटि, २ शतलक्ष) आदिपर्व.
५४ खरी (१ खरासुरभगिनी, २ गाढवी) केका ५५.
५५ खोली (१ गांभीर्य, २ दालन) अश्वमेध ४.५७.
५६ चक्रपाणि (१ हातांत चाक घेतलेला, २ कृष्ण) द्रोण. ३.१३२.
५७ चंद्रमुखी (१ चंद्ररूपमुखाची रात्र, २ सुहास्यवदनी) कृष्ण. २९. आ.गी.२
५८ खद्योत (१ काजवा, २सूर्य) वन.३,११.
५९ गणपति, गणेश (१ श्रीगणेश, २ मोरोपंतांचे गुरु गणेशपंत) मंत्र रा० १. कुशलवो. १,१.
६० गति (१ सुगति, मोक्ष, २ चालणें) ('सुगतिप्रद') ज्ञानदेवस्तव ५; ('सुगति')वामनचरित्र १९४,हरिवंश २९.७
६१ गदांसवें (१ रोगांबरोबर, २ गदाशस्त्रांनीं) केका ४६ 'सगद,' 'अगद'

(१ रोगासहित, निरोगी, २ गदेसहित, गदेवांचून) उद्योग. ४,७३.

६२ गभीराशय (१ खोल, २ गंभीर मनाचा) नाममाहात्म्य २५.

६३ गुण (१ दोरी, २ सद्गुण) सभा. ५, १७, सन्मणिमाला ४.

६४ गुरु (१ बाप, २ उपदेष्टा सद्गुरु, ३ यजमान, ४ जड ५ बृहस्पति) केका १२२; कृष्णवि. ८८,५४; द्रोण. २२, १६. मुक्तामाला ८.

६५ गोत्रज (१ पर्वतोत्पन्न, २ कुलीन) नाममा. २५.

६६ गौरी (१ गौरवर्ण, २ पार्वती) भीष्मभक्ति उपसंहार.

६७ घन (१ गंभीर,२मेघ) वन. १२,८०.

६८ चमत्कृति (१ काव्यचमत्कार, २ वस्त्रें पुरविण्याचा चमत्कार) सभा.५.११५.

६९ छळ (१ कपट, २ दुःख) केका ७५.

७० जटिल (१ ज्वालायुक्त, २ जटायुक्त) कृष्णवि. ६६,३१.

७१ जड (१ भारी, २ मूर्ख, ३ जल) केका ४३; दत्तदयोदय ८४.

७२ जडधी (१ जडबुद्धि सागर २जलाशय, सागर.) मुक्ता. ८७. कृष्ण. ५७.३८.

७३ जनक (१ पिता २ जनक राजा) कुश.

७४ जपे(१ जप करी २रक्षी) मंत्ररामा. २१

७५ जय २ विजय (१ अर्जुन २ यश)

७६ जलधी (जडधी द्म. मूर्ख, २ सागर) कृ. वि. ५७.३८.

७७ जीवन (१ प्राण, २ जल) साधुस्तव ६

७८ तप्त (१ तापलेलें, २संतापलेलें (आदि. ३६,२५.

७९ तपला (१ तापला, २ दुःख दिलें) कर्ण. १.१.

८० तम (१ अंधार, २ अज्ञान, ३ दुःख) विराटपर्व, कर्ण ४२,८.

८१ तरणी (१ नौका,२सूर्य) कर्ण ७,२२

८२ ताप (१ उष्णता, २ दुःख) आदि. १७,२१.

प्रताप—(१ उष्णता, २शौर्य)कर्ण. १.१.

८३ तीक्ष्णप्रकृति (१ तापट स्वभावाचा, २ तिखट धारेचा) कर्ण. ३.१३;

८४ तेजस्वी (१ पराक्रमी, २ तेजयुक्त कृष्ण ८१.९३.

८५ थोर (१ उंच, २ थोर मनाचा) नाममा. २५.

८६ दण्ड (१ शासनदंड, २ काठी) शांति. ३,८६.

८७ दक्षिणा (१ दक्षिण दिशा, २ दानद्रव्य) वन. ११,११८.

८८ दान (१ दानद्रव्य, २ गंडस्रावी मद) स्त्रीपर्व ५,९.

८९ द्विज (१ पक्षी, २ ब्राह्मण, ३ वैश्य, ४ दांत) कृष्णवि. ९०,२८; हनुमद्रामा. १२६.

९० द्विजराज (१ चंद्र, २ ब्राह्मणश्रेष्ठ) संशयरत्नमाला ३७.

९१ दुरुदित (१ दुष्टभाषण, २ अशुभ उदय) कर्ण. ४५.४३.

९२ दुर्दिन (१ वाईट दिवस, २ मेघाच्छादित दिवस) कृष्णस्तव. ६४.

९३ देवी (१ राज्ञी, १ देवस्त्री). भीष्मभक्ति उप०, कुशलवोपाख्यान.

९४ दोषाकर (१ चंद्र, २ दोषाची खाण) मुक्ता.

९५ धनंजय (१ अग्नि, २ अर्जुन) कर्ण ८, ३; कृष्णवि. ५८,३४.

९६ धर्म (१ युधिष्ठिर, २ धर्म, ३ यम-

धर्म) कर्णपर्व ४९,१६ कर्ण ४९,११.

९७ धर्मार्थ (१ धर्मराजाकरितां, २ दान-धर्मार्थ) द्रोण.

९८ धाम (१ तेज, २ गृह) नामसुधा-चषक९१.

९९ ध्रुव (१ उत्तानपादपुत्र, २ खरोखर) केका ६५.

१०० नकुळ (१ माद्रीसुत, २ मुंगुस) कर्णपर्व १४,३६.

१०१ नंदन (१ पुत्र, २ स्वर्गवन, ३ आनंद देणारा) साधुरीति ५०, आदि. ३६, ५७; ('नंदनवनं व्रज'-मुक्तामाला)-

१०२ नर (१ अर्जुन, २मनुष्य) मुक्तामाला १ वन. १४,२९.

१०३ नरक (१ असुर, २ नरकस्थान) हरिवंश २५.३८

१०४ नाग (१ सर्प, २ हत्ती) ल्योग. ४,६१; गदा. ३,२१.

१०५ नाम (१ अभिधान, २ अव्यय) मुक्ता. १९

१०६ निर्गुण (१ मूर्ख, २ ईश्वर) भीष्मपर्व १,६४.

१०७ नीरस (१ रसविहीन, रुक्ष, २ दयाहीन) आदि. ९,६३.

१०८ नृसिंह (१ नरश्रेष्ठ, २ अवतारी कृष्ण) कर्ण. ४०,१.

१०९ पंक (१ चिखल, २ पाप) आदि. १५,५४.

११० पडूनि गळां (१ आग्रहानें, २ गळ्यांत पडून) अनु. ५.३४.

१११ पतंग (१ सूर्य, २ किडा) कृष्णविजय ८१,९२.

११२ पत्री (१ पक्षी, २बाण) हरि.२९.१२.

११३ पतित (१ पडलेला, २ पापी) कृष्णवि. ६२,२३, केका ५, सौप्तिक १,४१.

११४ पद (पाऊल,२वाक्यांश) द्रोण.११.२८

११५ पय (१ दुग्ध, २ पाणी) स्फुटकाव्यें भागी.

११६ परपुरुष (१ अन्य पुरुष, २ ईश्वर) सन्मनोरथराजि. ४५.

११७ परस्व (१ दुसऱ्याचें द्रव्य, २ ईश्वराचें द्रव्य) केका ५७.

११८ पराभूति (१ पराभव, २ उत्कृष्ट ऐश्वर्य) गदा. ४,२१.

११९ पर्व (१ पर्वणी, २ खंड) अनुशासनपर्व ७,१.

१२० पाणि (१ जल, २ तेज, ३ हस्त) मंत्रभाग. १०.४००; हरिवंश २५-३१

१२१ पादाधस्थ (१ पायाखालीं राहणारा, २ किरणाखालीं राहणारा) भक्तभूषण १०७.

१२२ पाय धरुनि (१ विनंतिपूर्वक, २ पायापर्यंत लोंबणारी) अनु. ५.३४.

१२३ पीतांबर (१ विष्णु, २ प्यालें आकाश ज्यानें) मुक्ता. ८०.

१२४ पुनर्भव (१ पुन्हा जन्मणारा, २ पुन्हा उगवणारे केस) (आदि. ९.६३)

१२५ पुराणपुरुष (१ ईश्वर, २ वृद्ध) संशयरत्नमाला २३.

१२६ पुरारे (सभंग श्लेष) (१ त्रिपुरशत्रो शंकरा!, ३ पुरा-रे–पुरून टाका) हरिहरस्तव. ९.

१२७ पुरुष (१ जीव, २ मनुष्य) सावित्रीआख्यान अभंग.

१२८ पुष्पवती (१ पुष्पयुक्तलता, २ ऋतुमती स्त्री) मंत्ररामा. यु. ७९१.

१२९ प्रजा (१ संतति २ लोक) सद्गुत्नरामा० १२०

१३० प्रत्यर्थी (१ प्रत्येक याचक, २ शत्रु) कुश. ४,७.

१३१ प्राकृत (१ साधारण मनुष्य, २ प्राकृत म्ह० मराठी भाषा) ज्ञानदेवस्तव ९.

१३२ बळी (१ शक्तिमान्, २ राजनाम) केका ७६.

१३३ भव्यप्रताप (१ प्रखर ऊन आहे ज्याचें, २ स्तोत्रार्ह आहे शौर्य ज्याचें) कर्ण १,१.

१३४ भागवत (१ भाग करणारा, २ भगवद्भक्त) मंत्रभाग. १०, ४२८.

१३५ भीम (१ शिव, २ पृथापुत्र, ३ भयंकर) विराट. २,४९. वनपर्व ९,४५. ('भीमाकृति').

१३६ भुजग (१ भुजस्थ अलंकार, २ सर्प) वनपर्व ११,९८.

१३७ भुजंग (१ सर्प, २ जार) वनपर्व १२, ८८.

१३८ भूभृत (१ राजा, २ पर्वत) मुक्ता.

१३९ मंगल (१ शुभ, २ ग्रहविशेष) कृष्णविजय अ० २९.

१४० मत्स्य (१ मासा, २ मत्स्यदेशस्थ) विराट. २,३२. स्त्रीपर्व ४,६२.

१४१ मधुप (१ भ्रमर, २ दारूबाज) वनपर्व १२,८८.

१४२ मयूर (१ मोर, २ मोरोपंत) केका १२१,१२२, भीष्मभक्तिभाग्य.

१४३ मर्यादा (१ सद्वर्तन, २ सीमा) [अवलंघितमर्यादम्] मुक्ता. ९१.

१४४ मल (१ पाप, २ विष्ठा) केका ५८.

१४५ मलिन (१ मळकट, काळे; २ पापी) कृष्णवि. ६५,३४ ('मलिनवदन'=१ दुष्कर्मानीं कृष्णवदन, २ काजळानें कृष्णवदन-कृष्णवि. ८१,९३).

१४६ मानस (१ मन, २ सरोवर) उद्योग. ११,१७; शल्य. १,६२.

१४७ मार्गण (१ बाण, २ भिक्षुक) कर्णपर्व ३०,५३; शल्य. २,१०८.

१४८ मित्र (१ सूर्य, २ स्नेही) अश्वमेध ३, ५९.

१४९ मुक्ता (१ मोतें, २ सोडलेली) तुलसीस्तव २२. मुक्ता. ४५.

१५० मुरारे (सभंग श्लेष)(१ मुरशत्रो विष्णो! २ मुरुन जा) हरिहरस्तव गी० ९.

१५१ मूर्ति (१ प्रतिमा, २ देह) कर्ण. १,१४.

१५२ यादवा (सभंग श्लेष) (१ कृष्णा, २ या दवाग्निला). (हरिहरस्तव) गी० ५.

१५३ रस (१ जलरस, २ दुग्धरस, ३ शृंगारादि रस, ४ प्रेमरस) कृष्णवि. ६१,१. केका ५८, १०१; अनुशा. ५,७१.

१५४ रसिक (१ सारज्ञ, २ रसज्ञ) अश्व. १. ९२.

१५५ रंभा (१ केळ, २ अप्सरा) कुशलवोपाख्यान अ० ७.

१५६ राग (१ क्रोध, २ प्रेम) विराट ५,११; ५,२८.

१५७ रानट (१ अडाणी, २ रानांत राहणारा) केका १२२.

१५८ राम (१ मनोरम, २ श्रीराम, ३ रामाजीपंत पराडकर) केका १२२ विराट. ७,३७.

१५९ लघु (१ लहान, २ क्षुद्र) गोपीगोडवा.

१६० लागती (१ लागतात, २ झोंबतात) कर्ण. १९,२८.

१६१ वत्स (१ अर्भक, २ वांसरूं) केका ५८.

१६२ वन (१अरण्य, २ जल) वनपर्व ५,४१. केका ४८.

१६३ वर्ण (१ जाति, २ अक्षर) आदि १,२.

१६४ वर (१पति, २ श्रेष्ठ) मंत्रभाग. ११,६०.

१६५ वरासवें (१ वर द्यावयास लागल्याबरोबर २ वररूपी मद्यानें) केका ६८.

१६६ वंश (१ वेळु, २ कुल) मुरलीपंचक ४; वनपर्व ९,२९.

१६७ वाहिनी (१ नदी, २ सेना) मुक्ता. ९४; कर्ण. २१,९.

१६८ विनत (१ नम्र, २ सखल) विराट. ६,११९.

१६९ विमद (१ गतगर्व, २ मदस्राव झालेले हत्ती) स्त्रीपर्व ५,९.

१७० विराट (१ नृपनाम, २ विराट्पुरुष ईश्वर) विराट. १,१४०.

१७१ वृष (१ कर्ण, २ इंद्र) कर्णपर्व ६,११.

१७२ शमलं (१ पाप,२ शम् अलं सुख पुरे) मुक्ता. ३०.

१७३ शर (१ जल, २ बाण) विराट. ४, १२, कर्ण. २४, १६. मुक्ता. ९४.

१७४ शल्य (१ बाणाग्र, २ राजनाम) कर्ण-२१,३१.

१७५ शिखंडी (१ मोर, २ पांचाळ भीष्मशत्रु) भारत.

१७६ शिव (१ कल्याण, २ शंकर) वन. १३,४६.

१७७ शिलीमुख (१ भ्रमर, २ बाण) कुशलवो० ६,३४.

१७८ शुक (१ पोपट, २ शुकाचार्य) कृष्णस्तवराज १७, तुकारामस्तुति २७.

१७९ शुचि (१ शुभ्र, २ पवित्र) आदिपर्व १७,२१.('शुचिमूर्ति'सन्मणिमाला४).

१८० शुद्ध (१ पवित्र, २ श्वेत) हरिवंश ३३, ५५.

१८१ शुद्धोभयपक्ष (१ उभय पंख पांढरे, २ उभय कुलें पवित्र) कृष्णविजय९०,२८.

१८२ श्रवणोचित (१ ऐकण्यास योग्य, २कानांत घालण्यास योग्य) सन्मणिमाला४.

१८३ श्री (१ तेज, २ संपत्ति) मुक्ता. ६४.

१८४ श्रुतिमत (१ वेदमान्य, २ ऐकावयास योग्य) आदिपर्व १,२.

१८५ संचित (१ संचित कर्में; २ सांचवलेलें द्रव्य) केका १०५.

१८६ सत्याश्रित (१ सतीचा आश्रित, २ सत्याचा आश्रित) वनपर्व ४,१२२.

१८७ सदय (साधूंचें भाग्य, २ सकृप) मुक्ता. ३०.

१८८ सदाचरणप्रभवा (१ सदाचारोत्पन्न, २ सत्–परमेश्वर, त्याच्या चरणापासून झालेली) विराट ६,३७.

१८९ सदंड (१ काठी हातांत घेतलेला, २ संन्यासी) केका ५४.

१९० समर्याद (१ मर्यादशील, २ मर्यादयुक्त सागर) नाममाहात्म्य २५.

१९१ सरंध्र (१ उणेपणा असलेला, २ छिद्र असलेला) सभापर्व ६,७९.

१९२ सरला (१ वांकडी नव्हे ती, सरल. २ निष्कपट) मुरलीपंचक ४.

१९३ सरस (१ नवरसयुक्त, २ जलपूर्ण) नाममाहात्म्य २५.

१९४ सरसः (१ जलयुक्त, २ सरोवराहून) मुक्ता. ३०.

१९५ सर्वमत (१शर्व ह्म. शंकरास मान्य, २ सर्वास मान्य) मुक्ता. ८.

१९६ सर्वांगोपभोग (१ सकल अंगदेशाचा उपभोग, २ सकलां अवयवांचा उपभोग) स्त्रीपर्व ५,११.

१९७ सहस्रकर (१ सूर्य, २ हजार हातांचा) कर्ण. १,१. मुक्ता ९.

१९८ सक्षय (१ क्षय झालेला, २ कृष्णपक्षांत उणा होणारा) दत्तदयोदय ८४.

१९९ सीतार्त (१ सीतावियोगार्त, २ शीत-पीडित) वनपर्व ११,१२०.
२०० सीताराम (सभंगश्लेष) (१ थंड बगीचा, २सीतायुक्त रामचंद्र) हरिहरस्तव गी.४.
२०१ सीमंतिनी (१ स्त्री, २ तन्नामक प्रसिद्ध पतिव्रता) गदा ८,२५.
२०२ सुदक्षिणपण (१ सुदक्षिणराजत्व, २ उत्तम चातुर्य) कृष्णविजय ६६,२४.
२०३ सुदर्शन (१ विष्णुचक्र, २ शुभदर्शन, ३ नामविशेष.) आदि. ११,८५; मंत्र-भाग. १०,४१४.
२०४ सुधा (१ चुका, २ अमृत) केका ५१.
२०५ सुभग (१ भाग्यवान्, २ तेजस्वी) मुक्ता. ६४.
२०६ सुवर्ण (१ सोनें, २ उत्तम अक्षरें) नामसुधाचषक ४६,४७.
२०७ सुवास (१ सुगंध, २ उत्तमस्थान) हरि. २३,८९.
२०८ सुवृत्त (१ सदाचरणी, २ वाटोळें) सन्मणिमाला ४.
२०९ सूक्त (१ उत्तम वचन, २ केळीचें सोप) सन्मनोरथ. १८.
२१० सौवर्ण (१ उत्तम अक्षरांचा, २ उत्तम रंगाचा) वनपर्व ४,५६.
२११ संजीवनी (१ संजीवनी विद्या, २ चित्तास आल्हाद देणारी) मुक्ता. ८.
२१२ स्तनग (१ स्तनांवरील हार, २ स्तनावर लोळणारा) वनपर्व ११,९८.
२१३ स्नेह (१ तेल, २ लोभ) कृष्णविजय ८१,९३.
२१४ हरि (१ अश्व, २ इंद्र, ३ विष्णु, ४ सिंह, ५ वानर, ६ हरण करी) के० ३६, १२१, कृष्णवि. ६६,११; कुशलवो. ७,३; कर्ण ११,५९; मुक्ता. ७९.
२१५ हरिरंभासंबंध (१ इंद्ररंभासंबध, २ केळीचा व घोड्याचा संबंध) कुश-लवो. ७,३.
२१६ हि मठद्वारांतुनि (सभंगश्लेष) (१ देखिल मठद्वारांतून, २ हिमठ–पक्के, द्वारांतून) कृष्णविजय–सुभद्राख्यान.
२१७ हे वामना (सभंगश्लेष) (१ हे वामन-रूपधारी विष्णो, २ हेवा मना) हरि-हरस्तव गी० ७.
२१८ हंस (१ पक्षी, २ संन्यासी) आर्या-केका ५४.
२१९ क्षण (१ पळ, २ आनंद) ब्रह्मो. ४, ८.
२२० क्षमा (१ क्षमागुण, २ पृथ्वी) वनपर्व २,५६; स्त्रीपर्व ३, ६.

याशिवाय इतरही थोडे श्लेष कर्णपर्वात व पंताच्या भारतादि काव्यांत शोधकांस आढळतील. सभंगश्लेषाचीं उदाहरणें 'हरिहरप्रार्थना' या दशगीत्यात्मक संस्कृत प्रकरणांत सर्वत्र पसरलेलीं आहेत. नैषधीयचरितासारख्या संस्कृतकाव्यांत श्लेषांची कशी रेलचेल असते तें पाहिलें व चित्रकाव्यालाच उत्कृष्ट काव्य समजणाऱ्या काळांत पंतांनीं श्लेषयोजना अगदीं बेताबाताची व बहुतकरून अक्लिष्ट अशी केली आहे हें लक्ष्यांत आणलें म्हणजे पंतांच्या सदभिरुचीचें फार अभिनंदन करावेंसें वाटतें. याला एकच उदाहरण म्हणून श्रीहर्षकृत **नैषध**काव्यांतील पुढील श्लोक देतों. हा पंचनलवरणप्रसंगीं दमयंतीच्या सखीनें म्हटलेला आहे:–'देवः पतिर्विदुषि नैषधराजगत्या निर्णीयते न किमु न व्रियते भवत्या। नायं नलः खलु तवातिमहानलाभो यद्येनमुज्झसि वरः कतरः परस्ते ॥ सर्ग (१३.३४).'

परिशिष्ट—ओ.



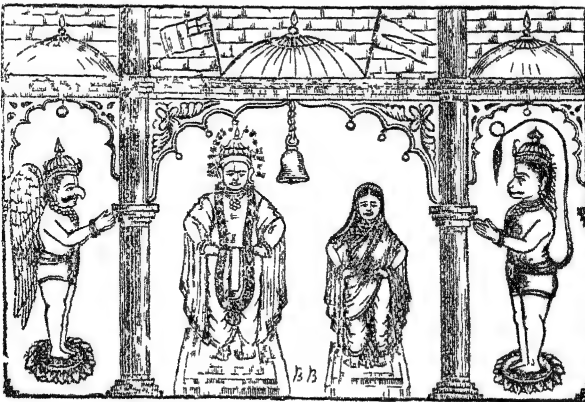
शब्दावर कोट्याः—

(१) तो '**क्षेम**'पूर्व'**धन्वा**' ज्याच्या सुयशें समस्त बुध धाला. ॥ (हरिवंश १,८८)
(२) स्वैर क्रीडावयाचा रतिनिजमतिचा '**दीर्घ**' पूर्व '**प्रसाद.**' ॥ (कृष्णविजय ५५,१३)
(३) गृहीं भेटला सर्वलोक प्रभू ती । सुसंपत्ति नोहे '**परा**' पूर्व'**भूती.**' ॥(कृष्ण.५६,२८)
(४) आह्मां द्यायासि केली असतचि, दिधली तेचि '**गो**'पूर्व '**विंदा.**' ॥ (कृष्ण. ५७, ५)
(५) न्यायें पावेल कैसा परिभव समरीं तो '**जरा**' पूर्व'**संध ?**' ॥ (कृष्ण. ७१, ३)
(६) '**सु**' दुजा '**व**' वर्ण आधीं, मग '**देव**' सुता जयाचिया नामीं. ॥(मंत्रभागवत२,७४)
(७) '**य**' विरामासि म्हणे प्रभु 'जा शर्म असो तुम्हांसि भी सोडा.' ॥ (मंत्रभाग.३,७७)
(८) '**यव**' '**अव**'पूर्व अपूर्व प्रेक्षीं पतिचेहि देवहूति सती. ॥ (मंत्रभाग. ३, ११०)
(९) '**भद्र**'पदपूर्व'**काळी**' देवी तीकारणें वृषलपतिनें ॥ (मंत्रभाग. ५, ४७)
(१०) **वामाद्यदेव** जाणे त्या अपरिज्ञेयवीर्यजलधीतें. ॥ (मंत्रभाग. ८, ९८)
(११) '**गर्त**' पुढें प्रथम '**अजी,**' ज्याच्या नामीं तयाकडे गेला. ॥ (मंत्रभा. ९,१०३)
(१२) **वामादिदेव** वेगा धरिल भगीरथ म्हणे अघहि गंगे. ॥ (मंत्रभाग. ९, १२८)
(१३) '**मोदन**' '**अनु**' पूर्वक त्या शापातें देवदेव दे वसुनी. ॥ (मंत्रभाग. ११, १३)
(१४) '**देवन**' '**परि**'पूर्व करुनि घातलिच उडी तयावरि कपोतें. ॥ (मंत्रभाग. ११,१७४)
(१५) अठरा सहस्र कथिले अतिसुखद '**ब्रह्म**' पूर्व '**वैवर्त**' ॥ (मंत्रभाग. १२, २१५)
(१६) गगनीं अगणित भरले द्याया '**उत्**' पूर्व '**सव**' सुरविमान. ॥ (हरिश्चंद्राख्यान)
(१७) '**सु**' प्रथम '**दर्शन**' तया मागे लागे मुनी पळे त्रासें. ॥ (अंबरीषाख्यान)
(१८) श्लोक प्रिय त्यास जया प्रसन्न तूं '**पुण्य**' पूर्वक '**श्लोक.**' ॥ (नामसुधाचषक ११३)

(१९) संतप्ता निववी घन, वन शृंगारी '**व**' कारवान् '**संत.**' ॥ (नामरसायन ६४)
(२०) कुळजविरोधे संतत **तापगुण** मनीं **अपूर्वता** पावे. ॥ (आदि. ३६, ७८)
(२१) ऐसे ऐकुनि सोडी अहिपतिसा **भीमसेन** सुसत्कारा ।
बहुधा गुरुसंकोच ग्रासी तत्राभवर्ति सु '**स**' कारा. ॥ (सभा. ६, २३)
(२२) ते वृष्टि जसे न करिति तसि सुचि स '**श**'कार'**रावण**' समरसा.॥ (वन.१२.६६)
(२३) माता तात परततां बहु रडती परि रडे न '**सावित्री;**' ।
सुमृदु सुमंत्रीहि म्हणुनि त्यासि म्हणे नामगा नसावि '**त्री.**' ॥ (वन. १३, २९)
(२४) घाया त्या दुष्टांच्या जणुं '**अंतः**' पूर्वी '**पुर**'विलापाला ॥ (विराट १, १६२)
(२५) वाटे सु '**भटें**' पुत्रे मेळविला विप्रसेवनी नव '**ट.**' ॥ (उद्योग. १०, ३२)
(२६) ब्रह्मा नामीं **दुसरा** योग्य, क्षत्रा न, जलजनाभा ! '**ट.**' ॥ (उद्योग. १०, ३३)
(२७) कुंती कर्णासि म्हणे वत्सा कौंतेय तूं न '**राधेय**' ।
राधे यथेष्ट म्हण परि कर्णा ! कर्णासि फार वावे '**य.**' ॥ (उद्योग. ११, ९)
(२८) हे मात्र न ऐकवती सुखद मला '**मनुदु**' मिलित '**राधेय.**' ॥ (उद्योग. ११, १०)
(२९) लिहिति '**रतिस्तुति**' पूर्वी मात्रा देऊनि बा '**य**'**कारा** जा. ॥ (द्रोण. ५, ६९)
(३०) पुसतां कसे श्रुत असे आपणचि '**कृपा**'पुढें तरि म्हणा '**ण.**' ॥ (द्रोण. १५, २७)
(३१) जाणों ते मदमत्त क्रोधोद्धत '**दंपती**'च **अ**'**प**'**कार.** ॥ (कर्ण. ४५, २)
(३२) '**शूर**' '**स**'**कार** '**श**'**कारीं** व्हाया दे द्विषदुरांत फटकारा ।
'**भट**' भीमेतर असता तरि तेव्हां रक्षिता न धु '**ट**'**कारा.** ॥ (गदा. ३, १८)
(३३) होतें अंगीं '**भट**' पण त्याचा आला उमाप तिटकारा ।
त्यांतचि मला दुसरिया देता झाला उमापति '**ट**'कारा. ॥ (अनु. ६, ३२)
(३४) प्रथमचि सुगळ मथी त्या ज्याच्या नामांत '**या**'पुढें ये'**तूं**' ॥ (द्वितीयस्तोत्ररामायण५६)
(३५) '**श्री**'पूर्व'**वत्सवक्षा**' दशरथसुत होय दे जगा तोष. ॥ (सप्तमस्तोत्र रा. १)
(३६) **उत्पूर्वसव** जगा दे ब्रह्मसुख म्हणुनि जया म्हणति कवि 'क'. ॥ (अष्टमस्तोत्र रा.१३)
(३७) '**ण**' पुढें मागे '**रा**' ज्या तो राय कपीस भेटला वानी. ॥ (मात्रा रामा. २६)
(३८) '**राग**''**अनु**'पूर्व भगवद्दास्यी बहु ज्यासि तो महासुकृती. ॥ (नामांक रामा. ९९)
(३९) '**रा**' मग '**ता**' आधीं, हें नाम जिचें, तीस घे, जग नयानें. ॥ (नामांक रामा. ११४)
(४०) '**भ**'व्या रत्ना '**त**'त्वा आधींचे तीन वर्ण तन्नाम. ॥ (दिव्य रामा. ४)
(४१) यन्नामीं आधि'**त्रि**' प्रांतीं '**टा**' हा '**ज**'कार त्यामध्यें. ॥ (दिव्य रामा. ८३)
(४२) **स्वाद्या मित्रा** तिचे दोघे । तज्जन्में धन्यत्वा तो घे. ॥ (सौम्य रामा. ४)
(४३) यन्नामीं '**लक्ष्मा**'चा अंतीं । '**ण**' प्रेमानें ध्यावा संतीं. ॥ (सौम्य रामा. ५)
(४४) आधी **भ** या वर्णापुढें **रत** स्थापी असें. ॥ (सूरा रामा.)
(४५) यदीय नाम युग्मवर्ण '**पं**' अणीक '**पा**' असे. ॥ (पंचचामर रामा. २३)
(४६) सुत ज्येष्ठ जो तो घनश्याम राम; द्वितीया '**भरा**'न्ती'**त**' हें रम्य नाम. ॥२(सुरामायण)
(४७) तदनुजनि '**बिभी**' हे ज्याचिया वर्ण नामीं ।
मग '**षण,**' न कराया सुज्ञ तद्वर्णना मी; ॥ (रामायणपीयूष. ५५)

(४८) भली '**त्रि**'युक् '**जटा**'भिधा निशाचरी परोपरी । (पंचचामर रामा. ३९)
(४९) '**व्याल**,' '**दानव**,' '**बाण**' या पदत्रयांत अक्षरें, ।
तीन शेवटील तेंचि नाम सेविले खरें. ॥ (पंचचामर रामा. ८५)
(५०) '**चित्र**' पदोत्तर '**कूट**' नगा प्रभु जाय; नरोत्तमही विलयातें (सवाई रा. १०)
(५१) '**मां**' पहिला मग '**धा**' मग '**ता**' तिन वर्ण असे गुरु ज्या नृपनामी. ॥
(सवाई रामायण ११७)
(५२) '**राज**' पदोत्तम '**सूय**' असे अभिधान जयास, तयास कराया (सवाई रा १२२)
(५३) '**पं**' असा प्रथम वर्ण '**पा**' मग (गदग्ररामायण ५८).
(५४) ती '**त्रि**' वर्णसहिता '**जटा**' बरी, तो सुपार्श्व, वर दे तयां हरी. ॥ (गदग्र० १८४)
(५५) ज्या '**भ**' आधी '**र**' मध्ये '**त**' अती असे. ॥ (स्रग्विणी रामायण २)
(५६) '**नंदि**' संज्ञा धुर '**ग्राम**' तेथे वसे ॥ (स्रग्विणी रामायण २१)

तसेच '**जटा**' जी '**त्रि**' पूर्वा (१३) '**भादि**' ते '**कैट**', (कन्यारत्नरामायण), '**म**' नामा ज्याच्या ये मग '**श**' पहिला (श्रीरामायण २५), '**भुला**' आधी '**शं**' ज्या (श्रीरामायण ३२), '**पर्ण**' पूर्वा '**कुटी**' (स्रग्विणी रा. २२), '**त्रि**' पूर्वा '**जटा**' (स्रग्विणी. ६४), वर्ण वाहे '**बिभी**' यापुढे जो '**षण**' (स्रग्विणी रा. ६९), '**चित्र**' असे जो पद धरिशि वरी '**कूट**' दुजे सुजन महित नामी (तन्वी रामा. ८) '**असूया**' नसे जीस ती (अनसूया)(दण्डक रामायण, अयोध्या. १३), '**कवच**' मग '**निवात**' आधी असे नाम ज्याचे (दण्डक रा. उत्तर.१४) '**त्रि**' पूर्वा '**जटा**' (मंजु रामायण ८१)



परिशिष्ट-औ.



चित्रकाव्य.

(अ)रामायणेंः—

'Moropant's Ramayans with their fantastic principles of arrangement are a curiosity in literature.' (Report on native publications 1867 by Rao Bahadur M. G. Ranade.)

'मोरोपंतांनी रचिलेली तऱ्हेतऱ्हेची रामायणें हीं महाराष्ट्र ग्रंथसंग्रहांतील एक चमत्कारिक व अपूर्व चीज होय.' (१८६७ पर्यंत छापलेल्या मराठी ग्रंथावरील रावबहादुर रानड्यांचा रिपोर्ट). 'मोरोपंताने एकशेआठ रामायणे रचिलीं ह्याबद्दल मोरोपंताची वाटेल तितकी टवाळी करा, तथापि प्रचंड रामकथेत निरनिराळे व्यूह रचून त्या व्यूहांतून एकशेंआठ वेळां वाट काढण्याची हिंमत त्यांचे अंगी होती ही गोष्ट अगदी निर्विवाद आहे.' (प्रभात जुलै १९१५–'मराठी काव्याची प्रभात', अ. ब. कोल्हटकरांचा लेख) 'पंतांनी चित्रकाव्यें खरडण्यांत व्यर्थ वेळ दवडिला असा फलशून्य वाद आतां माजविण्यापेक्षां पंतांनी चित्रकाव्यें किती सफाईनें रचिली आहेत, चित्रकाव्यांतूनहि रसालंकार साधण्याकडे कसें लक्ष पुरविलें आहे, व एकंदरीनें आपली सन्नामोच्चारणलालसा पुरविण्याकरितां आदरिलेल्या चित्रकाव्यांतूनहि मूळ वर्ण्य विषयाचा धागा कसा तुटूं दिलेला नाही याच दृष्टीनें वाचकांनीं अष्टोत्तरशत रामायणांकडे पहावें असें आह्मी पुनः पुनः ह्मणतो.···एकशेआठ रामायणांचा दीर्घ प्रवास संपवून आलेला

प्रवासी साधारणपणें दमलाभागलेला न दिसतां चांगला तरतरीत व हुशारच दिसेल, आणि मार्गांत बरेच दूरान्वयादि खांचखळगे लागले असले तरी वरचेवर लागणाऱ्या रसादि मनोरम जलाशयांच्या, उपमालंकारादि पुष्पवाटिकांच्या व उपवनांच्या सुखानुभवापुढें त्याला त्या खांचखळग्यांचें व ठेंचांचें विस्मरण होईल अशी आह्मांस आशा वाटते.' …'मराठी भाषेच्या अभिमानी कवीनें रचिलेल्या एकशें आठ रामायणांचा कांहींच उपयोग होणार नाहीं काय? संस्कृत वाङ्मय हा अगाध महोदधि असून त्यामध्यें हजारों वर्षांपासून हजारों पंडितांनीं मनसोक्त क्रीडा केली आहे. संस्कृत वाङ्मयांत भाषेची जितकी कसरत केलेली दिसून येते, तितकी अन्यत्र दिसून येणार नाहीं, व आमच्या मतें हीच उणीव भरून काढण्याचें धोरण अष्टोत्तरशत रामायणें रचतांना पंतानीं ठेविलें होतें असें ह्मणण्यास हरकत नाहीं. चित्र काव्यें हीं बहुधा कृत्रिम व म्हणूनच रसालंकारहीन असल्यामुळें अधमकाव्यांत गणतात. साहित्यशास्त्रकारांचें हें मत गैरवाजवी आहे असें तर केव्हांही म्हणतां येणार नाहीं; तथापि साहित्यशास्त्रकारांच्या ह्या नियमाला अपवादक अशींहि चित्रकाव्यें असूं शकतात असें आढळण्यांत येतें. शिवाय अशा काव्यांचाहि एका दृष्टीनें कांहीं उपयोग असतो. कोणतेंही कथानक एक अथवा अनेक विशिष्ट बधनांखालीं व्यवस्थित रीतीनें कथन करून दाखविण्यानें भाषेची कमावणी होते, शब्दसंग्रह व कल्पनासंग्रह यांची वाढ होते, व एकंदरीनें कवीच्या काव्यविरचनाशक्तीचीहि बरीच कसोटी लागते. अशा कसोटीस पंतांचीं अष्टोत्तर शत रामायणें कितपत उतरतात याच दृष्टीनें आम्ही त्यांच्याकडे पाहतों'''चित्रकाव्य अधमकाव्यांत लेखावें हें टीकाकारांनाच कळतें, आणि स्वतः कवीला कळत नाहीं असें म्हणावयाचें काय? विशेषतः साहित्यशास्त्रनिष्णात असलेल्या पंतासारख्या महाकवीला चित्रकाव्यांसंबंधींचें हें मत अपरिचित होतें असें तर मुळींच ह्मणतां येणार नाहीं. पंतांनीं मराठींत जशीं चित्रकाव्यें रचिलीं तशीं संस्कृतांत रचणारे महाकवीहि आहेत. मग प्रश्न असा उद्भवतो कीं, उत्तम रचना करितां येत असूनहि जाणून बुजून अधम रचना करण्याचा खटाटोप या संस्कृत वा प्राकृत कवींनीं कां करावा? याचें उत्तर असें कीं, निसर्गतः निरोगी प्रकृति असलेल्या मनुष्यालाच तालमींत जाऊन आपलें शरीर अधिक घटविण्याची लहर येणें जसें स्वाभाविक, तसेंच उत्तम काव्यरचना करितां येत असतांहि चित्रकाव्यांसारखीं अधम काव्यें रचून आपल्या बुद्धिला चार वळसे देण्याची कोणाहि कवीस लहर येणें स्वाभाविक आहे. सुप्रसिद्ध लक्ष्मीसहस्राच्या कर्त्यालाहि अशी लहर येऊन त्यानें चित्र काव्याचा ह्मणून एक स्वतंत्र स्तबक रचिला आहे. पंताच्या बाबतींत तर त्यांना कांहीं तरी चित्रकाव्यें रचण्याची लहर आली होती असेंहि म्हणतां येत नाहीं. नाहीं म्हणावयाला केवळ चित्रकाव्य रचण्याचा हेतु त्यांच्या 'अम्लानपंकजमाला' या संस्कृत स्तोत्रांत प्राधान्येंकरून व्यक्त होतो. तसा, लक्षणानें चित्रकाव्यांच्या सदरांत पडणाऱ्या त्यांच्या मंत्रबद्ध व नामबद्ध रामायणांत दिसून येत नाहीं. हीं रामायणें लक्षणानें चित्रकाव्यें असलीं तरी तीं चित्रकाव्यें ह्मणून पंतांनीं रचिलीं नाहींत. हीं रामायणें रचतांना चित्रकाव्यांच्या बाबतींत येणाऱ्या लौकिकदोषापेक्षां पंतांनीं आपल्या भक्तिप्रधान अंतःकरणाला रुचणाऱ्या देवदेवता, तीर्थक्षेत्रें, संतमहंत यांच्या नामोच्चारण-

लालसेलाच अधिक महत्व दिलेलें दिसून येतें. याशिवाय या प्रश्नाला आणखी एक बाजू संभवते. ती अशी कीं, पंताच्या वेळीं सार्वत्रिक अभिरुचिच अशा काव्यांना अधिक प्रोत्साहक असावी. शब्दचमत्काराकडेच तत्कालीन जाणत्या लोकांचा विशेष ओढा असावा……पंतांनीं केली आहे तशी चित्रकाव्यरचना आवडणाराच पक्ष त्या वेळीं प्रबळ होता. तसा तो प्रबळ नसता व उलट पंतांच्या या चित्रकाव्याला नाकें मुरडणारा वर्ग जर निकट असता तर पंतांनीं आपलाच हेका चालविला असता असें आम्हांस वाटत नाहीं ? '(रा. नरसिंह चिं. केळकरकृत 'मोरोपंती रामायणांचा उपोद्घात)'

"Notwithstanding the wilderness of exaggeration and hyperbole through which the reader of the Indian Epics (the Ramayana and the Mahabharata) has occasionally to wander, there are in the whole range of the world's literature few more charming poems than the Ramayana. The classical purity, clearness and simplicity of its style, the exquisite touches of true poetic feeling, with which it abounds, its graphic descriptions of heroic incidents and nature's grandest scenes, the deep acquaintance it displays with the conflicting workings and most refined emotions of the human heart, all entitle it to rank among the most beautiful compositions that have appeared at any period or any country. It is like a spacious and delicious garden; here and there allowed to run wild, but teeming with fruits and flowers, watered by perennial streams, and even its most tangled thickets intersected with delightful pathways. The character of Rama is nobly portrayed. It is only too consistently unselfish to be human; a heroic, noble-minded, pious, and virtuous man, a model son, husband, brother,–whose bravery, unselfish generosity, filial obedience, tender attachment to his wife, fraternal affection, and freedom from all resentful feeling, we cannot help admiring...As to Sita, she is a paragon of wife-like virtues." ('*Indian Wisdom*' *by Monier Williams*).

१ **मात्रारामायण.** यांत 'अ'पासून 'ज्ञ'पर्यंत बहुतेक वर्ण गीतींच्या आरंभीं योजून रचना केली आहे. त्यांत 'अः', 'ट', 'ण' व 'ज्ञ' हे वर्ण कसे खुबीनें योजिले आहेत ते पहाः—

अस्त्रें शस्त्रें प्राथिंति, परि धैर्य धरी चरित्र वाढाया. ॥ १३ ॥
टपकरि मागें घेउनि गेली स्त्री त्या दशानना क्षुद्रा. ॥ २२ ॥
'ण' पुढें, मागें 'रा'ज्या, तो राय कपीस भेटला, वानी; ॥ २६ ॥
ज्ञहि अज्ञहि जन तारी नामें कामादि शत्रुही मारी ।
स्वयशें भवभय वारी, करि भक्तमयूरघन दया भारी. ॥ ४६ ॥

यांतील छापलेली 'औ' स्थानची गीति प्रक्षिप्त असून मूळ पंतरचित गीति वेगळी आहे.
प्रक्षिप्त गीतिः–औषध भवरोगाचें ज्याचें यश तो पुसे खगमृगांतें ।
कोठें प्राणसखी हे लीला तारावया करि जगातें. ॥ ११ ॥

या ठिकाणची मूळ पंतरचित गीति अशी आहेः–

औद्धत्यें लंकेंत श्रीतें रोधी कुधी अशोकवनीं. ।
स्त्रैणल प्रभु दावी बहु हाय म्हणे जरि प्रसन्न मनीं. ॥ १२ ॥

'या दोनच आर्यांची तुलना केली तरी पंतास त्यांचे व्याही बाबापाध्ये यांनीं स्वरचित 'रुक्मिणीपत्रिका' या 'आर्यैकविंशती'च्या समाप्तिलेखांत मयूरकवीचा ज्या **'आर्याचार्य'** उपपदानें उल्लेख केला आहे त्याची सार्थकता प्रत्ययास येते.' (रा. द. पराडकर—'मोरोपंत व त्यांची कविता,' लेखांक ५, केसरी)

२ नामांक रामायण—यांत पूर्वार्धाच्या आरंभीं 'रा' व उत्तरार्धाच्या आरंभीं 'म' याप्रमाणें प्रत्येक गीतींत रामनाम साधिलें आहे. यांतील पहिली गीति अशी आहे:—

राजीवोद्भव विनवी विश्वाहितदशमुखासि माराया; ।
मधुकैटभारि दशरथसुत होय, त्रिभुवनासि ताराया. ॥ १ ॥

३ मंत्रमय रामायण—यांत प्रत्येक गीतींत पंताचा अत्यंत आवडता असा **श्रीराम-जयराम जयजयराम** हा मंत्र साधिला आहे. याचीं दोन उदाहरणें:—(सीतास्वयंवर-प्रसंगाचें वर्णन)

श्रीगलशरासन मथुनि, **जय** करुनि, **धराम**नोव्यथा हरिली; ।
जनकयजनीयतनजा, **राज**सभा**म**द हरुनियां, वरिली. ॥ ५ ॥

(रामराज्याचें वर्णन)

श्रीदचि पु**राम**धिल **ज**न, सुज्ञान सनय **ख**रा पर **म**हर्षी ।
जलदोदय वनजनयन, सर्व मयूरापरी पर**म** हर्षीं. ॥ २४ ॥

४,५,३३,४०,४१,४२, या रामायणांत म्हणजे **बालमंत्ररामायण, प्राकृत मंत्ररा-मायण, मंत्रगर्भ साकीरामायण, मंत्रिरामायण** (अनुष्टुप्छंद), **सप्तमंत्ररामा-यण,** (अनुष्टुप्छंद), **संस्कृतमंत्ररामायण** यांत, तसेंच **७२ व्या रम्यरामायणां**त **श्रीराम जयराम जयजयराम** हा त्रयोदशाक्षरी मंत्र साधिला असून तो बालकांडांत प्रत्येक वृत्ताच्या पहिल्या चरणाच्या पहिल्या अक्षरांत, अयोध्याकांडांत दुसऱ्या अक्षरांत, अरण्यकांडांत तिसऱ्या अक्षरांत, याप्रमाणें क्रमानें शेवटच्या उत्तरकांडांत सातव्या अक्षरांत आला आहे. **६४,६५, त्रिःसप्तमंत्ररामायण,** व **सत्वरामायण** यांत प्रत्येक श्लोकांत सबंध त्रयोदशाक्षरी मंत्र आलेला आहे. याचीं उदाहरणें:—

(त्रिःसप्तमंत्ररामायणांतील)

श्रीकंठादिसुरर्षिसंस्तुत **धरा**देवा**म**राच्या हिता ।
जन्मे **यक्षवरा**नुजप्र**म**थना सूर्यान्वयीं, रक्षिता ।
धर्माचा म**नुज**, स्वयें **य**श **ज**गीं व्हाया, **भय** ध्वंसिता,
ज्ञाला **रा**घव दिग्रथात्मज **म**हातेजा विधीचा पिता. ॥ १ ॥

(सत्वरामायणांतील)

श्रीमान् गाधिज**रा**ज या दशरथा मागे **म**हात्मा सखा
ओज**स्वी** तनय, क्षपाचरहता **रा**खावयाला **म**खा; ।

दे व्हाया **जय** रामलक्ष्मण **जगच्छ्रेयस्कर** क्ष्मापती, ।
ते **रात्रिचर मर्दुनी**, विनविती त्या कौशिकाची मती. ॥ ३ ॥

एकंदरींत श्रीरामत्रयोदशाक्षरी मंत्र साधलेलीं दहा रामायणें आहेत.

६–१५ स्तोत्ररामायणें. या दहा स्तोत्ररामायणांत सुप्रसिद्ध 'विष्णुसहस्रनाम' या स्तोत्रांतील हजार नांवें प्रत्येक रामायणांत शंभर प्रमाणें गुंफिलीं आहेत. "कोणतींही अक्षरें कवितेंत साधून दाखविण्यास जी बुद्धिमत्ता लागते त्याहीपेक्षां अधिक बुद्धिमत्ता 'परंतु,' 'धन्य' असे शब्द यथार्थत्वानें साधण्यास लागेल हें कोणीही कबूल करील; व जो कोणी हीं रामायणें वाचील त्यास तीं चित्रकाव्यें नसून ध्वनिकाव्यें आहेत असेंच आढळून येईल. 'परंतु,' 'धन्य' या रामायणांचें एक असो; परंतु विष्णुसहस्रनामावलींतील सर्व नामें क्रमानें व कथासंदर्भ विस्कळित न होऊं देतां साधणें हें कांहीं लहानसहान काम नव्हे. सबंध विष्णुसहस्रनामावलि साधण्यासाठीं पंताना दहा रामायणें खर्चीं घालावीं लागलीं आहेत. प्रत्येक नामाचा वाच्यार्थ वर्णनाच्या ओघांत सहज मिसळून देण्यासाठीं कोठें कसें वर्णन केलें असतां क्रमानें व यथार्थत्वानें हीं नांवें गोवितां येतील हें ठरविण्याकरितां पंताना समग्र रामकथेचें स्वस्थचित्तानें कितीवेळां चिंतन करावें लागलें असेल बरें!" (मोरोपंताचे समग्र ग्रंथ, खंड ७ अष्टोत्तरशत रामायणें. रा. न. चिं. केळकर केसरीकर्ते यांचा उपोद्घात)

याचा मासलाः—(प्रथमस्तोत्ररामायण)

(गीति) **विश्वस्रष्टा विष्णु**प्रति विनवी दशमुखक्षयार्थ, सया ।
वर वेदशास्त्र**षट्का रक्षा**या दे जगीं करूनि दया. ॥ १ ॥
भूपस्तुतभव्ययशा रविकुल**भव** सत्**प्रभु** प्रथित भारी ।
जो दशरथ प्र**भूत**द्विजहित अस**कृत्** सुरव्यसन वारी. ॥ २ ॥

(नवमस्तोत्ररामायण) किति बुध **सनात् सनातनतम कपिल** असें रघूद्वहा म्हणती, ।
कपि पापांचा **अव्यय** यापरि संस्तविति, करिति या प्रणती. ॥८२॥

(दशमस्तोत्ररामायण) वदला प्रणतां सर्वां, 'संरक्षीनंचि बुधाबुध स्वा मी'; ।
भक्तमयूरदयाघन हा **सर्वप्रहरणायुध** स्वामी. ॥ ८३ ॥

याचप्रमाणें ६ व्या प्राकृतमंत्ररामायणाच्या उत्तरकांडांत 'केवळ उत्तरकांड श्रीरघुपतिमंत्ररत्नमंजूषा' या पंताच्या उपोद्घातांतील (१०) उक्तीवरून रामरक्षास्तोत्राचे श्लोक व इतर मंत्र पंतांनीं गुंफिले असावेत असें कळून येतें. शोधकांनीं त्यांतून पुढील मंत्र ओळखून काढिले आहेतः—

(गी.१-१०) 'रामो दाशरथिः शूरो लक्ष्मणानुचरो बली ।
काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः कौसल्येयो रघूत्तमः ॥ १ ॥'

(गी०११-१७) 'वेदांतवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः ।
जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमेयपराक्रमः ॥ १ ॥'

(गी०१८-२३) 'रावणांतकरः कृष्णो ध्रुवीकृतबिभीषणः ।
सुग्रीवानन्दकर्ता यो वालीहर्ताऽतिपुण्यमान् ॥ १ ॥'

(गी०२४-३०) 'सर्वात्मा सर्वसाक्षी वै सृष्टिस्थित्यंतकृत् विभुः ।
सर्वाश्चर्यमयो वीरः सच्चिदानंदविग्रहः ॥ १ ॥'
(गी०३१-३३) 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' ।
(गी०३४-५०) 'राम राम हरे राम हरे राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥.

१६,१८,१९,२०,२१ यांत म्हणजे (प्रथम) **शिवरामायण, उमारामायण, काशीरामायण, प्रयागरामायण, गंगारामायण** व यांतील प्रत्येक गीतींत अनुक्रमें शिव, उमा, काशी, प्रयाग व गंगा अशीं नांवें साधिलीं आहेत. १७ व्या म्हणजे द्वितीय **शिवरामायणां**त शिवाच्या

'श्रीकंठो वरदः शर्व आशुतोष उमापतिः ।
दयानिधिर्महादेवो भवो भवहरो हरः ॥ १ ॥
.... ।
निरमित्रो निरवधिर्निरविद्यो निरामयः ॥ ११ ॥'

या अष्टोत्तरशत नांवांचा संग्रह केला आहे.

२२,२३,२४,२५ त म्हणजे **तीर्थरामायण, ऋषिरामायण, राजरामायण, व सन्नामगर्भरामायण** यांतील प्रत्येक गीतींत अनुक्रमें एका तीर्थाचें, राजाचें व देव-मुनिसंतसाधुभक्ताचें नांव गोविलें आहे. मासल्याकरितां पुढील उदाहरणें पहाः—

तीर्थरामायणांतील ५८ गीतींत पुष्कर, सरयू, गंडकी, गोमती, शोणभद्र, फल्गु······ शिवगंगा, महान्हद, कावेरी, ताम्रपर्णी, सेतुवाहिनी ह्या तीर्थांचीं नांवें गोंवून शेवटच्या गीतींत **सर्वतीर्थ** हें नांव पंतांनीं साधिलें आहे. तें असेंः—

श्रीराम **स**कळहितकर निर्जरत**र्वे**धिकचरणकंजरजा ।
जग**ती**श पुम**र्थ**प्रद यश करि कवि म्हणति वज्रपंजर जा (=ज्या). ॥ ५९ ॥

तसेंच ऋषिरामायणांत यवक्रीत, रैभ्य, कक्षीवान् औशिज, भृगु······निशाकर, शंख, लिखित, पराशर, वालखिल्य, अशीं नांवें गोंवून शेवटीं सर्वर्षि हें नांव साधिलें आहे. उदाहरणः—

केला भूप बिभीषण अभिषेक **अणी**क **मां**ड**वु**नि भ**व्य**, ।
दिव्योत्तीर्णा देवी प्रभुचा उत्संग शोभवी सव्य. ॥ ६७ ॥

राजरामायणांत नृग, ययाति, नहुष, यदु, पुरु, धुंधुमार······शल्य, द्रुपद, विराट, ककुत्स्थ, प्रियव्रत, उत्तानपाद अशीं नांवें गोविलीं आहेत. उदाहरणः—

उत्तम आनंद दिला, ह**त्ता**प **न** उरविला जनीं कांहीं, ।
पापषडरि **द्**मिले प्रभुनामेंचि, अजेय जे अनीकांहीं. ॥ ८६ ॥

सन्नामगर्भरामायणांत श्रीगणपति, सरस्वती, कुलदेव, गुरु, शिव, विधि, नारद, प्रऱ्हाद, पराशर, पुंडरीक, सनक, बळी, व्यास, अंबरीष, शुक, शौनक, परीक्षिति, निवृत्ति, ज्ञानदेव, सोपानदेव, मुक्ताबाई, चांगदेव, भानुदास, जनार्दन, एकोपंत, वामनस्वामी, श्रीधर, केशव, गणेश, अनंत, कृष्णदास, जयराम, आनंदमूर्ति, रंगनाथ, रामदास, कल्याण, उद्धव-

चिद्धन, केशवस्वामी, शिवराम, पुरंदर, दासोपंत, दामाजीपंत, रामानंद, कबीर, रोहिदास, मलूकदास, पीपाजी, धनाजाट, नानक, मिराबाई, कर्माबाई, सेना न्हावी, माधवदास, तुळसीदास, मनसुखदास, रामप्रसाद, त्रिनयनवाणी, नरसिंहमेहता, केवळकुबाजी, श्रुतिदेव, सुदामदेव, नामदेव, लाखाभक्त, जनी, गोरा कुंभार, सांवता माळी, खेचरविसोबा, चिंचवडकर देव, दामोदर देव, तुकावाणी, बोधला, मालोपंत, मुद्गल, बहिरापिसा, परिगा भागवत, हरिनारायण, मुकुंदराज, मुक्तेश्वर, कृष्णदयार्णव, जगमित्रनागा, आनंदतनय, निपटनिरंजन, मानपुरी, सूरदास, केशवदास, भक्तमालाकार, बिहारी, भक्तविजयकार, हरिविजयकार, वृंदावनवासी, अयोध्यावासी, काशीवासी, द्वारकावासी, सर्वक्षेत्रवासी, चोखामेळा, शंकराजीबावा, नारायणबावा, शिवदीन, प्रल्हाद बडवे, अमृतराय, पांडोबा आपा, गोविंद गोसावी, बाळकृष्णबावा, विठोबादादा, सकळहरिजन, बाबूराय सदाशिव, कालिदास, वैकुंठाश्रय, हीं नांवें गोंवून शेवटीं **'पंढरपुरवासी हरिकथायज्ञश्रवणरसिकसेवक मयूर'** असें स्वतःचें नांवही घातलें आहे. यावरून पंतांची समदृष्टी व सत्संगलालसा हीं सुव्यक्त होतात. या रामायणाचें एक उदाहरणः—

> भव्यार्थ व्यक्त कथी अंगद, परि साम न करि अविचार; ।
> तो निजलयरुचि दावी रामहरिपुढें निकाम अविचार. ॥ ८७ ॥

नूतनोपलब्ध 'सद्गर्भ' रामायणांत १५२ गीतींच्या प्रथमाक्षरांनीं पुढील देवांचीं व संतांचीं नांवें साधलीं आहेतः–'श्रीगजवदन, सरस्वती, कुलदेव, मातापिता, विद्याप्रदगुरु, सांब, विधि, नारद, प्राचेतस, सदाशिवनंदन, जयदेव, साग्रजानुज ज्ञानदेव, एकोपंत, रामदास, दासोपंत, वामनस्वामी, केशव, जयराम, विठोबा, दामाजी, तुलसीदास, रामानंद, कबीर, पीपाजी, नरसिंह मेहता, माधवदास, नामदेव, तुकोबा, अनंतोपाध्याय, मिराबाई, रोहिदास, विसोबा खेचर, चांगदेव, भानुदास, (व) अमृतराय'. हें रामायण सुलभ व मधुर झालें आहे. पुढील दोनच गीति पाहाः—

> 'सोमें चकोर, मेघें चातक, जन तेंवि निववीले रामें; ।
> नामें प्रभुच्या केलीं कल्पतरूचीं हतप्रभे दामें.' ॥ १३५ ॥
> 'रघुपति राज्य प्रेमें करि एकादशसहस्र वत्सर हा; ।
> वदले तयांत कामक्रोधांसह दंभलोभमत्सर 'हा'!. ॥ १३९ ॥

धन्यरामायणः—'मैराळबोवा चातुर्मास्ये यांच्या हातून गहाळ झालेल्या रामायणांपैकीं हें एक असून' याचा उपलब्ध झालेला त्रुटित भाग पराडकर संपादित 'मोरोपंताचे समग्र ग्रंथ' खण्ड ८ वा याचे शेवटीं छापलेला आहे. याच्या एकूण ११७ गीति व उपसंहाराचा १ श्लोक असून त्यांतील ४४ व्या गीतीच्या चतुर्थचरणापासून ८८ व्या गीतीच्या प्रथमचरणापर्यंतच्या गीति गहाळ झाल्या आहेत. यांतील प्रत्येक गीतींत **धन्य** हा शब्द निदान एकदां तरी मोठ्या खुबीनें योजिला आहे. हें रामायण फार सरळ व रसाळ असेंच उतरलें आहे. त्यांतील थोडा मासलाः—

विष्णु प्रभु अवतरला जेथें तो वंश भानुचा **धन्य,** ।
धन्य दशरथ त्रिजगीं कोणी झाला नसे असा अन्य. ॥ १ ॥
देवर्षि **धन्य, धन्य** श्रीमान् वाल्मीकि आदिकवि लोकीं. ।
धन्य महाकाव्य श्रीरामायण, जें बुडों न दे शोकीं. ॥ २ ॥
धन्या देवर्षिमतें जरि जनधीतूनि मंथरा गेली, ।
धन्या कैकेयी जरि पतिवरि सोडूनि पंथ रागेली. ॥ १९ ॥
तो **धन्य** शाप, **धन्य**चि दशरथनृपमृत्यु; 'रामराम !' असें ।
ह्मणत प्राण त्यागी प्रभुशोकें; मरण हें न **धन्य** असें ? ॥ २९ ॥
धन्या शूर्पणखा, जी करि जीवांची उदंड हानि, रया ।
वात्येच्या प्रकटि, तिच्या चुकवि प्रभुकृत सुदंड हा निरया. ॥ ४३ ॥
धन्या पुरी अयोध्या, **धन्या** सर्व प्रजा, धरा **धन्या,** ।
धन्या भास्कर संतति, रामकथा लाजवी कथा अन्या. ॥ ११२ ॥
घोर कलींत मयूरहि गाववुनि स्वयश **धन्य** केला हो ! ।
हे श्रीराम प्रभुची कीर्ति सखी जन्हुकन्यकेला हो.' ॥ ११७ ॥

२६ वें परंतु रामायणः—

श्रीरामचरित करितें मुक्त सकृत् किमपि सेवितां भावें, ।
पार न लागे दशशतवदनाहि, **परंतु** वाटतें गावें. ॥ १ ॥
थोडें **परंतु** रामायण रामपदीं उदंड हो भावें; ।
लोभावें रसिकजनीं या सुयशें सज्जनांत शोभावें. ॥ ८८ ॥

यांतील प्रत्येक गीतींत 'परंतु' शब्द कवीनें मोठ्या चातुर्यानें अर्थहानि बिलकूल होऊं न देतां योजिला आहे.

२७ व्या लघु अथवा सुखरामायणांत केवळ लघ्वक्षरेंच योजिलीं आहेत.

कुशिकतनयसवसमवन करि मुनिवरयुवतिदुरितगिरिस खणी, ।
मग पुरदरधनु चुरि, वरि अवनिजनिस, सकळसुभटमुगुटमणी. ॥ २ ॥
कपिपतिसुतनुस महिजनि निजनिकटचि बसवि, सुखवि बहु परमा; ।
वदलि, 'सखि ! मम पतिस तव पतिच जवळि मजहि सदयमति सरमा.' ॥

या रामायणांत पंतांनीं लघ्वक्षरें योजून अनुप्रासही चांगले साधले आहेत. चित्रकाव्याच्या नात्यानें या रामायणाची योग्यता मोठी आहे.

२८ व्या निरोष्ठरामायणांत पंतांनीं ओष्ठ्यवर्णाची योजना केली नाहीं.

२९ व्या दामरामायणांत गीतीच्या प्रत्येक अर्धाचीं शेवटील थोडीं अक्षरें (बहुत-करून तीन, क्वचित् स्थळीं दोन किंवा चार) दुसऱ्या अर्धाच्या आरंभीं आणून फुलें एकांत एक गुंतवून जसा त्यांचा हार करितात तसा हार (दाम) बनविला आहे, याचीं उदाहरणें:—
(प्रभुचरित्रमहिमा)

पिक वीतबाध कवि या चरितामृतवनांत कूजिती, **सुरस** ।
सुरसध्नींचा लाजे, यश हें श्रीशिव म्हणे 'शिवे **परिस**'. ॥ ३ ॥

परिस सुवर्ण करितसे लोहा, जीवासि शिवचि हा **महिमा,** ।
महिमान्या स्वर्गांही, स्वकुल म्हणे धन्य यत्प्रभा अहिमा. ॥ ४ ॥

असाच प्रकार कांहींसा पंतांनीं आपल्या शिखरिणीवृत्तरचित नूतनोपलब्ध **श्रीरामायणांत** केलेला आढळतो त्यांत प्रत्येक श्लोकार्धांत दाम साधिले असून कोठें कोठें सबंध श्लोकांत ही तें साधिलेलें आहे याची दोन उदाहरणें:—

जयें श्रीरामाच्या परम मह होय त्रिभु**वनीं** ।
वनीं वर्षे बर्हीं मुदित अथवा ते झष वनीं. ॥
सुरर्षीनें केलें स्तवन, बहु गंधर्व त**नना** ।
न नाकीं ही तैसा करिति, अरिच्या गाति हनना. ॥ ४० ॥

यशाची रामाच्या नुरवि अमृताची चव **कळा,** ।
कळावा चित्ताश्वा जडुनि हि सुखा दे चव**कळा.** ॥
कळा अर्पी, तर्पी, मुनि ह्मणति 'हें धन्य क**रितें.** ।
रितें त्या पूर्णत्वप्रद, दुरित संताप हरितें.' ॥ ४१ ॥

शेवटचा श्लोक उत्कृष्ट दामयमकाचें उदाहरण आहे. अशीं पुष्कळ उदाहरणें यांत आहेत.

३१ व्या 'दीर्घ' अथवा 'दिव्य' रामायणांत प्रत्येक गीतींत कवीनें योजवतील तितके 'म' गण योजिले आहेत. गीत्यर्धाच्या सहाव्या स्थानीं फक्त पंतांनी 'ज'गण निरुपायास्तव योजिलेला आढळतो. प्रत्येक गीत्यर्धांतील १६ अक्षरांपैकीं १४ अक्षरें गुरु असून २ मात्र लघु आहेत. उदाहरणः—

कल्याणाच्या मूळा श्रीकांता भक्त**वत्सला** ताता ।
प्रार्थी अत्युन्मत्ता दिक्कंठातें **वधावया** धाता. ॥ १ ॥

२७ व्या 'सौम्य रामायणां'त वृत्तनियमाप्रमाणें पहिल्या अर्धांत सर्व गुरु अक्षरें व दुसऱ्या अर्धांत सर्व लघु अक्षरें योजिलीं आहेत. लघुरामायण, दीर्घरामायण, व हें सौम्यरामायण यावरून पंतांचें भाषाप्रभुत्व चांगलें व्यक्त होतें. याचें उदाहरणः—(अहिल्योद्धार व सीताहरण.)

वारी पादस्पर्शें तापा, तारी साध्वी, नाशी शापा; ।
पुरवि जनकपण, चुरि पुरहरधनु, वरि विभु महिजनु सुरुचिरतरतनु. ॥ ८ ॥

अद्भुत रामायण—या नांवाचें एक त्रुटित प्रकरण मोरोपंतकृत म्हणून आढळतें असें एका गृहस्थानें काव्यसंग्रहकारांस मागे कळविलें होतें. रसिकांनीं त्याचा शोध करावा म्हणून त्यांतील उपलब्ध चार आर्या पुढें दिल्या आहेतः—

'सच्चित्सुखघन, अक्रिय, तेणें त्र्यंबकधनुष्य भंगावें ।
स्त्रीकामास्तव, **अद्भुत** सद्यश हें व्यासवाल्मिकीं गावें. ॥ १ ॥
कैलासा डळमळवी त्यातें शिवचाप काय न ढळावें ? ।
हें **अद्भुत** सीतेनें तें धनु घोडा करूनि खेळावें. ॥ २ ॥

अथवा स्पर्शें जडता जाउनि, सद्बुद्धि होय कोदंडा, ।
श्रीरामातें प्रार्थी, हें **अद्भुत** 'मज अशा खळा दंडा.' ॥ ३ ॥
किंवा चापमिषे हा दृढतर ज्ञानाभिमान जनकाचा, ।
भंगुनि, पर्णावी स्त्री, हा **अद्भुत** हेतु विश्वजनकाचा.' ॥ ४ ॥

७३ वें ओवीरामायणः—वास्तविकपणें हें चौदा गीतींचें एक **रामस्तोत्र** असून छापणारांनीं त्याला रामायणाचा पोषाख देऊन छापिलें आहे. तसेंच त्यांतील 'वंदुनि सरस्वतीला...','कैलासीं नगतनया...'व शेवटचा अनुष्टुप् श्लोक अशीं तीन पद्ये प्रक्षिप्त आहेत असें रा. द. पराडकर यांचें ह्मणणें आहे. यांत ओवी व गीति अशीं दोन्हीं वृत्ते साधिलीं आहेत. त्याचीं उदाहरणें–

वंदुनि सरस्वतीला ध्याती कुलदेवतेसि कवि सर्व ।
गाती निजपूर्वजगुरुमूर्ती हरि गुरु तथैव कवि शर्व. ॥ ६३ ॥
(ओवी) वंदुनि सरस्वतीला ध्याती । कुलदेवतेसि कवि सर्व गाती ।
निजपूर्वजगुरुमूर्ती । हरि गुरु तथैव कवि शर्व. ॥
सीताकांता ! मेघश्यामा ! हा दीन दास लक्षावा ।
रामा ! अनुदिनि वदनीं नामा वसवोनि नित्य रक्षावा. ॥ ५ ॥
(ओवी) सीताकांता ! मेघश्यामा ! । हा दीन दास लक्षावा रामा ! ।
अनुदिनिं वदनीं नामा । वसवोनि नित्य रक्षावा. ॥

'तसेंच **आर्या ओवी रामस्तोत्रांची** पंतलिखित प्रत चातुर्मासे यांचे दप्तरांत राहिली असून तिच्या दुसऱ्या अंगावर, पंतांनीं **आर्येंत अनुष्टुप् श्लोक** साधून रचलेले दहा आर्यांचें एक **ईशस्तोत्र** (ज्यांत विशिष्ट देवतांचें विशेष वर्णन नाहीं असें) लिहिलें आहे. हें स्तोत्र अप्रसिद्ध असल्यामुळें त्याचा नमुना पुढें दिला आहे. आर्या अनुष्टुब् वृत्तांत ह्मणण्यास आरंभ करून चरणाचे अखेरचीं अनपेक्षित अक्षरें सोडून द्यावयाचीं अशी याची रचना आहे.

सदया नत हा दीन प्रभु तूं सुख दे सदा ॥ शिवा याला ।
निरसीं भवबाधेतें क्षण दाखिव वा पदा ॥ निवायाला ॥ १ ॥
रामा दयासमुद्रा मी आलों शरण पावना ॥ माजी ।
भ्याली न धैर्य पावे धी हे संसरण गा वना ॥ माजी ॥ २ ॥
तुजवांचुनि कोणातें विनवूं व्रजपालका ! ॥ हरी बाधा. ।
जननीच बहु स्नेहें जपती निजबालकाः ॥ ह्मणे बा ! धा. ॥ ३ ॥

(मोरोपंत व त्यांची कविता, लेखांक ५ केसरी, रा. द. पराडकर)

वरील रामप्रार्थनेप्रमाणें दुसरें एक ओवी-अनुष्टुप् वृत्तांत 'रामप्रार्थना' प्रकरण पंतांनी रचिलेलें असून तें अजून अप्रसिद्ध आहे.

(आ) महाभारतः—मोरोपंती भारताच्या प्रत्येक पर्वाच्या पहिल्या गीतींचें आद्याक्षर घेऊन तीं एकापुढें एक मांडिलीं असतां त्यापासून **'श्रीपांडवसहायो भगवानरविंदाक्षो जयति'** असें वाक्य निष्पन्न होतें. अशा रीतीनें भारताच्या अठराही पर्वांची मोरो-

पंतांनीं एक माळ बनवून पांडवांचा साहायकारी कमलनेत्र भगवान् श्रीकृष्ण यास ती अर्पण केली आहे.

(इ)**मंत्रभागवतः**—यांत पंतांनीं **'नमो भगवते वासुदेवाय'** हा एकादशाक्षरी मंत्र प्रत्येक गीतीच्या आरंभींच्या अक्षरांनीं साधिला आहे. अगदीं प्रारंभीं तर पहिल्या अकरा गीतींत वरील मंत्राचें एकेक अक्षर एकेका गीतींत सहा सहा वेळां येऊन एकंदर सहा वेळां मंत्र साधिला आहे. यांतील थोडासा मासला पहाः—

नलिनाक्ष प्रभु लक्ष्मी**न**यनमनोहरपदांबुजध्या**न** ।
नवघननील चतुर्भुज **न**मिला जो पुण्यकीर्तिचें स्था**न**. ॥ १ ॥
मोहतमोर्क जगद्गुरु **मो**क्षदपद त्या शिवींच नित्य र**मो** ।
मोदित मन हो चिंतित **मो**घ नसो सर्व पापताप श**मो**. ॥ २ ॥
भव्य हरिहरांचे जे **भ**वभयहर नारदादिगुणलो**भ** ।
भगवत्तुल्य जगद्धित **भ**क्त नमस्कारिले विमलशो**भ**. ॥ ३ ॥
... ...
देव मुकुंदचि तो जरि **दे**हीं प्राचेतसादि कवि नां**दे** ।
देश पवित्र करि सदुप**दे**शें सुयशें प्रमोद कानां **दे**. ॥ ९ ॥
वाल्मीकिव्याससमचि **वा**चा ज्यांची स्तवी सदा दे**वा** ।
वाक्तनुमनें नमन त्यां, **वा**त्सल्यें हेचि त्यां रुचे से**वा**. ॥ १० ॥
यश हरिचें ज्यांसि रुचे **य**दुपतिसचिं वाहिला जिहीं का**य**, ।
यद्यपि निकृष्ट, झाल्या **य**वनहि, त्यांचेहिं वंदितो पा**य**. ॥ ११ ॥

यांत हरि, हर, हरिहरभक्त, गणपति, तद्दास भृशुंडी, विधिसुत, तेतीस देव, वाग्देवी, गंगा, काशी, व्यासवाल्मीकि, तत्सम भगवंताचे स्तावक, व भगवंताचे अनन्य यवनादि निकृष्ट भक्त यांस पंतांनीं वंदन केलें आहे. दशमस्कंधाच्या आरंभीं मंगलाचरणाच्या द्वादश गीतींत गीतींच्या आद्याक्षरांनीं **'श्रीमानुरुगायो मुकुंदो जयति'** हा जयकार साधिला आहे. यांत 'श्रीकंठ, नारदमुनि, प्राचेतस, शुक, पराशर, व्यास' हे भागवतोत्तम, 'माता, पिता, स्वकुळगुरु, विद्यागुरु,' हे गुरु, नमन व स्तवन करण्यास योग्य असे स्थावर जंगम, रुक्मिण्यादिसती, गायत्री, योगींद्र दत्तात्रेय, सिद्धनायक कपिल, हनुमान्, श्रीरामायणभारतादि मुनिकृति, कुंती, माद्री, तत्सुत पांडव, भीष्म, विदुर, गंगा, यमुना इत्यादि पवित्र नद्या, तीर्थे, यज्ञ, क्षेत्रे, वनें, पर्वत, वृक्ष, व सरतेशेवटीं श्रीकृष्ण या सर्वांस वंदन केलें आहे. यांतील प्रथमच्या तीन व शेवटच्या दोन गीती अशा आहेतः—

'**श्री**कंठ, नारदमुनि, प्राचेतस, शुक, पराशर, व्यास, ।
नमिले भागवतोत्तम, जे शर शिवले परा शरव्यास. ॥ १ ॥

माता, पिता, स्वकुळगुरु, विद्यागुरु वंदिले, सदा शीतें ।
ज्याच्या निरीक्षणें भवताप निवे, देति जे सदाशीतें. ॥ २ ॥

नुतिनतिपात्र जगीं जें नमिलें जंगम, अजंगमहि म्या तें; ।
द्यावी आज्ञा तेणें मज गाया त्यांतरंगमहिम्यातें. ॥ ३ ॥
यज्ञातें, क्षेत्रातें, तीर्थातें, सद्वनां, नगां, नमनें. ।
सर्वक्षमा करा हो ! वरिलें तीर्थाघ्रिकीर्तिगान मनें. ॥ ११ ॥
तिलक श्रीमत्पुण्यश्लोकसभेचा, उपास्य थोरांचा, ।
नमिला ग्रंथारंभीं श्रीकृष्ण, घन स्वदासमोरांचा, ॥ १२ ॥

(ई)**मंत्रमय भागवतः**—यांत प्रत्येक गीतींत '**नमो भगवते वासुदेवाय**' हा एकादशाक्षरी मंत्र साधिला आहे. याच्या एकंदर १०८ गीती, उपसंहारात्मक धरून १०९, आहेत. याचीं कांहीं उदाहरणें कथानुरोधानें केकावलीच्या टीपांतून दिलीं आहेत. येथें त्याचीं तीन उदाहरणें रसिकांस मासल्याकरितां सादर केलीं आहेतः—

नत**मो**क्षद **भ**व**व**िधिनुत ज**ग**दीश **व**रेण्य वैन**ते**य-रथ ।
वाराया व**सु**धाभर **दे**ह धरी **वा**सवादिगे**य**कथ. ॥ १ ॥
नश्यां **मो**हुनि, **भ**वनीं **ग**वळयाच्या **ते**ज आपुलें राम ।
वाढवि, **सु**ख **दे** **वां**टुनि नंद**य**शोदादिकां घनश्याम. ॥ २ ॥
न ग**मो** चित्रें **भ**यद तम घन**ग**र्जित **व**र्षे **ते**थ शेष वरी ।
वारिधि तशीं **सु**खें **दे** **वा**टहि **य**मुना, न मार्गविघ्न करी. ॥ ३ ॥

(उ)**कृष्णविजयः**—बळराम ब्रह्महत्याक्षालनार्थ तीर्थयात्रा करित करित वेंकटाचळ दर्शनावर आला. तेव्हांचें वर्णनः—(**गूंढचतुर्थपाद**)

पावनांघ्रि भ**ला** गा**वें** । सुधा**क**द**टा**मळा ।
ज्यास तो **चपळा**लभ्य । **पावला वेंकटाचळा.** ॥ (कृष्ण. ७९, १७)

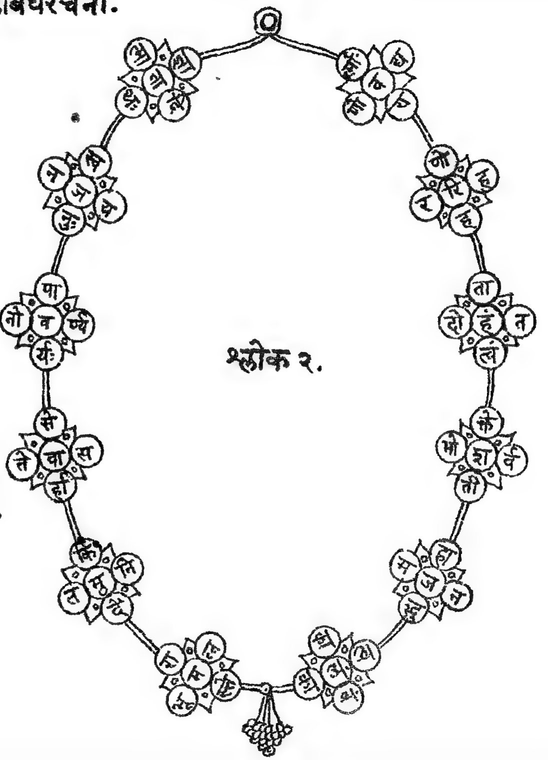
वरील श्लोकांत जीं जाड टाइपानें अक्षरें छापिलीं आहेत त्यांनींच चवथा चरण होतो. विदग्धमुखमण्डनकाव्यांत '**पादगूढ**' ह्मणून एक कूटप्रकार दिला आहे त्याचेंच हें एक उदाहरण आहे. (चतुर्थ परिच्छेद १८, १९). कृष्णविजय अ० ८६ (अर्जुनसुभद्राविवाह) याच्या स्वतंत्र प्रतीवर पंतांनीं 'रामकृष्णविलोम' काव्याच्या धर्तीवर पुढील गतप्रत्यागतार्थ श्लोक लिहिलेला आढळतोः—

'नाम गा अरसा मान तोखा लाभ न बाळका ।
काळ बा न भला खातो न मा सार ! अगा मना !' ॥ १ ॥

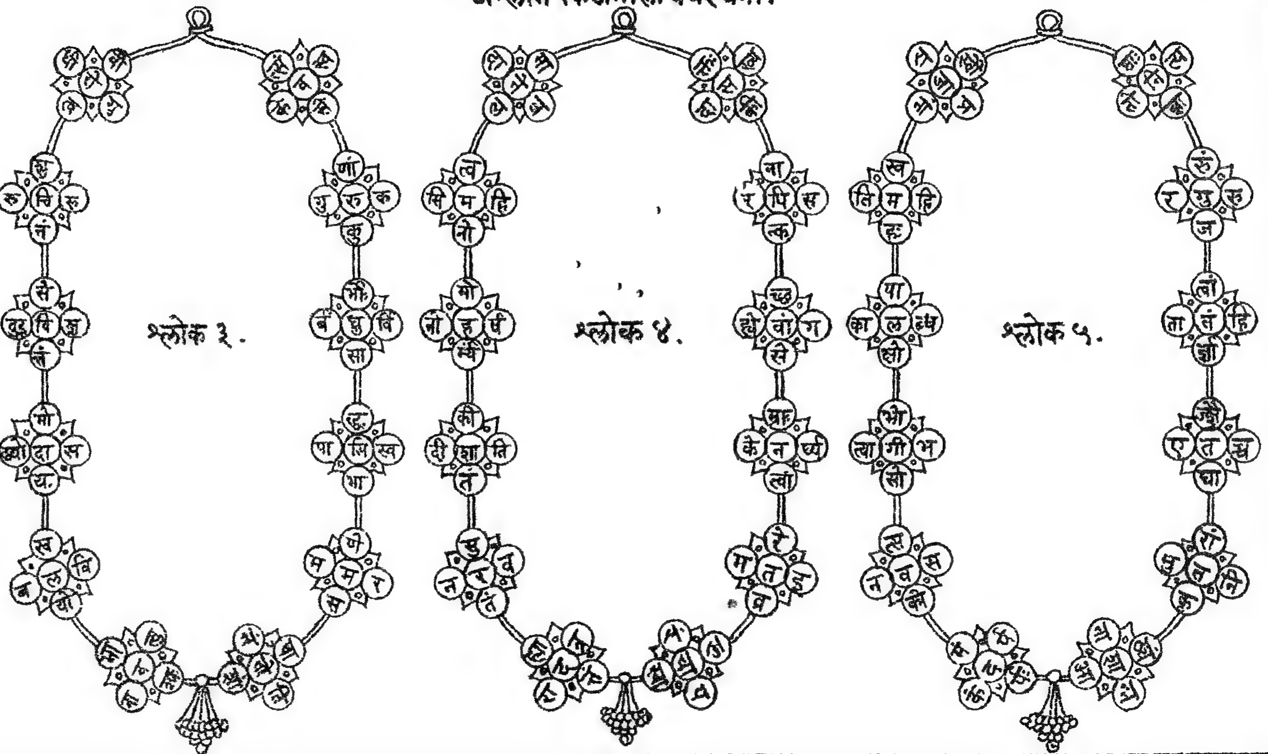
अन्वयार्थः–अगा ! बाळका मना ! (अरे अज्ञानी मना !) अरसा तोखा (रसहीन विषय-सुखाला) लाभ न मान (लाभ मानूं नकोस); बा ! (बापा ! मना) काळ भला न (मृत्यु बरा नव्हे) [तो] खातो (तो तुला खाऊन टाकील), मा सार न (लक्ष्मी ही शाश्वत नाहीं), नाम गा (भगवंताच्या नामाचें गायन कर). अर्थात् विषयसुखालाच खरें सुख मानून त्यांत तूं रमूं नकोस. काळ तुला केव्हां खाईल याचा नेम नाहीं. लक्ष्मी ही चंचल आहे ह्मणून तूं सर्व सोडून भगवन्नामाचें स्मरण करून कृतार्थ हो.

अम्लानपंकजमालाबंधरचना.





अम्लानपंकजमाला बंधरचना.



'रामकृष्णविलोम' काव्याचा अगदीं प्रथम श्लोक मासल्याकरितां येथें सार्थ देतों:—

'तं भूसुतामुक्तिमुदारहासं वंदे यतो भव्यभवं दयाश्रीः ।
श्रीयादवं भव्यभतोयदेवं संहारदामुक्तिमुतासु भूतम् ॥ १ ॥
(काव्यमालाएकादशगुच्छक पृ० १४८)

[रामपक्षे] 'यतः दयाश्री· [बभूव] (ज्यापासून भूतदया व शोभा झाली, अर्थात् जो त्यांचें कारण आहे) तं उदारहासं भूसुतामुक्तिम् वन्दे' (त्या गंभीरहास्ययुक्त असलेल्या, पृथ्वीकन्या सीता तिचें मोक्षण आहे ज्यापासून अर्थात् सीतेला सोडविणाऱ्या श्रीरामचंद्राला मी वंदन करितों.) [कृष्णपक्षे] 'भव्यभतोयदेवं (भव्यभ ह्म. उत्तम दीप्ति असणारा सूर्य, तसेंच तोय शब्दानें जलात्मक असल्यामुळें तोयद ह्म. चंद्र असा अर्थ, या दोहोंचा देव ह्म. प्रकाशक अशा) संहारदामुक्ति (अनर्थ देणारी-मुलांचा प्राण घेणारी पूतना संहारदा, तिला मोक्ष देणारा अशा) उत (आणि) असुभूतम् (सर्वत्र जगांत प्राणरूपानें असणारा, किंवा जगाचें जीवन चैतन्यस्वरूप अशा) श्रीयादवं (श्रीयदुकुलोत्पन्न कृष्णाला) [वन्दे] (मी वंदन करितों).' असे अनुलोमविलोमात्मक एकूण छत्तीस श्लोक या काव्याचे आहेत.

(ऊ) स्फुट काव्यें:— पंतांनीं क्वचित् आपल्या काव्यांत बंधही साधिले आहेत. त्यांचें ठळक उदाहरण त्यांचें 'अम्लानपंकजमालाबंधपंचक' काव्य होय. मोरोपंती स्फुटकाव्यें भाग १ ला, पृ० २२४-२२५ त तें काव्य व बंधरचना दिली आहे. ती केकावलिवाचकांच्या माहितीकरितां सोबतच्या जादा पानावर छापिली आहे. याचीं उदाहरणें:—

दाता धाताविता त्वं गृह इह गहने लोकशोकघ्नकर्मा ।
दीनानां नाथ! नान्यो हतनतपतनस्त्वां विना विश्ववित्तं ॥
मायेशाये न ये त्वामनु ननु मनुजास्तैः कृतं कृत्स्नकृत्यं ।
वाग्विद्यावित्तविघ्नैर्बत! हतमतयो राम! वा मद्यमत्ताः ॥ १ ॥
ज्ञानात्मानादिनाथः स्वजनजयजनुः पावनो वर्ण्यवर्यः ।
सेवा ते वासवार्हा किमुत मुनिमुदे राम! भूमन्नमस्ते ॥
काले काले बलं लङ्घजमज! न जहातीश! भो शर्वशक्ते! ।
त्वंहंदो हंत! हंता हरिररिहरिणो रावणोऽवद्यवर्त्मा ॥ २ ॥



परिशिष्ट-अं.



मोरोपंतांचीं ठरींव यमकें.

मोरोपंतांचा यमककोश तयार केल्यास आधुनिक कवीना त्याचा बराच उपयोग होईल असें वाटल्यावरून त्याच्या ठरीव यमकाची एक व उपयुक्त यमकांची एक अशा मासल्या करितां दोन लहानशा याद्या तयार करून येथें 'अ', 'अः' या परिशिष्टांतून जोडिल्या आहेत त्या वाचकांस उपयुक्त वाटल्यास तशा प्रकारचा विस्तृत व पद्धतशीर प्रयत्न करण्यास एखाद्या विद्याव्यासंगी पंतभक्तास उत्तेजन येईल. स्थलसंकोचास्तव ही ठरीव यमके जेथे आढळतात त्या सर्व स्थळांचा निर्देश करणें अशक्य असल्यामुळें एक दोन स्थळांचाच निर्देश केला आहे. या ठरीव यमकांच्या प्रकारास इंग्रजीत Bouts rimes असें ह्मणतात. ॲडिसन स्पेक्टेटर अंक ६० पहा. साह्यानें विशेष काव्यस्फूर्ति नसणाऱ्या, पण सयमक कविता करूं इच्छिणाऱ्या नूतन कवीस कविता करणें सुलभ जाईल.

अगा धसावस ते–अगाधसा धसते
(हरि. ९,६६;४८,१४७)

अगा धात्या–अगाधा त्या (वामन. १४९,
गदा. ७,१५ अनु. ३,४०)

अगा राया–अगारा या (शल्य. ३,४५;
आश्र. १,५८ हरि. २२,१०६)

अघ नाहीं–न घनांहीं
(कर्ण. ३५,१६ अनु. ८,४३)

अघा बरवी–न घाबरवी
(कर्ण. ४३,३१ अश्व. ३,२३)

अजातारी–अजा तारी–गजा तारी–न जा तारी
(गदा. ४,२२;५,१८ स्वर्गा. १,२०)

अठरा जे–हठ राजे
(स्त्री. ४,२ शांति. ६,१३)

अत्याग (मोठा अपराध)–अत्याग (स्वीकार)
(आश्रम. १,३६ हरिश्चंद्र. ४,२६)

अदभ्रा तें–पद भ्राते (गदा. ३,२२;
कर्ण. १८,६)

अंतकसा–अंत कसा (कर्ण. ३९,३९;४०,४)

अंतरायातें–संतरायातें (आश्रम. २,७;
हरिश्चंद्र. ५,२४)

अथवा हो–पथ वाहो (अनु. ७,७२ ७,१२)

अधमातें–वध मातें
(कर्ण. ६,३१; गदा. २,२)

अंधकार मला–अंधका रमला
(हरि. २७,२२;३२,३८)
अंधकारा ती–अधकाराती
(कर्ण. ३५,२६; हरि. २५,३१)
अंधातें–संधा ते (शल्य.१,२४,गदा.५,३०)
अनघातें–जनघातें- मन घातें
(कर्ण. २८,७, आश्र. २,१००;३१७)
अनळ साचा–अनळसाचा
(कर्ण. ४९,२१; हरि. ३६,८०)
अनीकांहीं–मनी कांहीं (आश्रम. १,६२;
कर्ण. ३०,३२)
अन्याया-अन्या या (अश्व २,४७;
द्रोण. १३,६०)
अनुग्रह रित्यातें–अनुग्र हरि त्यातें
(वामन. १६७, हरि. ३४,६१)
अनुग्रह रे–अनुग्र हरे
(अनु. ३,५१; अश्व. २,४९)
अपराधी–न परा धी (मदा. २,४७;
हरिश्चंद्र ५,२२)
अरण्यांत–शरण्यांत (हरिश्चंद्र १,३;३,१७)
अरिघातें–परि घातें (शल्य. २,५६; २,९८)
अर्णव तो–वर्णवतो (कर्ण.४३,२७ अनु.१,४)
असामान्य–असा मान्य
(कर्ण. ५०,७४; गदा. १,११०)
असा राया–असारा या
(अनु. ६,२८; शांति. २,६९)
असी मकरी–असीम करी
(एकनाथचरित्र ६, कर्ण. ६,५५)
असुख पावे–असु खपावे
(अनु. २, १०; आश्र. २,८६)
असुख रचिते–असु खरचिते
(कर्ण. ४५,४; वा. ७०)
असुर-हित–असु-रहित
(वा. च. १२३, आदि. ९,८)
असे नातें–असेना तें
(गोपीगोडवा ४५; भीष्म. १२,५५)

असो नमन–असोन मन
(हरि. ५०,४२,८८; अनु. ४,४)
अक्षम रणाला–अक्ष मरणाला
(गदा. २,९; शल्य ४,३२)
आइ कसी–आइकसी
(कर्ण. ४३, ८८; आश्र. ४,६)
आकर्षी–नाकर्षी (आश्रम. ६,२; हरि.१,४२)
आतेला–आ तेला (द्रोण. १,३९;
उद्योग. १०,२९)
आठविती–आठ विती
(आश्र. २,१०८; हरि. ३८,४२)
आठविली–पाठविली
(अश्व. १,१०५; स्त्री. ५,२०)
आठवुनी–पाठवुनी (मदा. २,५३;६,७२)
आपलें–तापलें (केका. ८८, पृथ्वीरामा. ३६)
आ म्यां तें–आम्यातें(सत्संग.१२;तुका.१८)
आयकवी–काय कवी–हाय कवि-राय कवि
(हरि. ४३,२१;३,६५आश्र.५,४०;३,३६)
आयकिळी–काय किळी
(हरि. ३५, ७५; गदा. ८,२७)
आयकों दावा–काय कोंदावा
(वामन च. ११६; वन. ४, ५६)
आयकों देहा–काय कोंदे हा
(गोपीगोडवा ३, शांति. ७, ३६)
आयुध-न्यास–आयु धन्यास
(गदा. ६,१६; हरि. ४८,१९५)
आलिकडे–आलि कडे (सन्मणि. १०५,
आश्रम. २,१२)
आलि सये–आलिस ये
(शांति. ५, ११; हरि. ३५, ७७)
आवाके–आ वांके (द्रोण.१,४,हरि.३४,२४)
उजराया–तुज राया (अनु. ७,१०६;
अश्व. १,७०)
उणीव रितें–गुणी वरते
(गोपीगोडवा २६; विराट. ५,३७)

उत्तमश्लोक–उत्तम श्लोक
(हरि. ३,५४; कृष्ण. ८३,४७)
उत्साहें–कुत्सा हें(द्रोण.१,१३;कर्ण.२८,२८)
उपदेश–सुपदेश (गदा. ३,३१;६,३४)
उपायनसे–उपाय नसे
(शांति. ४,२३; हरि. ३०,९६)
उरतें–उर तें (कर्ण. ४५,१२)
ओपावें–ओ पावें (आश्रम. १,८२;४,११)
कटक–चटक (कर्ण. १९,३; द्रोण. १,१२)
कर्कश तें–तर्कशतें (विराट. २,५;३,६५)
कदंबातें–मदंबा तें (अनु. २,१९; ८,१००)
कन्या–धन्या (मात्रा रा. ४; अहल्या. १)
कनकाची–जनकाची (अश्व. १,५४; १,५७)
करकांहीं–कर कांहीं (अनु. १,१९; ४,७)
कराल करवाल–कराल करवाल
(हरि. ४८,१३९; द्रोण. १,३८)
करी नमन–करीन मन
(हरि. ४३,९५; कर्ण. ४३,२९)
करी लगट–करील गट
(हरि. ४७,७२; शल्य. ३,७७)
कलहातें–बल हातें (कर्ण. १३,५;२३,१५)
कवळून–जवळून (हरि. २,५३; आश्र. १,८३)
कविराजे–न विराजे
(गदा. ६,१३; हरि. ११,१२)
कां गमला–सांग मला
(कर्ण. २८,६३; माधव. ११)
काज वेचितसे–काजवेचि तसे
(हरि. ४७,४८; ४८,२४७)
कांटा हो !–कां टाहो
(आश्रम. ४,५१; गदा. १,११६)
काननीं चोर–कां न नीचोर
(विराट. १,११४; ६, ८)
कानांहीं–कां नाहीं
(शांति. ७,१२०; हरि. २२,९९)
कांपविला–कां पविला
(अनु. ८,९१; कर्ण. ३८,३८)
कां मरणा–काम-रणा
(शल्य. २,६७; कर्ण. २७,५)
काय गाजीव–कायगा जीव
(हरि. ४३, २२; ५१, ३४)
काय होतात–कायहो तात
(हरि. ४७,६२; ७, ७७)
काळजी वाहे–काल जीवा हे
(हरि. ४१,११४; कर्ण. ६,६४)
कुंद रितें–सुंदरि तें
(हरि. २९,४५; आदि. ११,९)
कुनर पितयातें–पुनरपि तयातें
(अश्व. १,८१; हरि. ४८,२३७)
कुमार मणी–उमा रमणी
(हरि. ३५,६७; सौप्ति. २,२३)
केशव दे-लेश वदे(गदा.५,२३;कर्ण.४१,२)
कोपानें–रोपानें (गदा. २,३; शल्य. २, ३७)
क्रियापर महर्षि–प्रिया परमहर्षी
(अनु. ४,५; शांति. ४,१५)
घातले कानीं–घात लेकांनीं
(आश्रम. १.४१; गदा. १,९४)
घेराया–घे राया (विराट. ४,६८;द्रोण.१,१४)
जतन–पतन (गदा. ६,५४; हरिश्चंद्र. ३,२६)
चवघांस–चव घास
(आश्र. १, ६५; अश्व. ७, १८)
चालवितो–पालवितो
(गदा. १,१२४; आश्रम. २,८४)
जनकास–जन कास
(हरि. ४१,८; आश्र. २,७०)
जन यश तें–तनयशतें
(आश्रम. २,१२०;६,१४)
जन्महित–सन्महित
(गदा. १,२; आश्रम. २,७०)
जलजनाभा जी–खळजना भाजी
(हरि ५०, ६४; ९, १०८)

जवन वाजी–जव नवा जी
(मौस. १, ६८; गदा. १०,२)
जागा–जा गा (आश्रम. ५,५३;
कर्ण. अ. ३१,४१)
जीवाचा–जी वाचा
(सन्मणि. ४५; आश्रम. ५,४६)
जें विरवी–जेंवि रवी
(विराट. ६,२६; शांति. ७,९६)
जें विशंक राबेल–जेंवि शंकरा बेल
(अनु. ४,१; शांति. ७,६६)
जें विहित–जेंवि हित
(कर्ण. ४१,३५; शांति. ७,६३)
जोडून-सोडून (हरिश्चंद्र. ४,२५; शल्य.१,२)
तडा खातो–तडाखा तो
(गदा. ३,२५; हरि. ३१,५३)
तप कराया–सपक राया
(मदा. २,५८; ६,४६)
तपोनिधी राजा–तपोनि धीरा जा
(आश्र. ३,५८; हरि. ४,१७)
तया लुबरी–दयालु बरी
(हरि. ४१,९४; ४८;२९९)
ताप सजे–तापस जे (आश्रम. ४,१४;५,३)
तापसत्वानें–ताप सत्वानें
(अनु. ६,४३; आश्र. १,५२)
तेजातें–तें जातें (वा. च. १; ऐषि ३,८)
तेलिंगा–ते लिंगा (राधा. १५; सन्मनोरथ. ४)
तोक रितें–तो करितें
(हरि. ४१,१५८; अश्व. ४,७७)
तोक वच–तो कवच (विराट. २,४०;३,३०)
तोख चला–तो खचला
(हरि. ४१,३०; अश्व. ५,७२)
तोख पवि–तो खपवि
(द्रोण. १८,४५; हरि. ३८,६७)
तोख रचि–तो खरचि
(हरि ८,१०७; शांति. ५,१७)

तोख राजीव–तो खरा जीव
(द्रोण. १५,१०५; शांति. ५,१६)
तो धमनीं–बोध मनीं
(हरि. १४,२५ मंत्र. भाग. ४७४)
तो भावें–लोभावें (सन्मणि. ८; महिपति.३)
तोयाची–तो याची
(ऐषि. १,४०; अश्व. २,६१)
तोयांत–तो यांत
(वा. च. ६९; महाप्रस्था. १,१५)
तोलावी–तो लावी
(अश्व. ५,४५; हरि. ३८,२७)
दयालु गळ्या–दया लुगड्या
(वन. २,१७; विराट. १,९७)
दयालो हें–दया लोहें
(उद्योग. ९,३४; कर्ण. ४३,२८)
दिलीप गडी–दिली पगडी
(राधा. २४; द्रोण. ५,२२)
दे खाया–देखाया
(गदा. २,३३; आश्रम. ६,११)
दे खिलारा या–देखिला राया
(हरि. ४७,३४; ४३,१०२)
देवकी नाश–देव कीनाश
(उद्योग. १०,२८; द्रोण ९,३४)
देववी राजा–देव वीरा जा
(शल्य. ४,५७; अश्व. २,१५)
दे वसुधा–देव सुधा
(वा. च. ५९; कर्ण. १२,२४)
दे वाजी–देवाजी
(शांति. ३,८३; अश्व. ५,३६)
दे हातें–देहातें(अश्व.१,९०; हनुमद्रामा.२२)
धडकले वरते–धड कलेवर ते
(हरि. ४८,२५७; ऐषिक. २,१८)
नका राहूं–'न' कारा हूं
(हरि. ४४,४५; ५२,१०९)
नको चिरडों–नकोचि रडों
(आदि. ९,३२; हरि. ४१,१६२)

नको पावें–न कोपावें
(गदा. ८, २१; हरि. ४३, ६८)
नको विद्रे–न कोविद रे
(द्रोण. १२, १७६; अनु. ६. १०)
नंदनवनीं तें–नंद नवनीतें
(अनु. ४, ७३; हरि. १३, ५९)
नदी नातें–न दीनातें
(गोपीगोडवा ४७; आदि. १०,६९)
न दीनावरी–नदी नावरी
(केका. ९६, रम्य रामा. उपसंहार ५)
नभा वातें–न भावातें
(स्त्री. ४, ३३; स्वर्गा. १, २९)
नभा सविता–न भासविता
(शांति. ६,२२; स्त्री. ६,५५)
नयज्ञा तें–न यज्ञातें
(अश्व. १,४३; अनु. ८,६४)
नर कास–नरकास
(कर्ण. ४१,७६; सौप्ति. १,१४)
नरवरा हे–न रव राहे
(आश्र. १, ६८; अश्व. ६,१३)
नरा जन्य–न राजन्य
(अनु. ८,७९; ऐषि. १,१७)
नव दावी–न वदावी
(हरि. ५२,२६०; विराट. १,४७)
नवनीतें–न वनीं तें
(राधा. ३८; आश्रम. ३,३३)
नसे उच्चिता– न सेउ च्चिता
(शांति. ४,३३; ७,६४)
नसे कांहीं–न सेकांहीं
(अश्व. ३,४१; आश्र. ३,४१)
नसो सवतें–न सोसवतें
(हरि. ८,१०२; कर्ण ४३,६)
नायका पूस–काय कापूस
(शांति. ६,४०;७,९३)

निदुनि घे–इंदु निघे
(ध्रुवचरित्र ३८; हरि. ९,९५)
निवे दीन–निवेदीन
(सौप्ति. १,३८; हरि. ११,२)
निवे दूत–निवेदूत
(अश्व. १,७२; स्वर्गा. १,३१)
निवे दून–निवेदून
(हरि. ४८, ३; अश्व. ६,३१)
पण तूतें–पणतू तें
(हरि. १८,३३; अनु. ८,८७)
पदक मळ–पदकमळ
(वा. च. ११९; भीष्मभ. १)
पद नमुनी-वदन मुनी-सदन मुनी
(हरि. ४३, १२५; अश्व. २,२५ अश्व. १,३९; शांति २,३२)
पर महर्षि–परम हर्षि
(हरि. २७,३४; वा. च. ३०)
परिवेष–परि वेष (द्रोण. १०,३७; अनु. ५,३६)
परिस राया–परि सराया
(हरि. ४७,१; मौसल. १,१३२)
परिस राया तें–परि सरायातें
(शल्य. २,१; द्रोण. १,४३)
परिसून परि सून
(शल्य. ४,२२; अश्व. १,१८)
परिसेना–परि सेना
(कर्ण. ४९,७३; विरा. २,२८)
पाठउनीं–पाठ उनी
(विराट. १,१३६; स्त्री. ४,२८)
पाव कसा–पावकसा
(कर्ण. १८,१९; हरिश्चंद्र. १,३६)
पुनरपि तयातें–सुनर पितयातें-कुनर पितयातें
(द्रोण. १२,१६२; अनु. ७,९४ शल्य. १,१३)
पेटविला–मेटविला (आश्रम. ६,३८; ७,३९)

पौर वदे–रौरव दे (मदा. २,८१; हरि. ३,२)
प्रतिज्ञा ती–प्रति ज्ञाती
(गदा. ४,१२; आश्रम १,२३)
प्रसूनांहीं–प्रसू नाहीं
(अनु. ७,२८; गदा. ९,२३)
बा धाल्या–बाधा ल्या
(हरि. ४७,१४; शांति. ६,४९)
बा ! पाहे–बापा हें
(मदा. ४,२६; कर्ण. २१,४१)
बाहूनी (बोलावून)–बाहूंनीं (हातांनीं)
(आदि. १६,१२; कर्ण. २१,१४)
बा हेर–बाहेर
(अश्व. ६,३; स्त्री २,१; हरि. ३३,५४)
बोल कानांहीं–बोलका नाहीं
(आदि. १,३; हरि. २७,९)
भद्र क्षण–तद्रक्षण
(केका. ९४, पृथ्वी रामायण २६)
भर वसायाचा–भरवसा याचा
(अश्व. ३,५६; रामरीति ६७)
भर विलापाला–भरविला पाला
(स्त्री ४,१३; शल्य. १,४१)
भाउनि घे–भाउ निघे
(विराट. ४,९०; मौसल. २,५५)
भानु निघे–भानुनि घे
(आश्रम. ६,४; हरिश्चंद्र. १,२१)
भीम रणा–भी मरणा
(कर्ण. ३६,१९; ४३,६९)
भीमातें–भी मातें
(कर्ण. ३९,४९; गदा. २,१४)
भुज गमला–भुजग मला
(हरि. १३,७७; आश्रम. १,८७)
मग राया–मगरा या
(हरि. ४८,२८४ कर्ण. ३२,२३)
मज्जन कराया–मज्जनक राया
(अनु. ६,३; स्वर्गा. १,४)
मज्जन हो !–मज्ज न हो
(साधुसत्कार. २५; आश्रम ६,२७)
मत्तप हा–मत्त पहा
(हरि. २७,६२; स्त्री. ६,६)
मत्तपाहून–मत्त पाहून
(वन. ११,१२४; अनु. ३,८)
महाभुज गदेतें–महाभुजग दे तें
(कर्ण. २७,६०; शल्य. ३,२७)
महिला (=स्त्री)–महिला (=पृथ्वीला)
(गदा. ५,२४; कर्ण. ५,७; मदा. ५,४४)
मान लेकांहीं–मानले कांहीं
(गदा. ८,२०; आश्रम १,४०)
मान वेदास–मानवे दास
(शांति. ७,१०९; सौप्तिक २,४४)
मी नाहीं–मीनांहीं
(हरि. २६,५१; शांति. ५,६५)
मुनिवरा गेला–पुनिव रागेला
(हरि. ९,९०; अश्व. २,४६)
मुलास कुळकळतें–तुला सकळ कळतें
(अश्व. ४,३८;६,१५; गदा ५,१४;८,२२;
ऐषि. १,२०; स्त्री. ३,९)
मोहातें–तो हातें
(हरिश्चंद्र. २,२०; २,३०)
याद तळमळतें–पादतळ मळतें
(वा. च. ११८; गदा. ९,२)
येऊन–ये ऊन (अनु. ७,२१; आश्रम ७,१)
यो जीन–योजी न
(विराट. ५,७६; शांति. ७,१०८)
रसनेला–रस नेला
(स्त्री. २,९; मंत्रभाग. १०,४२८)
राहु निघे–राहुनि घे
(हरि. ४८,२५; द्रोण. १,८९)
रुचिर–मुचिर (कर्ण. ९,१३; १७,२४)
वंदील–मंदील (शल्य. १,५६; सन्मणि. ३२)

विप्र भजनांत–विप्रभ जनांत
(अवतार. २०१; अनु. ७,८)
विप्र भव्यास–(र)विप्रभ व्यास
(अनु. ६,५६; शांति. १,२)
विरोध रणीं–विरो धरणी
(विराट. २,२७, अश्व. ४,१०१)
विश्वास (जगारा)–विश्वास (भाव)
(अनु. १,५२; ६,४४)
शत गावें–न तगावें
(हरि. ४७,२६; अश्व. ३,८१)
शांत नवा–शांतनवा
(शांति. ७,३९;७,१४; सौप्ति. २,४५)
शिर कविता–शिरकविता
(कर्ण. ४७,४६; हरि. १,१)
शिरे नमनें–शिरेन मनें
(वा. च. १३४; अनु. ५,५०)
शोकदा वार्ता–शोक दावार्ता
(अश्व. ५,३१; स्त्री. २,११)
सखे दास–सखेदास(शांति.६,५;अश्व. ५,९०)
संग रहा–संगर हा
(हरि. २८,१०६; अश्व. ६,२२)
सत्तमा न वांचावे–मत्त मानवा चावे
(अश्व. ३,६५; हरि. ४१,१०१)
संतांनीं (साधूंनीं)–संतांनीं (कल्पवृक्षांनीं)
(साधुसत्कार ४,१६; कर्ण. ३१,३४)
सत्वरतें–सत्वर तें
(वा. च. १४२; शांति. ७,७१)
सदा रमला–सदार मला
(हरि. २९,७२; अनु. ५,२४)
सदाशिव तो–सदा शिवतो
(कर्ण. ४३, ५४, अनु. २, १५)
सन्मुनितें–जन्मुनि तें
(आश्रम. ६,२९; स्वर्गा. २,४५)
सभाजन कराया–सभा जनकराया
(शांति. ५,४०; अनु. ८, ७३)

समस्त बक–सम स्तबक
(वन. १२, २८; आश्रम १, १३८)
समस्त वन–सम स्तवन
(विराट. ३, ५२; स्वर्गा. १, ५९)
समयज्ञ–सम यज्ञ (अश्व. ६, ४३; ७,३)
समक्ष महा–सम क्षम हा
(गदा. १, ११०; मदा. २,७४)
सवघड तो–सव घडतो
(अश्व. १, ७; हरि. ५२, १००)
सहदेव–सह देव (कर्ण. ८,९; २८,२१)
संहरितें–अंह रितें
(शल्य. १,१ वा. च. १४०; मौसल. १,१७)
सांग मला–कां गमला
(मदा. २,३४; हरि. ४४,१८; शांति. ६,२८)
साधुनि घे–साधु निघे
(शांति. ४,१८; ६,१९ मदा. २,६४)
साधुरीतीची–माधुरी तीची
(साधुसत्कार ९ वा. च. १४५; आ. १,१८)
सुखविलासाचा सुखविला साचा
(हरि. ४२, ९; आश्रम २, २२)
सुतपातें सुत–पातें
(आश्रम. २.२; हरिश्चंद्र १०१)
सुतपाहे–सुत पाहे (हरि. ५२,८; शांति. १,२०)
सुतपा हो–सुत पाहो
(विष्णुपद. १८, आश्रम. २,३)
सुनासीर–सुना सीर
(कर्ण. ४५,५३; गदा. २, १३)
सुयोधन हो–सुयोध न हो
(विराट. ३, १; ६, १७)
सुरमणीया–सुरमणी या
(वा. च. १५७; हरि. ४९, २३)
सुर–सहित–सुरस हित
(हरि. ४३, ११८; अनु. ५,३८)
सुरा माती–सुरामा ती
(हरि. ४१,३५; ४९.३३; विराट १,५९)

हरपावे–हर पावे (हरि. ४१,३;४२,१०४)
हाकविला–हा कविला
(हरि. १६,२१; शल्य. ४,२३)
हा कांहीं–हाकांहीं
(हरिवंश. २२,१११, तुका. २६)
हा केला–हाकेला (शांति. ७,१६; गदा.५,५)
हा तनय–हात नय(आ. २,५४,द्रोण.३,७२)
हा तरणी–हात रणीं
(अश्व. ५,११; स्त्री. ६,५१)
हा तेरा–हातेरा (गदा. १,८८; आ. २,११)
हा निकट कांहीं–हानि कटकांहीं
(कर्ण. १९,२२; शल्य. १,७५)
हा निकर–हानिकर
(वा. च. १४८; हरि. ३३,५२)
हानि खळ–हा निखळ
(कर्ण. ४०,६०; शल्य. २,५३)
हा निघे राया–हानि घे राया
(हरि. ४०,५४;४८,८)
हा निजायाचा–हानि जायाचा
(स्त्री. १,५; अश्व. ५,८४)
हा नियम–हानि यम
(हरि. ४८,४३; कर्ण. ४६,४१)
हा निरोपातें–हानि रोपातें
(हरि. ४८,३७१; आश्रम. २,६)
हा नीच–हानीच (हरि.४९,२६;स्त्री.३,५०)
हा यजन–हाय जन
(कर्ण. ५०,५८; अश्व. १,४२)
हारविला–हा रविला
(कर्ण. ७,३२; स्त्री. ८,१५)
हा हा तें–हा हातें
(वा. च. १२८; हरि. ८८,१५५)
हे तिघे राया–हेति घेराया
(हरि. ४२,५२; गदा. १,५)
हेमाजें–हेमा जें(शांति.५,६४;गदा.१०,२१)
हे मातें–हेमातें
(गोपीगोडवा ५०; स्वर्गा. १,५२)
होकरितां–हो करितां
(कर्ण. ४९,६८; उद्योग. ७,६४)
होतात–हो तात्र (हरि. ४७,६२; आ. २,९३)
हो तों–होतो (आ. ५,५४; मदा. २,३६)
ह्मणोनीच–ह्मणो नीच
(कर्ण. २७,१९; मात्रा. २१)
गोडवे दाल्या–गोड वेदाल्या
(गोपीगोडवा. ६७, मंत्रभाग. १०,८६५)



परिशिष्ट–अः.



उपयुक्त यमकें.

या यमकांतील पुष्कळशीं शोधांतीं ढरीव यमकांत येतात असें आढळून येईल. नवीन सयमक कविता करूं इच्छिणाऱ्यास तीं उपयुक्त होतील असा भरंवसा आहे. यमकांविषयीं पुढील इंग्रेजी उतारा पाहा–

"It is a mistake to suppose that rime is a mere ornament to versification. Besides being in itself a pleasing musical accord, it serves to mark the endings of the lines and other sections of the metre, and thus renders the rhythm more distinct and appreciable than the accents alone can do. 'The advantages of rime', says Guest, 'have been felt so strongly that no people have ever adopted accentual rhythm without also adopting rime.' (Rhyme, Chamber's Encyclopædia)"

अगदा पी–मग दापी (कर्ण. ६,४०)
अगा रामा–अगारा मा (गदा. ५,८)
अघ डोहें–न घडो हें (गदा. १,२२)
अंगुलिही–पंगु लिही (गदा. ३,१३)
अघ व्यालः–मघव्याला (शल्य. २,११२)
अघ सराया–न घसराया (गदा. ६,७५)
अघा मेला–न घामेला (आश्रम. १,२२)
अघा मेलों–न घामेलों (हरिश्चंद्र. २,६५)
अच्छाया–अच्छा या (आश्रम. १,४९)
अजा मिळतो–अजामिळ तो (सत्संग. १८)
अज्ञाविक तराया–अजा विकत राया (आश्रम. २,१२२)
अजि राया–अजिरा या (कर्ण. १,५)
अंजना भागा–कंजनाभा गा (सत्संगस्तव ९)
अंजलि हो!–करकंज लिहो (आश्रम. २,५३)
अटत साधुवट–पट तसा ध्रुवट (साधुसत्कार १३)

अटनातें–नटनातें (नारदाभ्युदय. ३८)
अटवीतें–सटवी तें (मदालसा. २,४)
अठरा या–हठ राया (कर्ण. २६,१३)
अणिकांहीं–मणि कांहीं (मदा. ४,३)
अंडपाल तापावें-मंडपा लता पावे (आश्रम. ३,६२)
अतितर विपत्ती–पतित रवि पत्ती (हरिश्चंद्र. ३,२२)
अथवा जे–पथ वाजे (साधुसत्कार २८)
अथवा तें–रथ वातें (कर्ण. १२,४)
अथवा हे–पथ वाहे (स्वर्गा. १,२७)
अथवा हो–रथ वाहो (कर्ण. २६,९)
अधर्मातें–न धर्मा तें (गदा. ५,१९)
अधीन मन–कधीं नमन (मदा. ५,३९)
अनपार्था–मन पार्था (गदा. ३,३८)
अनय न हो–अनयन हो! (सन्मणि. ६७)
अनयातें-तनया तें (मदालसा. १,७)
अनराती–न नरा ती (आश्रम. ४,२९)
अनराते!–न नरातें (स्वर्गा. १,४६)
अनल साहे-अनलसा हे (आश्रम. ३,६१)
अंतकसा–संत कसा (सन्मणिमाला ७)
अंतकाम हे भाचे–दंत कां महेभाचे (शल्य. २,६६)
अंत कोप महा–अंतकोपम हा (कर्ण. १४,३३)
अंतरा जांच्या–संतराजांच्या (साधुसत्कार २)
अंत राया! तें–अंतरायातें (आश्रम. ६,५५)
अंध नगा-बंधन गा! (नारदा. १६)
अंधरक्षण हो–कंधर क्षण हो (आश्रम. १,१३)
अंध राजास–पंधरा जास (आश्रम. १,१)
अनंतरायातें–अनंत राया! तें(आश्रम.४,३६)
अन्न मनें–मन्नमनें (सन्मणि. १९)
अन्य संततितें–धन्य संत तितें (साधुसत्कार ३)

अनातपा याची–वनांत पायाची (आश्रम. ३,२०)
अनादरणीं–न नाद रणीं (कर्ण. ११,२६)
अनादि सती–जना दिसती (गदा. ६,३१)
अनुकंपा–तनु कंपा (कर्ण. १६,९)
अनुग्र हव्यासा–अनुग्रह व्यासा (नारदा. २२)
अनुग्रह लहांनीं–अनुग्र हल हानी? (नारदा. २१)
अनुग्र हा लोक–अनुग्रहा लोक (स्वर्गा. १,७)
अनुसरले–तनु सरले (आश्रम. १,१४)
अब्द तेरा जा (ज्या)–शब्द ते राजा (आश्रम. २,६९)
अब्द बारा जा–शब्द बा! राजा (हरिश्चंद्र. ३,२३)
अभागा ती–सभा गाती (हरिश्चंद्र. ३,४६)
अंब रडे–हंबरडे (हरिश्चंद्र. २,४९)
अंबुक्षारा हें–तूं बुधा! राहें (कर्ण. ६,३८)
अय हा-कीं–हय हाकीं (कर्ण. २५,१)
अरण्यवास वसे–शरण्य वासवसे (आश्रम. ४,८)
अरण्यातें–शरण्यातें (नारदा. १९)
अर्क राजाला–शर्करा जाला (आश्रम. ६,३९)
अर्क राजीवा–शर्करा जीवा (मदा. ५,३
अर्णव दे–कर्ण वदे (कर्ण. २५, १६)
अर्णवा नावा–कर्ण वानावा (आश्रम. ५,४४)
अर्णवसे–कर्ण वसे (गदा. ६,५३)
अरिचा पहा कसा दास–जरि चाप हाक सादास (शल्य. १,७७)
अरि तनाना–करित नाना (हरिश्चंद्र. ४,२९)
अरि लया नसे नेला–धरिल या न सेनेला (शल्य. १,६१)
अरि वरितो–हरिवरि तो (मदा. २,९१)
अरिस बाहे–परिस बा! हे (गदा. १,१२५)
अरिस भारी–परिस भारी (शल्य. १,७३)

अरि सारे–परिसा रे (गदा. ४, ९)
अरीभ रव साहो–धरी भरवसा हो (कर्ण. २४,९)
अरुण–करुण (आश्रम. २,६८)
अलानातें–मला तातें (मदा. ४,१९)
अलीक रणीं–भली करणी (गदा. ६,१५)
अलीकवचा–भली कवचा (गदा. ३,११)
अल्प नगरा जा–कल्पनग राजा (आश्रम. ६, ४५)
अल्प विपयातें–तल्प विप यातें (शल्य. १,४७)
अवनि वेदी–धव निवेदी (शल्य. २, ८३)
अवनीतें–न वनीं तें (गदा. १,४४)
अवलोक–तव लोक (स्वर्गा. १,४७)
अविनयज्ञ–कवि न यज्ञ (मदा. २,७०)
अविरुद्ध–अवि-रुद्ध (शल्य. १,३३)
अविप्र भजो–अविप्रभ जो (गदा. १,४०)
अविप्राज्य–कवि प्राज्य (आश्रम. १,५४)
अव्हेर जनीं–नव्हे रजनी (कर्ण. ६, ६७)
अव्हेराया–नव्हे राया ! (आश्रम. १,६४)
अशनि जगदीशें–यश निज गदीशें (गदा. १, १२२)
अशिव रागेल्या–वशिवग गेल्या (हरिश्चंद्र. १,१०)
अष्टम हा–कष्ट महा (आश्रम. १,८५)
अष्टयामहि म्यां–कष्ट या महिम्या (आश्रम. ५,१८)
असकारे–सुसकारे (कर्ण. २९, २०)
असती (आहेत)–असती (असाध्वी) (कर्ण. १,२५)
असती तें–असतीतें (स्वर्गा. १, ९)
असल्य जुनी–रस ल्यजुनी (कर्ण. १, १७)
असहाय–रस हाय (गदा. ६, १२)
असा रपाटा कीं–असारपा ! टाकीं (गदा. ३, २२)

असा रसिक–असार सिक (साधुसत्कार १९)
असा राया–असारा या (गदा. ६,६४)
असीम रण–असी मरण (कर्ण. ३,१६)
असी महिम्या–असीमहि म्यां (गदा. १,३९)
असी मातें–असीमा तें (सन्म. १८)
असुख वाटे–वसु खवाटे (आश्रम. २,९९)
असे चिटि कवीला–नसेचि टिकवीला (मदा. ५,४८)
असेचि रंजीव–जसें चिरंजीव (मदा. ३,४८)
असें न मनीं–कसें नमनीं (कर्ण. २१,३३)
असेनाच–असे नाच (स्वर्गा. २,१७)
असों दे हें–असों देहें (सन्म. २०)
असोनि हीनाहीं–असोनिही नाहीं (आश्रम. ७, ३२)
अहा ! काय–न हा काय (हरिश्चंद्र. ५,१८)
अहा ! त्यांनीं–पहा त्यांचीं (गदा. ३,४२)
अहाहा ! रे–पहा हारे (कर्ण. ३०, १९)
अहिममा यावी–महीस मायावी (मदा. २,४९)
अहेगांतें–अहे ! यातें (आश्रम. ३, २१)
अहो तात ! (प्रसन्न) होतात (मदा. १,१२)
अहो ! मुनि हो !–न होमुनि हो (हरिश्चंद्र. ५, १३)
अक्षिला काळें–भक्षिला काळें (हरिश्चंद्र. ३,७०)
आरुक्ष मे ! रुस–आरु कक्ष मेरुस (हरिश्चंद्र. ५,३)
आइला दुहिता–गाइला दुहिता (आश्रम. २,८३)
आक्रांत–हा कांत (हरिश्चंद्र. ३,३९)
आगमन–आग मन (हरिश्चंद्र. ४,२७)
आंग लीन परिरंभा–चांगली न परि रंभा (आश्रम. १,८८)
आज यामागें–राजया ! मागें (आश्रम. ५,१९)
आजि शिबि कांहीं–वाजि शिबिकांहीं (आश्रम. २,१२१)

आजिस ती–आजि सती (आश्रम. ३,३४)
आजि हारा जा–आजि हा राजा (ग.१,११७)
आजि हो राजा–आजिहोरा जा (गदा.१,२७)
आज्य-प्राज्य (कर्ण. १७,१९)
आठ यामहि म्यां–पाठ या महिम्या (द्रोण. १,३३)
आठव दे–आठ वदे (महिपति स्तुति ८)
आठव दे–पाठ वदे (कर्ण. ३१,३०)
आठवितो–पाठवितो (गदा. २,१०)
आठविला–पाठविला (गदा. ८१)
आठवी राजा–आठ वीरा जा (=ज्या) (गदा. ३,४०)
आठवे दान–पाठ वेदा न (गदा. ६,३५)
आठिव रहात–पाठिवर हात (आश्रम. २,२४)
आठिव रिपो! तें–पाठिवरि पोतें (गदा.३,४)
आढळतो–आ ढळतो (आश्रम. ४,३८)
आढळलें–हा ढळलें (हरिश्चंद्र. ३,१८)
आण वाईट–आणवा ईट (आश्रम. १,१७)
आणवा हूं द्या–आण वाहूं द्या (मुक्तां. १०९)
आणवितों–जाणवितों (आश्रम. २,३४)
आणविला–जाणविला (आश्रम. ६,३७)
आण वीरा जा (ज्या)–आणवी राजा (आश्रम. १,३४)
आण सीमा म्यां–जाणसी माम्यां (कर्ण. २१,३६)
आणितसे–पाणि तसे (आश्रम. १,८४)
आणिला जावें–वाणि लाजावें(कर्ण.११,१५)
आतप दसोडी–तातपद सोडी (आ. ६,४९)
आतप हा–वात पहा (आश्रम. २,११४)
आतळतो–पातळ तो (सत्संगस्तव १०)
आदरा जीवें–पादराजीवें (मदा. ४,७)
आधि जया–गाधिज या (मुक्तां. ३६)
आधीतें–आधी तें (मुक्तां. ९८)
आधुनिका–साधु निका (तुका. २२)

आन नारद न–आनना रदन (तुकारामस्तुति १७)
आन नीच मूढ कली–आननीं चमू ढकली (शल्य. ३,१०)
आनयनें–आ नयनें (मदा. ३,३४)
आपगा वाहे–बाप गावा हे (गदा. ६,४९)
आ पसरी–आप सरी (मुक्तां. ५४)
आपलीला हे–तापली लाहे (आश्रम. ५,३३)
आयकवी–काय कवी (कर्ण. ६,६२)
काय कवि सभाजी जी–हाय कविस भाजी जी (मुक्तां. ९१)
आयका माजें–काय कामा जें (हरिश्चंद्र.२,४२)
आयकोनि करा–बायको निकरा (आ. २,३८)
आयसें होतें–कायसें हो तें (आश्रम. ५,४)
आयुध रणीं तें–आयु धरणीतें (गदा.१,६२)
आयुधारणा लाह्रो–आयुधा रणाला हो (गदा. ३,२९)
आरडती-(१)हा रडती (कर्ण. १२,२८)
आराधी–सारा धी (कर्ण. २२,७)
आर्तव मनानें–आर्त वमनानें (आश्रम.५,३६)
आलि न वदे हा–शालि नव देहा(आ.६,३१)
आलि यास्तव न–आलिया स्तवन (मुक्तां.५०)
आलीस–आलीस (सखीस) (आश्रम. ३,३१)
आवतणें–आव तणें (कर्ण. ८,४)
आवरण–आव रण (कर्ण. ७,५)
आव रिते–आवरिते (कर्ण. १२,५)
आंवळीला जो–आंवळी लाजो (मुक्तां. ३१)
आशय ज्ञानें–पाश यज्ञानें (गुरुस्तुति २)
आशु भव्य जन–बा! शुभ व्यजन(मुक्तां.४२)
आस नतें–आसन तें (मुक्तां. ४४)
आस्यातें–हास्यातें (गदा. १,७१)
आहेत–आ हेत (मदा. ४,६)
आळसे वेला–काळ सेवेला (आश्रम. १,७)
आ ज्ञाती–आज्ञा ती (आश्रम. ३,३७)

आ ज्ञाती–बा ! ज्ञाती (गदा. ७,१४)
आज्ञा पी–आज्ञापी (कर्ण. ३०,८)
इलापा तें–विलापातें (गदा. ३,६)
इलापाला–विलापाला (हरिश्चंद्र. ३,४७)
उग्रासी (भयंकरास)-उग्रासी (भयंकर खड्गास) (कर्ण. १४,२७)
उचित राया–शुचितरा या (हरिश्चंद्र.४ ,३०)
उचिताते–शुचि तातें (मदा. ५,४५)
उजराया–तुज राया (कर्ण. २१,३२)
उजवा–उजवा (मुक्तां. ५५)
उडवून–बुडवून (हरिश्चंद्र. २,३५)
उणीव रितें–गुणी वरितें (मुक्तां. १०२)
उणें काय–गुणें काय (गदा. ३,३०)
उतरलासि कसीं–सुतरलासि कसीं ? (स्वर्गा. १,५१)
उतराई–सुत राई (आश्रम. १,३०)
उतराया–सुत राया (कर्ण. ७,२३)
उतरी–सुतरी (हरिश्चंद्र. १,३०)
उतरे–कुतरे (गदा. ७,५)
उतरे–सुत रे ! (कर्ण. ८,२९)
उत्सव दे–कुत्स वदे (मदा. ६,४५)
उद्धव नवासा–शुद्ध वनवासा (आश्रम. ३,१०)
उद्रव सुना कीं–रुद्र वसु नाकीं (गदा. ४,१९)
उपर मातें–उपरमातें (नारदाभ्युदय. ३५)
उपरि मळला गे–सुपरिमळ लागे (हरिश्चंद्र. २,२४)
उपाध्याय (ऋत्विज्)–उपाध्याय (जवळचा अध्याय) (स्वर्गा. २,३८)
उपासक ते–तुपा सकते (गीता. २)
उपासकसा–तुपास कसा (आश्रम. २,२६)
उपासिला भावें–तुपासि लाभावें (आ. २,९)
उभा केला–सुभाकेला (महिपति. ६)
उरकवितो–उर कवि तो (आश्रम. १,२)
उर गमनीं–उरग मनीं (कर्ण. १४,२५)
उर द्रोहें–सुरद्रो हें (आश्रम. ५,२३)
उर फाटे–उरफाटे (शल्य. १,१७)
ऊरवि प्रकर–शूरविप्रकर (कर्ण. १३,१६)
ऋषि तरतो–तृषित रतो (आश्रम. ५,४३)
एकरद–ते करद (आश्रम. ४,२५)
एकल व्यास–एकलव्यास (आश्रम. २,१४)
ओपावें–कोपावें (हरिश्चंद्र. २,७)
ओपावें–हो पावें (गदा. १,९५)
ओ व्याही–ओव्याही (स्वर्गा. २,५६)
ओसरतां–तो सरतां (हरिश्चंद्र. ४,१८)
ओस रायाचें–ओसरायाचें (आश्रम. ५,२४)
कंकटा माजि–संकटामाजीं (गदा. ३,३३)
कंजयव देतो–संजय वदे तो (आश्रम.४,३३)
कडेहि माद्रीचे–कडे हिमाद्रीचे (शल्य.१,४४)
कथा पिकवी–तथापि कवी (आश्रम. ३,५२)
कटकातें–चटकातें (शल्य. २,४७)
कडक डोहा–कडकडो हा (गदा. १,१९)
कथा पिशुन कानीं–तथापि शुनकांनीं (गदा. १,१४)
कथिलें–कथिलें (नारदाभ्युदय १०)
कदना कीं–पद नाकीं (गदा. १,७)
कदली–वदली (मदा. ३,२०)
कदलीस–वदलीस (हरिश्चंद्र. २,२१)
कदा शिरे न मन–पदा शिरें नमन (नारदा. ३६)
कपटानें–न पटानें (गदा. ६,२२)
कपिल हरी–कपि लहरी (शल्य. २,२)
कंपदा न विनवीति–संपदा नवि नवी ती (मुक्तां. ३८)
कंप दापावे–संपदा पावे (गदा. ७,२३)
कंप दासाचा–संपदा साचा (मुक्तां. १०५)
कंप देत पाउल ती–संपदे तपा उलती (आश्रम. ३,१५)
कंपादी–संपादी (गदा. ३,१२)
कर कटकें–परकटकें (शल्य. २,१०८)
करट पती–(म)कर टपती (कर्ण. २८,५०)

करटा–घरटा (कर्ण. २८,५७)
करि गमन–करिग मन (कर्ण. २१,२९)
करित सा मास–वरि तसा मास (आश्रम. ७,६)
करितास–चरितास (गदा. ६,२१)
करिन यज्ञा–जरि नयज्ञा (कर्ण. ११,११)
करि पुरतें–परि पुर तें (मदा. २,९)
करिल काय ?–वरिल काय (हरिश्चंद्र. २,२३)
करिल यातें–वरि लयातें (हरिश्चंद्र. २,७३)
करि लहांनीं करिल हानी (सत्संग. १३)
करिशील–करि–शील (गदा. १,१२०)
करि सेना–परिसेना (मदा. ६,५)
करीन खरा–करी नखरा (कर्ण. १२,१०)
करी रागें–शरीरागे (आश्रम. १,२५)
करी सवदा–परीस वदा (हरिश्चंद्र. २,४६)
करुनि आ हे–धरुनि आहे (आश्रम. ५,३२)
करूनि भासेना–चमूनिभा सेना (कर्ण.६,२१)
करुनियां तप, हा !–धरुनि, यांत पहा
(स्वर्गा. २,१२)
कर्णकाम हा भागे–तर्णका महाभागे !
(स्वर्गा. २,४७)
कर्म देवा ! तें–शर्म दे वातें (हरिश्चंद्र.४,३२)
कर्म वाटे तें–धर्म वाटेतें (आश्रम. ४,१६)
कर्म सारेंच–धर्मसा रेंच (नारदा. ३९)
कलि न काय ?–मलिन काय (हरिश्चंद्र. ३,३)
कल्पनग यातें–तल्प न गया तें (मुक्तां. ४)
कवच रणीं–धवचरणीं (शल्य. २,१०३)
कव चपळाला–(वि) कवच पळाला
(कर्ण. १४,६५)
कवडीला–दवडीला (आश्रम. १,३९)
कवि केला–कविकेला (मदा. ५,४३)
कविदेहा–रवि दे हा (स्वर्गा. २,३६)
कविनें–पविनें (कर्ण. ८,३२)
कवि प्राया–(अ) कै विप्रा या (कर्ण. ११,५३)
कवि राजे–न विराजे (आश्रम. ६,५६)
कविस मागाव्या–रविसमा गाव्या (मुक्तां.७४)
कशा लाहो–यशाला हो (हरि. २२,३१)
कशांस मज–कशा समज (आश्रम. १,५७)
कशि खरी प्रतिज्ञा ती–न शिखरीप्रति ज्ञाती
(गदा. १,११९)
कशि खंडी ?–न शिखंडी (कर्ण. १,१४)
कष्ट सा मास–नष्ट सामास (हरिश्चंद्र. २,३३)
(तो) कसा मान्य–(लो) क सामान्य
(कर्ण. २६,१८)
कंसारी–संसारी (कर्ण. ६,६६)
कळला–फळला (मदा. ३,२१)
कळवा तें–बळ वातें (आश्रम. ७,३१)
कळवि कळ–सकळ विकळ (मदा. ६,२५)
कळिव राया–कळिवरा या (गदा. १,८०)
कळेवरतें–कळेवर तें (कर्ण. १२,२६)
कां गमला–सांग मला (गदा. ८,२)
कां गाल–सांगाल (मदा. २,४८)
कांचावे–कां चावे (हरिश्चंद्र. २,१०)
काज वातीस–काजवा तीस (द्रोण. १,७)
कां टाकीं–कांटा कीं (सन्मणि. ३८)
काढविला–वाढविला (शल्य. १,९)
काढविलीं–वाढविलीं (आश्रम. ६,२४)
कातराक्ष ससा–घात राक्षससा (कर्ण.६,३०)
कान मन–कां नमन (हरि. १४,४७)
कानवले–मानवले (शल्य. १,५९)
कांतिसंप दानाहीं–शांतिसंपदा नाहीं
(साधुसत्कार २३)
कां दाया–नांदाया (हरिश्चंद्र. ४,४६)
कां देहें–नांदे हें (कर्ण. २९,१९)
कां न कोंडें हो !–कानकोंडे हो ! (गदा.६,४७)
काम कपिला जो–रामकपि लाजो (मुक्तां.१६)
कामगमीं–कां मग मी (हरिश्चंद्र. ४,४९)
कामपुर विलासाचा–काम पुरविला साचा
(आश्रम. ६,३३)

खरेदी न–खरे दीन (हरिश्चंद्र. २,५८)
खळगा–खळ गा ! (कर्ण. २८,८)
खांडवास खायाची–पांडवा सखा याची (आश्रम. ७,२९)
खोल तोय शया–बोलतो यश या (हरि. २२,२५)
गगनतळ मळला–मग न तळमळला (शल्य. १,५७)
गगनवाणी–मग न वाणी (गदा. १,२२)
गगनीं ती–जग नीती (कर्ण. १३,१०)
गति कडे चिरडे–पतिकडेचि रडे (हरिश्चंद्र. ३,५३)
गद नवा सून–वदन वासून (आश्रम. ५,३७)
गदा विवर–न दावि वर (गदा. ३,४१)
गदीश तदा–नदी शतदा (गदा. ३,१२)
गमे लोमीं–न मेलों मीं (कर्ण. ६,२२)
गरक या तनाना कीं–नरकयातना नाकीं (स्वर्गा. १,१३)
गर्व तमीं–पर्वत मी (मुक्तां. ९९)
गर्व हीरा जा (ज्या)–सर्वही राजा (गदा. ६,४६)
गरिब लाविला वाटे–हरि बलाविला वाटे (गदा. १,९३)
गलबला केला–गल बलाकेला (मदा. २,२)
गवसेना–तव सेना (कर्ण. ७,६)
गहिवरानें–महिवरानें (आश्रम. २,४७)
गाजविती–लाजविति (हरिश्चंद्र. ४,१३)
गा ! त्रपा दुकानातें–गात्र पादुका नातें (मुक्तां. ३९)
गा राजा !–गारा जा (मदा. ६,३३)
गालव दे–गाल वदे (मदा. १,२८)
गालव हा–गाल वहा (मदा. १,२९)
गुज लाहे–तुजला हे (आश्रम. ५,४७)
गुणगणावासा–गुण गणावासा (गदा. ३,५३)
गुरुचि रासभ जे–सुरुचिरास भजे (हरिवंश. १४,८)
गुरुपदांनीं–हुरुप दानीं (हरिश्चंद्र. ३,७७)
गेह तेजांचें–देह ते जांचें (हरिश्चंद्र. ४,१७)
गौतमही–धौत मही (शल्य. २,११०)
गौरव दे–पौर वदे (मदालसा. ३,१)
गोंविला पार्थ–हो ! विलापार्थ (शल्य.१,४५)
घटज नांदे–वट जनां दे (मुक्तां. २४)
घट तिघे ते–नटति घेते (आश्रम. ४,२४)
घननिभ व्यास–जननि भव्यास (आ. १,९७)
घात लाखोटा–घातला खोटा (आश्रम. १,४२)
घात हा केला–लात हाकेला (शल्य. १,१०)
घावरा काय–हा बरा काय ? (आश्रम.२,१०२)
चचे नरकीं–पचे नरकीं (हरि. २२,१०४)
घेराया–घे राया (द्रोण. १,१४)
घोर तप डावें–घोरत पडावें (आश्रम. ४,३९)
चढवीला–पढवीला (हरिश्चंद्र. ४,४५)
चरित्रास–धरि त्रास (कर्ण. २,८)
चव तीस–चवतीस (साधुसत्कार ३५)
चाकर करून–(भूमि) पा करकरून (हरिश्चंद्र. २,८८)
चाखविती–दाखविती (नारदा. ४४)
चाप सजी–तापस जी ! (शल्य. २,८७)
चामरें काय ?–पामरें काय (हरिश्चंद्र. ३,५९)
चालत रवातें–शालतरु वातें (गदा. ३,२३)
चाल सामोरा–सालसा मोरा (हरिश्चंद्र. ४,१९)
चित्त देहातें–वित्त दे हातें (मदालसा.५,४२)
चित्त पहा–वित्तप हा (मुक्तां. २९)
चित्तांत–वित्तांत (हरिश्चंद्र. २,८१)
चुकला गे !–शुक लागे (स्वर्गा. २,४४)
चुकलीला–शुकलीला (मुक्तां. ७५)
चुकवीला–सुकवीला (गदा. ६,२०)
चुरितें–दुरितें (गदा. ६,२३)
चंदनवनवती–मंद नवनवती (गदा. ३,७)

जगतीतें–मग तीतें (हरिश्चंद्र. ५,१०)
जडतम रणातें–रडत मरणातें (शल्य. १,५३)
जतन–वतन (कर्ण. २८,१)
जनक विप्र या गाती–जन कवि प्रयागा ती (मुक्तां. ३)
जनक शापातें–मन कशापातें (हरिश्चंद्र. ५,५)
जनकाची–मन काची (कर्ण. १,८)
जन दासही, खरे दीन–धनदासही खरेदी न (हरिश्चंद्र. २,५८)
जनवपुस त्या–खनव पुसत्या (आश्रम. ६,३०)
जना सकळ कळवी–मनास कळकळ वी (माधव. १५)
(मनुष्य) जनु ठावें–(पंक) ज नुठावें (आश्रम. ६,५२)
जन्म रणीं–सन्मरणीं (कर्ण. ७,४)
(भा) जन स्थविर हातें–वनस्थ विरहातें (आश्रम. ४,२८)
जयपरा शर सा–भय पराशरसा (श. २,९१)
जरि नरसा–परि न रसा (मुक्तां. ७,६)
जसा रवि ग्रहांमाजीं–सार विग्रहा माजी (शल्य. १,४९)
जसें चिर क्षीबा–तसेंचि रक्षी बा (श. २,२६)
जळालास–पळालास (आश्रम. ७,३५)
जा गेहा–जागे हा (हरिश्चंद्र. ३,७५)
जाणते जाला–बाण तेजाला (हरि. २२,३७)
जाहलें कांहीं–दाह लेकांहीं (आश्रम. ७,२३)
जा मदा रागा–जामदारा गा (विष्णुपद. ३२)
जितकाशी–हित काशी (गदा. ७,२५)
जितकाशी तें–जितका शीतें (गदा. ५,२७)
जी वसती–जीव सती (गदा. २,४)
जे कवीश्वर ते–सेक विश्व रते (स्वर्गा. २,४३)
जे त्यांचें–जेत्यांचें (आश्रम. २,९६)
जे त्यांतें–जेत्यांतें (कर्ण. ३१,८)
जेंवि खारा तें–जें विखारातें (हरिश्चंद्र. ३,३२)
जेंवि दे शाला–जे विदेशाला (आ. ६,१६)
जें विनासत्य–जेंवि नासत्य (स्वर्गा. २,५)
जेंवि पाकातें–जें विपाकातें (गदा. ५,३२)
जेंवि रेतींत–जें विरे तींत (आश्रम. ५,२८)
जेंवि शारदा वाहे–जें विशारदा वाहे (स्वर्गा. २,१५)
जो कपाळाला–लोकपाळाला (हरिश्चंद्र. ३,३५)
जोगी ते–जो गीते (गीता. ४)
जोडून, दास मी नमनें–सोडूं नदास मीनमनें (आश्रम. ६,४७)
झोंप डिखळाची–झोंपडि खळाची (हरिश्चंद्र. ३,२९)
डोलतो लवतो–बोल तोलवतो (आ. ५,५०)
तज्जाया–मज्जाया (आश्रम. ५,३५)
तडा खातो–तटाखा तो (गदा. ३,२५)
तदन्यास–पदन्यास (आश्रम. २,२०)
तदपि तातें–पद पिता तें (सत्संग ६)
तदा ज्ञाते–तदाज्ञा ते (मुक्तां. ६३)
तदा ज्ञात्या–तदाज्ञा त्या (आश्र. ५,९)
तप कसा? रे–सपक सारे (आश्रम. २,१)
तप टळतें–न पटळ तें (कर्ण. ११,३२)
तपनसा मान्य–तप न सामान्य (मुक्तां. १०)
तप रमा लवली–न पर मालवली (नारदा. २४)
तपोनिधी रानीं–तपोनि धीरानीं (मदा. ६,७०)
तयास कळवीती–दया सकळ वीती (मदा. ३,३८)
तयांस हित–तयांसहित (आश्रम. ४,३१)
तयास्तव नयाचें–भया स्तवन याचें (हरि. २२,२६)
तर सहाता–न रस हाता (गदा. ७,१६)
तरायास–परायास (गदा. ६,५८)
तरी राहे–शरीरा हें (स्वर्गा. १,१७)
तव धरणी–न वध्र रणीं (गदा. १,६४)
तव न वेगातें–नवनवे गा! तें (गदा. १,६)
तव राजा–नवरा जा (=ज्या) (स्वर्गा. १,२२)

तळ मळले–तळमळले (द्रोण. १,२१)
तक्षका मरणीं–दक्ष कामरणीं (स्वर्गा. २,२७)
तापडसे–साप डसे (नारदा. १७)
तापले शर वी–ताप लेश रवी (कर्ण. १७,१८)
ताप समजावें–पापसम जावें (हरि. ५,२१)
तापसत्वानें–ताप सत्वानें (आश्रम. ७,१६)
तापस हा–ताप सहा (हरिश्चंद्र. २,६८)
ताप सामान्य–तापसा मान्य (हरि. ५,१९)
तापाचें–पापाचें (मदा. २,७८)
तापातें–बापा तें (मदा. ३,५०)
तापातें–शापातें (हरिश्चंद्र. ५,१५)
तितउ तरला–हित उतरला (गदा. ७,६)
तुजसम जे–तुज समजे (गदा. १,९२)
तुरग कविकेला–पुरग कवि केला (माधव. १७)
तुरगातें–पुर गातें (मदा. १,१९)
तुला नमुनी–तुला न मुनी (गीतस्तुति १)
तुला बाहो–महाबाहो ! (कर्ण. १२,२०)
तूं हितसा–तूंहि तसा (कर्ण. २८,७५)
ते नसति–ते न सति (सन्मणि. ८५)
तेंवि वर्णन हो !–तें विवर्ण न हो (गदा. १,११३)
तें विहार करीं–तेवि हार करीं (स्वर्गा. १,४५)
तोक थानांहीं–तो कथा नांहीं (स्वर्गा. २,२५)
तोक परि सारे–लोक परिसा रे (हरि. ४,४२)
तो कपाळ सुरस हित–लोकपाळ सुरसहित (स्वर्गा. १,३३)
तो कयाधूतें–तोक या धूतें (मुक्तां. ५९)
तो करवी–तोक रवी (आश्रम. १,२५)
तोकर्ण–तो कर्ण (आश्रम. ६,१७)
तो कवि न तातें–तोक विनतातें (मुक्तां. १३)
तो कवि श्वास–शोक विश्वास (कर्ण. ३,७)
तोकांतें–तो कां तें (हरिश्चंद्र. ५,२८)
तोकांनीं–तो कांनीं (आश्रम. ४,३५)
तो कानीं–लोकांनीं (कर्ण. १२,३१)

तो कानें–शोकानें (शल्य. १,४)
तो कांहीं–तोकांहीं (हरि. १४,२२)
तोख दया–ओखद या (सत्संगस्तव ११)
तो गमो त्यांचा–योग मोत्यांचा (शल्य. २,९)
तोचि मणि–हो ! चिमणी (हरिश्चंद्र. ५,२३)
तो तरि ती–होत रिती (आश्रम. ३,२७)
तो तीस–होतीस (मदा. २,१३)
तोडविला–सोडविला (गदा. ६,१९)
तोडास–तों डास (शल्य. १,१९)
तो बाहें–तोबा हें (तुळशी. ८)
तो भविष्णुपदा–लोभ विष्णुपदा (विष्णु. ११)
तोमर तो–तो मरतो (कर्ण. १३,२४)
तो यथा राया–तोय थाराया (कर्ण. २१,७)
तोयदान वश तातें–होय दानव शतातें (आश्रम. १,२९)
तोयदा नाहीं–होय दानाहीं (आ. २,१०४)
तोय दे हातें–होय देहातें (आश्रम. ७,४१)
तोय नतें–होय न तें (गुरु. ६)
तोय होत्यांची–होय हो ! त्यांची (स्वर्गा. २,३)
तोयज्ञ–तो यज्ञ (हरि. १४,४९)
तो यातें–तोयातें (कर्ण. १८,१६)
तो याशीं–तोयाशीं (कर्ण. ८,२०)
तो रचिता–थोर चिता (हरिश्चंद्र. ३,८४)
(प) थ ह्या कीं–(र) थ हाकीं (कर्ण. १६,१०)
(त) थापि कवी–व्यथा पिकवी (हरि. १,३४)
तो लगामातें–बोल गा मातें (कर्ण. ११,६८)
तो लाल–तोलाल (शल्य. २,३६)
(प) द काय–(व) द काय (हरिश्चंद्र. १,२०)
दंड पाहे ती–मंडपा हेती (हरिश्चंद्र. ३,५६)
(त) दपि नाकी–(प) द पिनाकी (कर्ण. २०,७)
दंभरतें–शंभर तें (आश्रम. १,१९)
दंभरहितातें–शंभरहि तातें (मुक्तां. २२)
दया करावि खरी–दयाकरा विखरी (मदालसा. ६,६३)

दवांत पदप रहा–लवांत पद पर हा (गदा. ३,३७)
दक्षा या–रक्षाया (मदा. १,२६)
दान दाता तें–मानदा तातें (आश्रम. १,९२)
दायलव करितो–राय लवकरि तो (हरिश्चंद्र. ३,३८)
दाया दया सदा सत्व–दायाद यास दासत्व (हरिश्चंद्र. २,६१)
दास मज–बा ! समज (मदा. ६,३४)
दिला पातें–विलापातें (हरिश्चंद्र. ३,४३)
दिली पानें–दिलीपानें (आश्रम. ३,४०)
दिसे नासा–दिसेनासा (हरिश्चंद्र. २,५९)
दीपका शाला–दीप काशाला (तुकारामस्तुति २१)
दुष्करा क्षामीं–पुष्कराक्षा ! मी (गदा. ७,१७)
दे खाया–देखाया (हरिश्चंद्र. १४,४)
देखिले हो ! ते–रेखिले होते (स्वर्गा. २,२)
देखिल्या हो ! त्या–लेखिल्या होत्या (आ. ३,७)
दे दानें–वेदानें (आश्रम. ७,४२)
दे वदे वाचा–देवदेवाचा (सन्मणिमाला २)
देवरा खाया–देव राखाया (शल्य. १,६)
देव वेना कीं–देववे नाकीं (गदा. ६,२६)
दे वसुधा–देव सुधा (कर्ण. १२,२४)
देव सुस्वर गा–दे वसु स्वरगा (गदा. ७,२०)
दे वाल्या–देवा ल्या (कर्ण. ११,५४)
दे हरिण–देह रिण (गदा. ५,३१)
दे हली नातें–देह लीनातें (गदा. ३,१५)
देह लीला जो–देहली लाजो (गदा. २,२३)
देहें–दे हें (हरिश्चंद्र. १,२३)
दैवत रे–(स)दैव तरे (कर्ण. ६,३४)
धन दानें–धनदानें (शांति. ५,५८)
धना सजायास–वनास जायास (आ. २,१९)
धनी नसे तातें–वनीं न सेतातें (आ. २,७३)
धन्य वासर हा–अन्यवास रहा (स्वर्गा. १,६)
धनुष्य शर भाच्या–मनुष्यशरभाच्या (शल्य. २,२४)
धर्मराज वदे–मर्मरा जव दे (आ. २,१०९)
धर्मराज सजे–धर्म राजस जे (शल्य. २,७१)
धरून ये भीड–धरूं नये भीड (गदा. १,६७)
धीट पती–धी टपती (कर्ण. १०,१५)
धुविन या वन तें–सुविनयावनतें (आ. ४,१२)
ध्रुवाचिया गाला–ध्रुवाचि यागाला (सन्मणि. ३३)
न कळविल यातें–सकळ विलयातें (मदा. ६,५१)
न कळहातें–सकळ हातें (हरि. २२,३२)
नका व्यथा राया–न काव्य थाराया (द्रोण. १,८)
नको कांहीं–न कोकांहीं (मदा. ४,१६)
न क्रम हा–शक्र महा (हरि. १४,३५)
नगनिभा वसवे–मग निभाव सवे (आ. ४,२)
नग रमला–नगर मला (हरिश्चंद्र. ४,३९)
नगरा जा–नग राजा (आश्रम. ३,१३)
नगरा जा–मग राजा (आश्रम. ५,७)
न गहिंवरता–नगहि वरता (आश्रम. १,८९)
न जन मानवे शपथा–भजनमानवेशपथा (मुक्तां. १०८)
नट निकरें–भट निकरें (शल्य. २,४९)
न तगावें–शतगावें (कर्ण. २८,२९)
नत तरो गीते !–सतत रोगी ते (गीता. ५)
न तरा जे–शत राजे (गदा. २,७)
नत तपुनि वेचीं–सतत पुनिवेची (आ. २,८२)
न तसा रे–नत सारे (सन्मणि. ९)
(न) त्यजिती–(स)त्य जिती (हरि. २,१४)
नदनदीन–वदन दीन (हरिश्चंद्र. ५,११)
नद नदी नाहीं–वदन दीनांहीं (आ. ३,३८)
न दमुनि वराहे–वद मुनिवरा हें (आ. ३,६६)
न दान दे वीची–(मा) नदा न देवीची (आश्र. ३,१८)

नदा यादा–(दा) स दायादा (गदा. ६,११)
न दास मज–सदा समज (मदा. ६,६५)
न दास शिव ल्याला–पदास शिवल्याला (मुक्तां. ८९)
(दा) न दीनातें–नदी नातें (कर्ण. २८,६०)
नदी परते–न दीप रते (आश्रम. ३,१४)
न दीयमान साधीन–मदीयमानसाधीन (गदा. १,४५)
न धरीती–बुधरीती (कर्ण. १,२९)
न धूलिहि ती–वधू लिहिती (मुक्तां. २१)
नंदन तें–मंद नतें (आश्रम. २,१६)
नंदना गदी नाशा–नंदनाग दीनाशा (गदा. १,१०७)
नंदना! नरकीं–नंदना नर कीं (स्वर्गा.१,५४)
न भजावें–नभ जावें (आश्रम. ६,४६)
न भाजावें–नभा जावें (स्वर्गा. १,३)
नभ स्मरणीं–न भस्मरणीं (कर्ण. १७,९)
नमज्जनता–न मज्ज नता (स्वर्गा. १,५५)
न मजला खोटा–समज लाखोटा (हरि. १४,१९)
न मन माते तें–नमन मातेतें (मुक्तां. १४)
न मानस हराया–समान सहराया (वि. २३)
न मुनी–नमुनी (गदा. २,२५)
नरक, पातकी नाश–नरकपात कीनाश (स्वर्गा. १,२५)
नरक रणीं–नर करणी (कर्ण. ३,४४)
नरकवास वसा–सरक वासवसा(स्वर्गा.१,२६)
नरक सारे–नर कसा रे (गदा. ४,२०)
नरकाचा–नर काचा (स्वर्गा. १,१२)
नर कीं–नरकीं (हरिश्चंद्र. ४,२८)
नरपति तरे–नर पतित रे (द्रोण. १,२८)
नरवरा जातों–न रव राजा तों (आ. ३,१२)
नर विमान वासव दे–न रवि मानवांस वदे (हरिश्चंद्र. ४,४४)
न रवि मानी–वर विमानी (स्वर्गा. २,१३)
नरा नीचा–न रानींचा (हरि. ८,६२)
न रामाशी–नरा माशी (गदा. ५,२)
न लागावी–नला गावी (गदा. १,१०३)
न लाभ जनीं–भला भजनीं (विष्णुपद. २८)
नव चरितें–न वच रितें (वामनपं. स्तुति ४)
न वदे हें–नव देहें (आश्रम. ४,४६)
नव धरणी–न वध रणीं (आश्रम. १,६७)
नव नवास–भवनवास (शल्य. १,२०)
नवनवा हे–पवन वाहे (गदा. ६,४५)
नव नसे कांहीं–न वनसेकांहीं (गदा. १,१३)
न वच रुचे–नव चरुचे (आश्रम. ४,३)
न वरचील–नव रचील (कर्ण. १२,१९)
नव लतेतें–नवल तें तें (आश्रम. ५,३४)
नव शमेना–न वश मेना (आश्रम. ५,२६)
नव शर हा–न वश रहा (कर्ण. १४,३२)
नव संत–न वसंत (साधुसत्कार १)
न वसु खरचाया–नव सुख रचाया (आश्रम. २,११७)
न विदुरा पाहें–नवि दुरापा हें (आ. ४,३७)
नवि प्रभा सतिलकांहीं–न विप्र भासतिल कांहीं (आश्रम. ६,२१)
नव्य जनें–न व्यजनें (हरिश्चंद्र. २,६०)
न व्ययशतातें–नव्य यश तातें(आ.२,११८)
न शकुनि यती–यश कुनियती (गदा.५,२८)
न शहाणी–यश हाणी (शल्य. २,२०)
न सेवा मी–वसे वामी (हरि. २२,८४)
न हाय शापावें–महायशा पावें (हरिश्चंद्र. २,३७)
न हारा जा(=ज्या)–रहा राजा!(हरि.२२,४५)
न क्षत्रें–नक्षत्रें (कर्ण. १९,३०)
न क्षमाशीला–लक्ष माशीला(हरि.२२.१०७)
नाकातें–नाकातें (हरिश्चंद्र. ४,२३)
नागविला–भागविला (गदा. ६,३०)

नांदावा—कां दावा (मदा. २,८७)
नाम गती—ना मग ती (नारदा. २५)
नायक वनातें—राय कवनातें (स्वर्गा. २,४०)
नायका यमही—हाय काय मही (गदा.१,३७)
नावयाचें—नांव रायाचें (गदा. १,८६)
नासत्य—हा सत्य (रामदासवर्णन २)
निकाम हिमा—निका महिमा (नारदाभ्युदय १)
निज यशा पीन—विजय शापीन (हरिश्चंद्र. २,३४)
निज-विलासा—निजविलासा (कर्ण. ३,३४)
निजायास—निजा यास (शल्य. १,८२)
निंदुनि घे—बिंदु निघे (मुक्तां. १०३)
निर्माया—निर्माया (आश्रम. ५,३०)
निर्वेदा (दुःखास)—निर्वेदा (वेदरहितास) (आश्रम. १,३२)
निरी हास—निरीहास (गदा. ५,२६)
निवासमानसेवाणी—शिवासमा नसे वाणी (मदा. ३,१७)
निवे दूत—निवेदूत (स्वर्गा. १,३१)
नीरसा रविला—वीर सारविला (कर्ण. ७,३१)
निश्वास—विश्वास (मदा. १,२१; १,२४)
पंगु रहा—भंगुर हा (मुक्तां. ६५)
पढोन देवारी—रडों न दे वारी (आ. १,९०)
पण तसे जाच—म्हणतसे जाच (आश्रम.६,५०)
पण तुंडें—पणतुंडें (आश्रम. ३,३२)
पणतूतें—पण तूतें (आश्रम. ३,२६)
पतन—वतन (स्वर्गा. १,८)
पतन गरदा! हें—शतनगरदाहें (गदा. ६,२८)
पथासि हरी—रथासि हरि (शल्य. २,७३)
पद न तापदा साचें—सदन ताप दासाचें (मुक्तां. ११)
(हरि)पदनमजना कवना—वदन मज्ज नाकवना (स्वर्गा. २,५०)
पद नाकीं—सदना कीं (गदा. ७,१२)
पद रगडी—पदर गडी (मुक्तां. ५१)
पदर जावेंच—पदरजा वेंच (सन्मणि. १४)
पद रमागेहें—पदर मागे हें (आश्रम. २,६४)
पदरा हें—पद राहें (आश्रम. ३,२५)
पद लाजे—वदला जे (नारदा. २९)
पद वाजी—वदवा जी! (कर्ण. १४,८)
पद्यातें—सद्यातें (मदा. १,५)
पंधराव्यांत—बंध राव्यांत (आश्रम. १,४३)
पदापाशीं—सदा पाशीं (मदा. ६,४०)
(स)पदि सेना—(स्व)प दिसेना (कर्ण.१६,२०)
परतवी राजा—परत वीरा जा (आश्रम. ३,९)
परम लाडास—पर मला डास (आश्रम.६,६३)
परम हर्षे—पर महर्षे! (नारदा. २३)
पर वधूं तें—परवधूंतें (शल्य. १,६४)
पर्वत पहा, हा—सर्वतप हा! हा! (स्वर्गा.२,१४)
पर्वत मी—सर्व तमीं (कर्ण. १०,६)
पर्वतसे—सर्व तसे (कर्ण. १४,१८)
परा धीनें—पराधीनें (मदा. ३,६)
पराभूत—बरा भूत (कर्ण. ३०,६६)
परासुता राजे—परा सुताराजे (आश्रम.२,७९)
परासु धाक सिरे—परा सुधा कसि रे (गदा. ३,२८)
परासु नयनातें—परा सुनयनातें (शल्य.२,८५)
परा सुबाहो तें—परासु बा! होतें (मदा.६,६२)
परिघ न सरे—परि घन सरे (आश्रम.१,२८)
परिघास—परि घास (शल्य. २,५७)
परिचितातें—परि चिता तें (हरिश्चंद्र. ४,१२)
परिणतसा—हरिण तसा (नारदाभ्युदय ५)
परि समजला—परिस मजला (माधवदासस्तव १०)
परिस राया तें—परि सरायातें (शल्य. २,१)
परिसवि तयाला—(त्याहि) परिस वितयाला (आश्रम. १,२७)

परि सवितयास–परिसवि तयास (आ. १,३१)
परिस हाय–हरि सहाय (गदा. १,६८)
परि सारे–परिसा रे (हरिश्चंद्र. ४,४२)
परिसा हो!–परि साहो (साधुसत्कार २६)
परि सुनांनीं ती–परिसुं ना नीती (आश्रम. ३,६)
परिसुना सासू–परि सुना सासू (शल्य. १,७)
पह्रा टपती–पह्राद पति (स्वर्गा. २,१८)
पहात पावे धी–महातपा वेधी (वामन. ११)
पहाते जा (=ज्या)–महातेजा (स्वर्गा. १,५८)
पह्रा नमन–लह्रान मन (हरिश्चंद्र. ४.२४)
पह्रा भुज गा!–महाभुजगा (गदा. १,१००)
पह्रा माया–मह्रा माया (मदा. ४,२१)
पह्रायास–महायास (स्वर्गा. २,१)
पह्रावे गा!–महावेगा (शल्य. २,९२)
पह्रावेना–सह्रावेना (शल्य. २,४४)
पहिला–महिला–वहिला (गदा. १,३०; भाग. ७)
पळसाचे–बळ साचें (कर्ण. २८,३१)
पाडसा चारा–पाड साचारा (आश्रम.४,१८)
पात लाव्यास–पातला व्यास (आश्रम. ५,१०)
पादरजा–सादर जा (=ज्या) (स्वर्गा. २,३४)
पाद राजीवा–सादरा जीवा (मुक्तां. ८७)
पापानें–बापानें (गदा. ६,२४)
पामर तो–(भूमि) पा! मरतो (गदा. ३,३)
पार धीरांनीं–पारधी रानीं (गदा. १,१२)
पाव काकुळती–पावकाकुळती (आ. ३,३५)
पाव नता–पावनता (हरि. २२,४७)
पाहतां पर मी–राहतां परमीं (मदा. ६,२९)
पाहेल–राहेल (कर्ण. २४,२२,२३)
पाळका सरणी–बाळकास रणीं (गदा. १,७५)
पांच विजयाचें–वांचवि जयाचें(कर्ण.११,६२)
पांच विलयातें–वांचविल यातें (गदा. ६,५६)
पांच वीरां जे–वांचवी राजे (कर्ण. ७,११)

पांडवास जावेला–मांडवास जा, वेला! (आश्रम. ४,२०)
पिंड विलयाते–हिंडविल याते (विष्णु. १४)
पुनरपि हिता–सुनर पिहिता (मदा. ३,५५)
पुरजना कीं–मुरज नाकीं (हरिश्चंद्र. ४,४८)
पुरासि ये राहे–सुरासि येरा हे (स्वर्गा.२,२९)
पुरीव रती–पुरी वरती (मदा. ४,१७)
पुरी वसती–पुरीव सती (मुक्तां. १०४)
पुसे नाकीं–रुसेना कीं (स्वर्गा. १,२१)
पूतनामा या–पूतना माया (द्रोण. १,३१)
पौर वारा जा (=ज्या)–पौरवा राजा (आश्रम. ४,२६)
प्रति ज्ञाते–प्रतिज्ञा ते(कर्ण.१८,२२;२३,१४)
प्रभा वढिला–प्रभाव ढिला (आश्रम. ६,४८)
प्रभा वर विमाना–प्रभाव रवि माना (आश्रम. ३,७०)
प्रभा वातें–प्रभावातें (हरिश्चंद्र. ५,१६)
पृथाञ्चि कर्णाचें–वृथाञ्चि कर्णाचे (आ. २,९७)
पृथा न रडे–वृथा नरडें (आश्रम. ७,२१)
पृथा परतरा जा–वृथा परत राजा! (आश्रम. ३,४३)
पृथा परते–वृथा पर ते (आश्रम. ३,४५)
फारञ्चि रडावें–भार चिरडावें (हरि. ३,८१)
फिरवी–मिरवी (आश्रम. १,८१)
फुगतीतें–सुगतीतें (विष्णु. १९)
फुलें नाकीं–भुलेना कीं (मुक्तां. ४३)
बक राहो–बकरा हो (द्रोण. १,३२)
बक रे!–बकरे (गदा. १,१०४)
बसेन तापस मी–वसे न ताप समीं (हरिश्चंद्र. १,२५)
बहुत मायावी–बहु तमा यावी (गदा. ३.३४)
बहुधा मी–बहु धामीं (आश्रम. १,६६)
बहु त्याला–बहुत्याला (गदा. १,८१)
बहुविधा त्यातें–बहु विधात्यातें (हरिश्चंद्र. ५,२९)

बळें नमुनी–वळे न मुनी (मदा. २,७६)
बा ! जे तें–बाजेतें (स्वर्गा. १,४२)
बाढ वीरा जा–वाढवी राजा (मदा. ६,९)
बा ! तनानाचा–यातना नाचा (नारदा. ३७)
बाधाया–साधाया (हरिश्चंद्र. १,५)
बा ! न दाहा हा–मानदा ! हा ! हा !
(आश्रम. ४,४८)
बा ! न वनवासा–मानव नवासा (आ. २,१०३)
बा ! मना ! कवना–वाम नाक वना (वामन. १२)
बारा हें–बा ! राहें (कर्ण ८,६)
बा ! शिशो ! भावें–राशि शोभावें
(हरिश्चंद्र. २,६३)
बा ! शिग–बाशिग (आश्रमवासी. २,१०५)
बा ! सनातन या–वासना तनया !
(आश्रम. ५,१६)
बाहुला जाया–राहु लाजाया (आश्रम. ३,२)
बाहु हारविला–राहु हा रविला (आश्रम. ४,४)
बा ! हूं तें–बाहूंतें (कर्ण. १२,१८)
बाहूनी–बाहूनी (कर्ण. २१,१४)
बा ! होतें–बाहो तें (मदा. ६,२७)
बा ! होतो–बाहो तो (गुरुः ७)
बाळ कसा–माळ कसा (मुक्तां. ७७)
बुध नको टिकवी–सुधन कोटि कवी
(हरिश्चंद्र. २,२५)
बुधा करा हो ! तें–सुधाकरा होतें
(हरिश्चंद्र. २,३६)
बुधा न दीनाहीं–सुधानदी नाहीं (गीता. ३)
बुधा समग्रास–सुधासम ग्रास (हरि १,८)
बुधा सरसें–सुधासरसें (तुलसी. ६)
बोलतो कांहीं–बोल तोकांहीं (मुक्तां. ८०)
बोलवतें–हो लवतें (कर्ण. २४,१९)
बोल विलयातें–बोलविल यातें
(हरिश्चंद्र. २,३९)
बंधु रसा–बंधुरसा (कर्ण. ६,३९)
बोळवुनी–लोळवुनी (स्वर्गा. २,२८)
भर भरतसा–भरभर तसा (आश्रम. ४,१०)
भल्ल भस्म रणीं–वल्लभस्मरणीं (गदा. ७,११)
भवदवस्था (तुझी स्थिती)–भव–दवस्था
(संसाररूपी वणव्यांत सांपडलेली)
(हरिश्चंद्र. ३,३७)
भाजले होते–लाजले हो ते (हरिश्चंद्र. ५,२६)
भारतीशमती–भारती शमती (शल्य. १,४६)
भीम तोमर तो–भीम तो मरतो (शल्य. २,२२)
भीम नगा–भी मन गा ! (द्रोण. १,३०)
भी मन तें–भीम नतें (कर्ण. ६,६५)
भीम रणीं–भी मरणीं (कर्ण. १८,२०)
भीमातें–भी मातें (कर्ण. २६,३२)
भीमासी–भी मासी (कर्ण. २४,२०)
भुज गदीन–भुजग दीन (गदा. १,१०२)
भूतपा पिष्ट–(प्र)भूत पापिष्ठ (गदा. ४,८)
भूपनरकाया–रूपनरका या (हरिश्चंद्र. ३,६८)
भूपा ! तें–रूपातें (हरिश्चंद्र. ४,२२)
भेद सारखे दास–वेदसार खेदास (मुक्तां. ५८)
भोजन वयांनीं–भोज नव यानीं
(शल्य. २.१०९)
मंगल गा !–संगलगा (मुक्तांजली २)
मज्जन कीं–मज्जनकीं (आश्रम. २,६१)
मज्जनता–मज्ज नता (नारदा. ३३)
मज्जन हो–सज्जन हो ! (आश्रम. १,३५)
मज्जाया (बुडायाला)–मज्जाया (माझी स्त्री)
(हरिश्चंद्र. ५,१२)
मत्तनय–मत्त नय (गदा. १,५०)
मत्त मामातें–सत्तमा ! मातें (गदा. ३,५)
मत्त मायावी–सत्तमा ! यावी (गदा. १,२१)
मत्समा ते तें–वत्स मातेतें (नारदा. २६)
मत्सराघ वसा–वत्स राघवसा (आ. २,५८)
मत्सरा याचा–वत्स रायाचा (आ. २,११५)
मद लाजो–वदला जो (हरि. २२,५४)

यशाचिया गानें–तसाचि यागानें (मदा. ३,२५)
यशा न देशाला–स्मशानदेशाला (हरिश्चंद्र. ३,३६)
यागदेशिकां गातो–या गदेशि कां गा! तो (गदा. ६,२७)
यागाती–या गाती (सत्संगस्तव १)
या, गे! या–या गेया (आश्रम. ६,२६)
याचकांला जो–याच कां लाजो (शल्य.१,५०)
याचि तसें–याचितसें (आश्रम. २,१८)
या तीस–या तीस (तुका. ३१)
याद या गे! हा–या दयागेहा (आ. ६,२५)
यादवी रमणी–याद वीरमणी (आ. ६,१९)
यादास–या दास (नारदा. २७)
याना कीं–या नाकीं (स्वर्गा. १,५)
यास्तव न राजा–या स्तवन रंजा (श. १,५५)
येरा जा–ये राजा (हरि. १४,१०)
येरा या–ये राया (हरि. २२,८)
योगी ते–यो गीते (गीता. ७)
योजीन–हो जीन (आश्रम. १,५३)
यो धनद डावा–योध न दडावा (गदा.१,२५)
रंगो नसे तुजा तोकीं–भंगोन सेतु जातो कीं (हरिश्चंद्र. ३,४५)
रथभा ते–रथभाते (शल्य. २,४८)
रमा निवा सारे–रमानिवासा रे (माधवदासस्तव २)
रहायाला–वहायाला (हरिश्चंद्र. ४,४३)
राजयश तातें–हा जय शतातें (स्वर्गा.२,३०)
राय काकुळती–सायकाकुळ ती (आ.२,६३)
राहिले होते–पाहिले होते (नारदाभ्युदय ३)
राहु टळे–वाहुटळें (हरि. ४८,१८०)
(अ)रि हा कीं–(ह) रि हाकीं (कर्ण. १८,४)
(स)री घनसे–रीघ नसे (कर्ण. १४,१३)
(अ) रीस शार भवनीं–(ह) रीस शरभ वनीं (कर्ण. १६,१)

रुचिर–सुचिर (गदा. २,२४)
रुचि रमला–रुचिर मला (नारदाभ्युदय ८)
रुतता–सुत तो (गदा. १,५१)
लगा मरणीं–लगाम रणीं (कर्ण. ११,६९)
लांकडें काय–वांकडें काय (मुक्तां. ६२)
लोक पहा–लोकप हा (हरि. ४७,६९)
लोकांत–शोकांत (गदा. ६,४१)
लोभ नगा–शोभन गा! (आश्रम. २,२८)
लोभ लीना कीं–शोभली नाकीं (स्वर्गा. २,६)
वत्सर हितातें–वत्सरहिता,तें (आश्रम२,७४)
वत्सा जें–वत् साजें (मदा. २,८५)
वदे कनिष्ठातें–सदेकनिष्ठातें (आश्रम. ४,४२)
वधीं सकळ वाजी–स्वाधीस कळवा जी (शल्य. २,२१)
वमशील–समशील (कर्ण. ३०,११)
वरी रगडी–शरीरगडी (कर्ण. १२,८)
वर्षतसे–हर्षतसे (नारदा. ४७)
वर्षदभ्रा त्या–हर्षद भ्रात्या (आश्रम. ६,१५)
वर्षविला–हर्षविला (आश्रम. २,११९)
वर्ष वीरमणी–हर्षवी रमणी (मदा. २,६५)
वर्ष वीरा या–हर्षवी राया (स्वर्गा. २,१९)
वर्षानें–हर्षानें (सन्मणि. ३७)
वर्षे–हर्षे (मात्रारामा. ८)
वरासना वरुनी–करास नावरुनी(मदा.३,४७)
वराह वाराया–वराहवा राया (कर्ण.१९,१०)
वरि लपवी–वरिल पवी (शल्य. २,१५)
वरि समागम तो–हरिसमा गमतो (हरिश्चंद्र. ३,७८)
वहात आहे तें–न हात आहे तें (मदा.३,८)
वांचवि प्रवीराला–वांच विप्रवीराला (कर्ण. १३,१८)
वांचविला–सांचविला (शल्य. १,१४)
वांचविले–सांचविले (गदा. १,११५)
वाजि-रवा–हा जिरवा (कर्ण. ८,१४)

वाटला गेहा–वाट लागे हा (नारदा. १८)
वाटलें कवनीं–वाट लेंक वनीं (गदा.६,२१)
वाडव रहात–(क) वाड वर हात (गदा ६,५)
वाट वाहो ती–वाटवा होती (आश्रम. १,९)
वायसा चार–राय साचार (कर्ण. २८,२४)
वारिवरि घाला–वारिव रिघाला (आ. ४,७)
वासवा तुळसी–वास वातुळसी (तुलसी.१३)
वासवसे–वास वसे (हरि. २२,१२२)
विजय दास–विजयदास (गदा. ७,१८)
विधवा हे–(नैक) विध वाहे (गदा. ३,४५)
विधिनें (ब्रह्मदेवानें)–विधिनें (विधानानें) (आश्रम. २,२१)
विप्रतापशोमित रे–विप्रता पशो ! मितरे (गदा. ३,९)
विप्र भासविता–विप्रभा सविता(स्वर्गा.२,३९)
विवाहातें–विवाहातें (मदा. २.५१)
विवाहातें–शिवा हा तें (नरसीमेहतास्तव ७)
विवेक वणवासा–शिवे कवण वासा (आश्रम. ५,१३)
विषम राया तें–विष मरायातें (गदा.१,९०)
विषादास–विषा दास (गदा. १,९८)
विषादानें (विषभक्षणानें)–विषादानें(दुःखानें) (कर्ण. ८,१७)
वीरवासवा समज–श्रीनिवास वास मज (हरि. १४,२)
वेदनाशमना–वेदनाश मना (स्वर्गा. १,१९)
वृष्टिहि तशी ते–सृष्टिहित शीतें (हरिश्चंद्र. ४,११)
वृत्रहानि सुर–वृत्रहा निसुर (गदा. ४,१)
शंकर वी–(वि) शंक रवी (कर्ण. ७,३७)
शरभाते–शर भाते (कर्ण. १७,१७)
शरव्या पी–शर व्यापी (कर्ण. ११,३५)
शांत नवा–शांतनवा (कर्ण. ५,३)
शिबि राहो–शिबिरा हो (कर्ण. ५०,१२)
शिवला जो–शिव लाजो (मुक्तां. ९०)
शीघ्र तरवारी–शीघ्रतर वारी (कर्ण.३०,५९)
शिष्टवर मार्गे–इष्टवर मार्गे (मदा. ३,१८)
शुभ-व्यजना–सुभव्य-जना (कर्ण. २४,१७)
शोकदा वार्ता–शोकदावार्ता (मदा. ४,१४)
शोचितसें–शोचि तसें (आश्रम. ५,३१)
श्रमलों–भ्रमलों (गदा. १,२९)
सखे दमना–सखेद-मना (कर्ण. २,१४)
संगरायास–संग रायास (कर्ण. ३,९)
सज्जन हो !–सज्ज न हो (साधुसत्कार. ७)
सज्जना सत्य–सज्ज नासत्य (आश्रम. ६,४३)
सत्वर हा–सत्व रहा (हरिश्चंद्र. २,४०)
सदनुगां ठावे–तदनु गांठावे (साधु. ३०)
सदर्भ कायास–सदर्भकायास (आश्रम.१,४७)
सदा चरण–सदाचरण (मुक्तां. ९४)
सदाधारा–सदा धारा (मदा. १,३)
सदाशी तें–सदा शीतें (आश्रम. २,२७)
सदार करुं चालं–सदारक रुचाल (हरिश्चंद्र ४,९)
सदारा ध्या–सदाराध्या (मदा. ५,४०)
सद्यश तें–पद्य-शतें (सत्संग. १४)
संतत सा–संत तसा (नाथचरित्र ७)
संत तरती तें–संतत रती तें (साधुसत्कार६)
संत तरु सेकीं–संतत रुसे कीं (साधु० २१)
संत तरे–संतत रे (सन्मणि. ९२)
संत तदवस्था–संततदवस्था (आश्रम. १,७५)
संत तितें–संततितें (मदा. ५,३४)
संततिस–संत तिस (गदा. ८,६)
संत तोचि तरे–संततोचित रे (मुक्तां. ६४)
संत तो दार–संततोदार (विष्णु. ६)
संतमस–संत मस (साधुसत्कार १२)
संत रायातें–अंतरायातें (साधुसत्कार १५)
संतापें (साधूजवळ)–संतापे (संतापानें) (साधुसत्कार ५

सन्निधानातें—सन्निधानातें (स्वर्गा. १,३०)
समग्रा वा—सम ग्रावा (आश्रम. ५,२०)
समग्रास—सम ग्रास (आश्रम. ७,२०)
समजुनिया—सम जुनिया (आश्रम. २,९२)
समयांत—समयांत (नारदाभ्युदय २)
सम राया—समरा या (शल्य. १,७२)
समस्त नग—सम स्तनग (हरि. २६,४६)
समस्त बक—सम स्तबक (आश्रम. १,३८)
समस्त वरचील—सम स्तव रचील (गदा. १,६३)
समा नवी रमणी—समान वीरमणी (मदा. २,११)
सर्वथा नातें—सर्व थानातें (मुक्तां. ८५)
सर्वदा साचें—सर्व दासाचें (गुरु. १)
सहायास (साह्यास)—सहाय्यास (श्रमयुक्त) (गदा. १,१०१)
साधुनि करा जे—आधुनिक राजे (साधु. १४)
साधु निकीं—साधुनि कीं (साधुसत्कार ८)
साधु संगमन कारा—साधुसंगम नकारा (सत्संग ८)
सार थिता—सारथिता (कर्ण. २१,३७)
सारखा यासी—सार खायासी (कर्ण.११,८५)
सारसां गावें—सार सांगावें (आश्रम. ३,६५)
सार सार मला—सारसा रमला (आ. २,३०)
साहता शापी—हा! हता शापी (हरिश्चंद्र.५,४)
सारिखा परिस—सारि खापरिस (मुक्तां. १८)
सुखें वद या—सुखेंव दया (आश्रम. ६,२०)
सुखें वदे हा! तें—सुखेव देहातें (आ. ६,१८)
सुगति दे वधुनी—फुगति देवधुनी (साधुसत्कार १०)
सुतपातें—सुतपा तें (आश्रम. ५,१५)
सुत राजा—सुतरा जा (मदा. ५,७)
सुत सखे दास—हुत सखेदास (शल्य. १,४८)
सुतप तनयाचें—सुत पतन याचें (गदा. ३.४४)
सुता! पाहें—सुतापा हें (आश्रम. ६,६०)
सुता रानीं—सुतारानीं (गदा. १,५३)
सुदर्शनें कृत्या—सुदर्शनें कृत्या (मुक्तां. १०६)
सुधी रमला—सुधीर मला (हरिश्चंद्र. २,४१)
सुनाकदान मुनी—सुना कदा नमुनी (आश्रम. ६,२८)
सुनारी ती—सुना रीती (आश्रम. २,२२)
सुप्रजा वना येणें—सुप्रजावना येणें (आश्रम. ४,३४)
सुमते!—सुम तें (मदा. २,४१)
सुयोधन खलेश—सुयोध नखलेश (स्वर्गा.१,२)
सुयोध नगा—सुयोधन गा! (गदा. १,८९;३,३२)
सुयोधना कर्षी—सुयोध नाकर्षी (गदा.६,२९)
सुयोधना केश—सुयोध नाकेश (गदा. १,७८)
सुयोधना सत्य—सुयोध नासत्य (गदा.१,१०८)
सुयोधनें मानें—सुयोध नेमानें (कर्ण.२०,१७)
सुरतरुचि राजा!—सुरत रुचिरा जा (=ज्या) (द्रोण. १.९)
सुरथ वेगानें—सुरथवे गानें (कर्ण. ११,१४)
सुर प्रभो! जातें—क्षुरप्र भोजातें (शल्य. २,१०६)
सुरस भाटा कीं—सुरसभा टाकीं (मुक्तां. ४९)
सुरस भासेना—सुरसभा सेना (हरि. २२,४)
सुरस महिम्यातें—सुरसमहिम्यां तें (मुक्तां.४८)
सुरस मामातें—सुरसमा मातें (शल्य. १,६७)
सुरस भेला जो—सुरसभे लाजो (स्वर्गा.२,४६)
सुर साजे—सुरसा जे (तुळशीदासस्तव ४)
सुर सिकते—सुरसिक ते (स्वर्गा. २,३३)
सुरापगा याला—सुराप गायाला (स्वर्गा.१,५६)
सुरापगे! लागे—सुराप गेला गे! (आ.५,५२)
सुरीतीतें—सुरी तीतें (साधु. २०)
सुज्ञानें—सु-ज्ञानें (सन्मणि. ६)
सूर तमें—शूरतमें (कर्ण. ७,१८)



परिशिष्ट—क.



परक्या भाषेंतील शब्द.

‘मुसलमानांच्या सहवासानें आपल्या पेहेरवांत जितकी तफावत पडली तितकीच भाषेंतही पडली. ह्मणजे मूळची साधी रीत जी दोनच वस्त्रें वापरण्याची ती जाऊन तीहून डौलाचा जो सध्याचा अंगरखा, पागोटें, उपवस्त्र हा पोषाक जसा त्या लोकांपासून आपण उचलला, त्याप्रमाणेंच त्यांच्या भाषेंतून आपल्या भाषेंत कांहीं शब्द येऊन व तीस नवें वळण लागून तींत झोंकदारपणा व आवेश हे गुण मात्र जास्त आले. तेव्हां त्या भाषेच्या मिसळण्यानें आपल्या भाषेचें अहित न होतां हितच झालें, यांत संशय नाहीं. (निबंधमाला—‘मराठी भाषेची सांप्रतची स्थिति’)’

मोरोपंतांच्या काव्यांत आरबी, फारसी व हिंदुस्थानी शब्दांचा बराच भरणा आढळतो, त्याचीं उदाहरणें शोधक वाचकांकरितां येथें दिलीं आहेत. जाड टाइपांतले शब्द केकावलींतील आहेत.

१ आरबी व फारशी शब्दः—

अल्ला (आरबी)	कबीरस्तव १
इनाम (आ)	साधुरीति ५
कयास (आ)	प्रल्हादविजय १,७१
कळावा (कलाबा) (फारसी)	शांति. ४,५७
कवाड (किवाड) (फारसी)	अश्व. पर्व.५,१९
कसाई (आ)	सन्मणिमाला ५४
कागद (कागज) (फा)	द्रोणपर्व ८,१०२ रामरीति ८०
कायदा (आ)	कृष्णप्रार्थना १८
कारभारी (फा)	अश्व. पर्व १,१२१, कन्यारत्न १३.
कित्ता (आ)	आदिपर्व ३५,१६
किमया (आ)	गोपीप्रेमोद्वार
किली (फा)	ध्रुवचरित्र ३१
कोतवाल (फा)	काळभैरवस्तुति ८
खबर (आ)	पंढरीमाहात्म्य ६०
खरेदी (फा)	हरिश्चंद्र २,५८नामार्या५०

खासदार (आ) द्रोणपर्व १०,४४; केका ७
खुदा (फा) कबीरस्तव १
खंजिरी (आ) स्फुट भाग १ पद पृ० ३७०
गमजा (फा) विराट. ६, १२०
गरक (आ) शल्यपर्व. १,५४
गरीब (आ) महद्विज्ञापना ११४
गुमास्ता (फा) महद्वि ११२नरसिंहमेहता ४
गुराब (आ) उद्योग. १३,१७३
गोता (आ) अनु. पर्व २,२५
गाही (ग्वाही)(फा) द्रोण. १२,७३
चाकर (फा) रामस्तव ३, केका ६७
चाबुक (फा) द्रोण. ९,७
जरा (आ) द्रोण. १२,६७
जागा (जगह्)(फा) आर्याकेका १;कर्ण.४३,७९
जामदार (आ) विष्णुपदवकिली ३२
जामीन (आ) दत्तचरित्र ३६
जासूद (आ) नाममाहात्म्य ४१
तबक (आ) हरिवंश ३६,२६
तवा (फा) अश्व. पर्व १,८०
ताईत (आ) कृष्ण. ७८,३वनपर्व६,६१
ताजीम (आ) पांडुरंगदंडक ३५
ताफा (आ) स्त्रीपर्व ४-२९
तुरा (आ) हरिवंश १६,५१
तोबा (आ) नामदेवस्तुति ११
तंग (फा) द्रोण. ३,१५०
दरवाजा (फा) विराटपर्व ४,४
दवती (आ) भीष्मपर्व ४,२१; हरिवंश ४०,५५
दाई (फा) केका ९७
दाद (फा) सत्संगस्तव २५
दावा (आ) कृष्ण ५६,५१; केका २१
दुकान (फा) तुकारामस्तुति १; हरिवंश २३,१२५
दुशाला (फा) वामनचरित्र १९३
नकली (आ) भारत, विराट. ३,८४
नखरा (फा) कर्ण. १२,१०
नगारा (आ) रामरीति १०
नबी (फा) कबीरस्तव १
नहाक (फा) विठ्ठलप्रणिधी १८
पकडणें (फा) आदिपर्व ३४,३१
परवा (फा) कृष्ण. ७६,९
पलंग (फा) अनुशा. ७,३४
पुस्ती (फा) वन. १२,७०; कुश. ८,१
पेशवा (फा) गंगावकिली ८९
पोतें (फा) मदालसा ६,४७; गदा३,४
फकीर (आ) सन्मणिमाला १००
बरोबरी (फा) केका ६४
बर्फी (फा) पहिली आर्या
बाज (फा) (=ससाणा) महद्वि. १४१
बे (आ) आदिपर्व ३४,३१
बेजार (आ) सद्वर्णन १८
वैरागी (आ) सन्मणि. ५९
बंड (फा) अश्वमेध ३,७७
मनोरा (आ) सभापर्व १,९१
मर्द (फा) केका ४३
माल (आ) सन्मणिमाला ६१
मिरवणें (फा) हरिवंश ४,२९. केका ५१
मिरास (आ) सद्वर्णन (दोहा) २१; द्रोण. २०,७८
मुलायम (आ) ध्रुवचरित्र स्फुट.
मुसलमान (आ) सन्मणि.८०; मौसल१,१५
मेवा (फा) कृष्ण. ८१,२
मोमिन (आ) पंढरीमाहात्म्य ६६
मंदिल (आ) सन्मणि. ३२;शल्य.१,५६
रदबदली (आ) साधुरीति४८;विठ्ठलस्तो.३७
राबता (आ) विठ्ठलविज्ञापना ४२
लगाम (फा) रामरीति ९८; ब्रह्मो.३,७६
लियो (फा) आदिपर्व ३४,३१
वकील (आ) गंगावकिली, विष्णुपदवकिली

वतन (आ)	ब्रह्मो.२०,३६ सभा.१,६०
वजन (आ)	अनुशा. ५,४९
वाहवा (आ. फा)	द्रोणपर्व १,७५
शाबास (फा)	रामरीति ८२
शाल (फा)	द्रोण. १५,५२
शेरणी (फा)	भैरवस्तुती २
सराफ (आ)	पांडुरंगदंडक २१
सवदा (फा)	शांति ६.५१;हरिश्चंद्र २,४६
सवारी (फा)	दशावतारार्या १०
साज (फा)	गदाधरस्तुति ७
सोमल (आ)	गोपीगोडवा ३८,केका १०६
संदुक (आ)	कुशलवो. ३,२२
हकालो (फा)	आदिपर्व ३४,३१
हवाला (आ)	केका १५

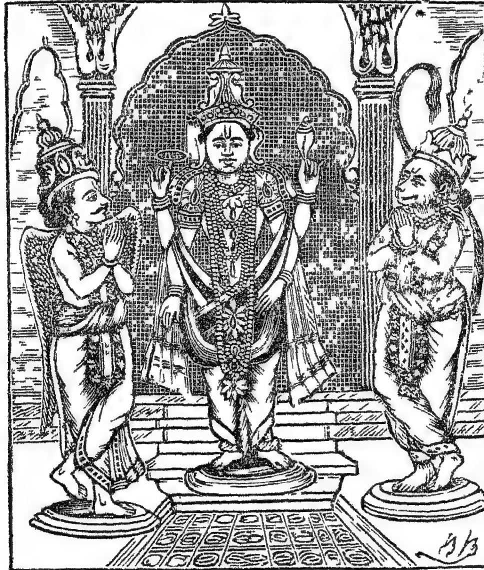
याशिवाय हिंदुस्थानी शब्दांचा भरणा पंतांच्या काव्यांत पुष्कळच आढळतो. त्यांची कांहीं उदाहरणें पुढें दिलीं आहेत:—

२ हिंदुस्थानी शब्दः—

अबीर (हिं)	कबीरस्तव ३
कवडी (कौडी)	गोपीगोडवा ३४
कहां	आदि. ३४,३१
कुणबी (कुनबी)	महद्वि. १०४
काकी	स्त्रीपर्व. ३,२६
काळीज	स्त्री. ५,२३
कोरा	रामरीति ८०
खरारा	द्रोण. १०,४५
खिचडी	सन्मणि. ५८
गजरा	हरिवंश १६,५१
गड (गड)	सन्मणिमाला ९१
गडप	द्रोण. ११,५६
गप्पा	नामसुधा. ६८
गाळी (गाली=शिवी)	हरिवंश २१,३०
घास	द्रोण. १४,३७
घोडा	रामरीति १६
चिट्ठी	मदालसा. ५,४८
चोखा	सन्मणि. ७९
छप्पर	महद्वि. ११०
जतन	सभा. १,६०
जुवा	विबुध रामा. १०१
टाणाटोणा	गोपीगोडवा. २१
टेक	इष्टकास्तुति ५
टोपी	मुक्तां. ४५
टोला	आदि. १०,६७
ठक (ठग)	आर्याकेका. १५४
डबा	गणपतिप्रार्थनादूर्वा. १३; दंडकरा. उत्तर. २९
तवा	अश्व. १,८०
तोटा	केका ९७
तोबरा	द्रोण. १०,४८
थाट	हरिवंश. १५,४५
दंगा	गंगावकिली ७९
धडाका	स्त्री. ४,१०
धामधूम	अश्व. ३,९०
धूम	पांडु. दंडक ४३
घोपटणें	केका ८४
पगडी	द्रोण. ५,२२
पठाण	सन्मणिमाला ७१
परीट	हरिवंश १६,४७
पाटील	गंगावकिली ६५
पुंजी (पूंजी)	हरिवंश १८,२१
पुरावा	द्रोण. १२,११
पेढा	हरिवंश ४,३७
पेहरावा(पहरावन)	विराट. ६,५५
बकरा	हरिवंश १७,२२
बावळें (बावला)	नामसुधा. ९२
बास (बांस)	रामरीति ८२
बेडी	गोपीगोडवा ३२
बोल	सभा. ५,४६
भगल	अनुशा. ६,३८
भाग जावेगा	आदि. ३४,३१

भाट	विश्वेश. २०
भूल	विठ्ठलस्तुति ४
महता	नरसीमेहता. १
मिठाई	पांडुरंगदंडक २
मूग (मूंग)	हरिवंश १७.६८
राऊत (रावत)	विश्वेश. ३५
लुबरा	केका ७२
लों	आदि. ३४,३१
वही	गंगास्तव २५
शेला	हरिवंश. १५,४६
सावकार (साहूकार)	नामसुधा. ६६
हातेरें (हथियार)	हरिवंश २०.७०
हाय	महद्वि. १०३
हुंडी	नरसीमेहता. ४

याशिवाय गंजी (गंज) (फा) गंगारामायण ६३, शाई (फा) (=स्याही) इत्यादि पुष्कळ मुसलमानी भाषेतील शब्द पंतकाव्यांत शोधकांस सांपडतील.



परिशिष्ट–ख.



१ शुद्ध मराठी भाषणसंप्रदायाचे मासले.

(Marathi Idioms)

'Idioms are forms of expression whether in words, grammatical construction, phraseology, &c., which is peculiar to a language'. (Ency. Britt. 11th ed.)

"सामान्य लोकांच्या प्रचारांत असणारा, विशेष रीतीनें झटकन् अर्थव्यक्ति करणारा व अमळ चित्तवेधक असा एक रचना प्रकार असतो, त्याला 'लोकोक्ति' (Idiomatic or colloquial expressions) ह्मणतात. या लोकोक्तीचाही मराठी भाषेत पुष्कळ भरणा आहे. यांचा संग्रह कमजास्त मानानें सर्व कवींनीं आपापल्या ग्रंथांतून केला आहे, पण पंतांच्या काव्यांत यांची संख्या निःसंशय अधिक सांपडेल."

(मोरोपंताचें चरित्र. ल. रा. पांगारकरकृत).

मोरोपंतांचें काव्य लांब समास व संस्कृत शब्दयोजना यांनीं निःसंशय प्रौढ झालें आहे. तथापि मोरोपंतांच्या कवितेचें खरें स्वारस्य जेथें त्यांनीं सरळ शब्दयोजना व थेट मराठी भाषणसंप्रदायाचा किंवा लोकोक्तींचा प्रयोग केला आहे तेथेंच उत्तम रीतीनें अनुभवास येतें. त्यांचा उपयोग मोरोपंतांच्या काव्यांत विशेपतः भारत, स्फुटकाव्यें इत्यादिकांत मुबलक केलेला आढळतो. तसा प्रकार इतर कवींच्या ग्रंथांतून फारसा आढळून येत नाहीं. यामुळें मोरोपंतांचें काव्य (विशेषतः त्यांचें भारत) रसाळ, जोमदार व वाचकांच्या मनास आनंदविणारें झालें आहे. त्यांचीं संपूर्ण उदाहरणें वर्गानुक्रमानें पद्धतशीर रीतीनें दिल्यास एक स्वतंत्र मोठा ग्रंथ होईल व त्याला काळही पुष्कळ लागेल. ह्मणून त्या भानगडींत न पडतां येथें कांहीं निवडक उदाहरणें तेवढीं दिलीं आहेत.

अंग (काय) राखणें (अश्व. ३.१३), अंत पाहणें (नामरसा. ६३), अंतर पडणें (पंचशती रामायण १५२), अंधवृद्धांची काठी राहूं देणें (स्त्री. ३.४६), अंधाची काठी (मंत्रभाग. १०.६२७), अपराध पोटांत घालणें (अनंतव्रत ६७), अळणी लागणें (नामरसा. २०), अश्रू पटपट गळून पडणें (शांति. ३.७), आ करणें (शांति. ५.१०), **आग** लागो (द्रोण. १.४०), आगींत तूप शिपडणें (संशयरत्न. २७), आगीत तेल घालणें (उद्योग. ४.९), आडवे पडणें, आडवे येणें (संशयरत्न. ३,९), आडवे होणें (द्रोण. १०.६२), आण वाहणें (मुक्तांजलि १०९), आनंदांत मन बुडणें (रुक्मिणी. ८९), आ पसरणें (द्रोण. ३.६४), आव धरणें (द्रोण. ४.१९), आव सोडणें (द्रोण. ३.६७), आव सोडून जाणें (द्रोण. ३.११४), आ वासणें (द्रोण. ३.६७), आशा वेडी असते (शल्य. २.३), उडवून देणें (गोपीगोडवा. २१), उपहास धुणें (द्रोण. ३.१८), उभाउभी भेटणें (आर्याकेका ४६), उर व कपाळ बडवून घेणें (भीष्म.

१.१८), उरांत धडधडणें (स्त्री. ५.१७), उराशीं कवळून धरणें (मंत्रभाग. १०.८५९), उराशीं घट्ट धरणें (मंत्रभाग. १०.९९५), उष्ण श्वास सोडणें (सावित्रीगीत २८२), **ओठ** करपणें (विराट. ६.९०), ओ झणणें (ऐषिक. २.१६), **क**चाकच बाण लागणें, (द्रोण. १२.६३), कटकट करणें (द्रोण. २.१८), कडकडून चावणें (कर्ण. १४.३) कडकडून पोटभर भेटणें (आर्याकेका ४७), कढी भात वरण घाटणें (गदा. ३.२२), कपाळी येणें (मंत्रभाग. १०.११९), करकर दांत खाणे (शल्य. २.८३), करकर दांत चावणें (प्रऱ्हादवि. १.३१), करकरून बांधणें (हरिश्चंद्र. २.८१), करकरून धरणें (हरिवंश १७.१३), कर चोळणें (पंचगतीरा. २८०), करें कर चोळणें (कर्ण. २१.१३) कर जोडणें (खोंचून) (अश्व. १.७५), (नमस्कृति) (तुकारामस्तुति), कर वळविणें (आदि. ३५.१६), कर्म ओढवणें (द्रोण. २२.२०), कलह उकरून काढणें (गदा. ५.१०), कलहानें पाठ पुरविणें (अनंतव्रत. ४०), कवडीही न फेडणें (संशय. १६), कळ पडणें (द्रोण. २१.१६१), कागाळी नेणें (शांति ५.३६), कांटा (हृदयांतला) काढणें (गदा. १.११६), कांटा (सर्वांगावर) येणें (कर्ण. १८.१), कान कोरणें (विराट. ६.१४), कानठाळी बसविणें (विराट. ४.८१), कानांत बोटें घालणें (स्त्री. ४.३६), **कानांवर हात ठेवणें** (केका १०), कांस कसणें (हरि. ४९.७९), कांस घालणें (विराट. ७.१०), कांस धरणें (आश्रम. २.७१), कांसेला लागणें (वन. १३.२७), कांसेला लावणें (द्रोण. ८.६०), काळजाला चरका लागणें (शांति. ५.२३), काळ भेटणें (द्रोण. ४.२), काळिज चिरणें (स्त्री. ५.२३), काळिज तडकणें (द्रोण. १६.४४), काळिज धडधड उडणें (विराट. १.१७८), काळिज भेदून जाणें (वन. १०.७१), कूपांत घालून दोर कापणें (कर्ण. ४०.५२), केस वांकडा न होणें (महद्विज्ञा. ७७), केसाला ढक्का न लागणें (कर्ण. ५०.३), कोनांत बसणें (अश्व. १.९३), क्रिया करणें (वन.१०.८३), क्रिया (सांग) संपादणें (सीतागीत ७६), **ख**टाटोप कशास पाहिजे (द्रोण. ११.२१), खद-खदां हंसणें (द्रोण. १५.९५), खपल्या खरवडून काढणें (अनंतव्रत. १९), खरखरा लागणें (शल्य. ४.५३), खळखळां रडणें (शल्य. ४.२६), खोगीर ठेवणें (शापानें) (आदि. १.७८), **ग**ट करणें (शल्य. २.७७), गटगट गिळणें (सीतागीत १४२), गडप करणें (द्रोण. ११.५६), गदा पडताळणें (द्रोण. १२.१५), गंध न उरणें (वन. १३.९३), गप्पा छाटणें (नामसुधा. ६८), गमजे चालविणें (विराट. ६.१२०), गरगर गदा फिरविणें (द्रोण. ३.१४१), गर्वानें फुगणें (ऐषिक. ३.१९), गळा काढणें (श्रीरामायण ३७), गळा दाटणें (शल्य. ४.६०), गळा धरणें (आर्याकेका ५८), **गळां पडणें** (केका. ३२), गळा भरून येणें (श्रीरामायण ३७), गाणें (=रडगाणें), गाणें (शल्य. ३.७४), गाल फुगविणें (स्त्री. ४.२०), गाल वाजविणें (अनुशा. ६.८१), गांवाला जाणें (उद्योग. १३.३३), **घ**टघटां पिणें (कर्ण. ४६.५८), घांसाघासी करणें (कर्ण. ४०.६३), घुट्घुट् पिणें (भस्मासुर ४१), घरें पडणें (हृदयास) (द्रोण. २३.८७), **च**ळचळ कांपणें (द्रोण. १३.४), चाड धरणें (द्रोण. २३.६०), चित्त गडबडणें (स्त्री.

३.१५), चिरडी खाणें (कर्ण. १२.९), चीड येणें (आर्याकेका १७), चुडेदान देणें (सीतागीत १५३), चूर होणें (शल्य. ३.७८), छी ह्मणणें (निरोष्ठरा. ४३), छू ह्मणतांच कुत्र्याप्रमाणें पाठीस लागणें (कर्ण. ३७.१९), जन्मतांच नख लावणें (उद्योग. ११.२३), जीवीं धरणें (वन. १३.१९), जोगी करणें (सीतागीत ८७), झट लागणें (संशय रत्न. ४५), झड घालणें (द्रोण. ११.५१), झडती देणें (कर्ण. ३३.४३), झाडाचा पाला (द्रोण. १९.१६), झाडून (यमपुरीला) धाडणें (सौप्तिक. ४.२), टकमक पाहणें (उद्योग. ७.९८), टकरा मारणें (द्रोण. ३.७३), टाणेटोणे शिकणें (गोपीगोडवा. २१), टाळा देणें (कर्ण. ४०३९), टेंक धरणें (द्रोण. १५.४१), टोपी घालणें (द्रोण. १४.७३), डोक्यावर जोडे घेणें (सीतागीत ३९), डोक्यावर दोष देणें (स्त्री. ३.४३), डोळा लवणें (कृष्ण. ८३.३५), टोळा लागणें (रुक्मिणी. ३५), डोळा वांकडा करून पाहणें (वामनच. १५९), डोळ्यांत पाणी येणें (शल्य. ४.५९), डोळयाच्या पाण्यांत भात कालविणें (उद्योग. ३.३६), डोळ्यांत कणाप्रमाणें खुपणें (आदि. ९.३९), डोळे फिरविणें (मंत्रभाग. १०.१२०), डोळे येणें (वन. १३.९७), डोळे लाल करणें (कर्ण. २१.१३), ढवाळी करणें (भीष्म.१.६१), ढुंकोन न पाहणें (वन. १२.२८), तग निघणें (कर्ण. १०.१०), तटतटां उलणें (मंत्रभाग. १०.२८०), तटतटां तुटणें (द्रोण. १०.५६), तडतड मांस तोडणें (स्त्री.५.२२), तळपट होणें (विराट.६.७८), तळहातावरचा फोड (विराट. ३.७४), ताल तोडणें (अनु. ५.४४), तोंड कोरडें पटणें (द्रोण. ३.३९), तोंडघशीं पडणें (मंत्रभाग. १०.५३७), तोंडघशीं पाडणें (हरिवंश १७.१७), तोंडचा घास पळविणें (द्रोण.३.४६), तोंड दाखविणें (सीतागीत १०९), तोंड वासणें (आश्रम. ५.३७), तोंट वासून पडणें (गदा. ५.२५), तोंड हिरवेंपिवळें होणें. (कर्ण. १६.७) तोंडांत बोट घालणें (कृष्ण. ५६.२२), तोंडाला पानें पुसणें (गोपीगो. ४०), तोंडावरचें पाणी पळविणें (द्रोण. ३.१३२), तोंडावर देणें (मंत्रभा. १०.५३७), थडीस लावणें (द्रोण. ११.१८), थरथरां कांपणें (कुशलवो. १३.२५), दगडाची साल काढणें (उद्योग. ५.२५), दरवडा घालणें (उद्योग. ३.५९), दाटून वाटून घाटून चाटून विष पिणें (गदा. १.९०), दांत खाणें (द्रोण. १९.३), दांत दाखविणें (दिव्यरामायण १२६), दांत विचकणें (रम्यरामा. उपसं. ३), दुम पुरविणें (ऋषिरामायण ३१), दुर्दैव मार्गांत आडवें पडलें (संशयरत्न. ३), दृष्टि न लागणें (द्रोण. ११.९६), देव पावला (आदि. १०.६), देह उतरून सांडणें (द्रोण. ३.११५), देह व सांजा ओवाळून सांडणें (मंत्रभाग. १०.४७९), दोष लावणें (मत्र. १०.७५७), धडधड करणें हृदय (सीतागीत ६९), धडधड पडणें (द्रोण. १.२६), धर्माच्या वाटेस लागणें (सीतागीत १२१), धिक् करणें (द्रोण. ३.९५), धूस करणें (द्रोण. १४.७४), धुम गाणें (द्रोण. ४.७२), धूळ खाणें (उद्योग. ३.१८), धैर्य करणें (द्रोण.१.१४), नखरा करणें (कर्ण. १२.१०), नाक घासणें (द्रोण. २४.२६), नाकांत काड्या घालणें (गदा. ३.२०), नाकाला चुना लावणें (द्रोण. २१.५८), नाकावर माशी बसूं न देणें (गदा. ५.२), नाहींच करणें (द्रोण. १.३५),

निकड करणें (द्रोण. १४.२३), नांव न घेणें (शांति. १.१६), नांव राखणें (द्रोण. ३.१२१), निसरड्या मार्गात दांत विचकून पडणें (आर्याकेका २९), पगडा पाडणें (कर्ण. २७.२४), पगडी उरूं न देणें (द्रोण. ५.२२), पगडी देणें (हरिवंश. १.८३), पदर पसरून मागणें (मंत्रभाग. १०.२८६), पदरीं असणें (भारत), पदरांत घेणें (वन. १२.६), पंक्तिभेद करणें (भारत), पसा सांडे तोंवर भरणें (मंत्रभाग. १०.१२१), पळ काढणें (मंत्रभाग. १०.५३७), पाऊल मागें न देणें (कर्ण. ३९.५३), पारु असणें (रुक्मिणी. ५३), पाठ करणें (शल्य. १.४४), पाठ दाखविणें (द्रोण. १२.३४), पाठ देणें (शल्य. १.५३), पाठ पुरविणें (गोपीगोडवा १४), पाठीस लागणें (शल्य. ३.१३), पाठीवर हात फिरविणें (आश्रम. २.२४), पाठोपाठ येणें (रुक्मिणी. ५३) पाणी सोडणें, सोडविणें (द्रोण. ४.२३), पाण्यांत डिखळ विरणें (नामरसायन ४१), पाण्यापेक्षां पातळ करणें (उद्योग. ३.८२), पाप डसणें (द्रोण. १२.५०), पापड पुरणपोळ्या लाटणें (गदा. ३.२२), पाय धरणें (कर्ण. ४३.९), पायावर वाहणें (हरिवंश २२.४९), पारणा करणें (वन. १३.३९), पारणें घडणें (कृष्ण. ५५.१०), पालथ्या घड्यावर पाणी (उद्योग. ४.९), पित्त उसळणें (कृष्णविजय ५६.५०), पीठ करणें (द्रोण. २.४७), पूज्य पडणें (कर्ण. ४२.४४), पोटांत भडभडणें (शल्य. ४.४९), पोटांतील पाणी न हालणें (कर्ण. ३९.४५), पोटातळीं दडणें (द्रोण. २.४८), पोटांत सांठवणें (गीताउपोद्घात १४), प्राण कंठांत गोळा होणें (कृष्ण. ८३.३५), फरफर ओढणें (हरिवंश १७.१७), फुगडी घालणें (कर्ण. ३३.३), फू करून थुंकी उडवणें (द्रोण. २.५८), बकबक करणें (द्रोण. १२.८१), बिरुद (=ब्रीद) सत्य करणें (कर्ण. ४५.१४), बोटें मोडणें (स्त्री. ४.२६), बोल फोल न करणें (सीतागीत १६६), बोल लावणें (गदा. ४.१६), भडभडा ओकणें (हरिवंश १७.२१), भरीं भरणें (विराट. ५.३३), भस्म करणें (शल्य. २.२), भाकेस गोवणें (शल्य. १.४५), भीड धरणें (शल्य. २.२५), भीड पडणें (विराट. १.९७), भोजनांत केश होणें (शांति. ४.६१), भोंवयास गांठी घालणें (उद्योग. १०.६८), मनगटें सुजवणें (महाप्रस्था. १.२२), मनास येणें (द्रोण. २२.३७), मरण विकत घेणें (विराट. ४.४४), माती करणें (विराट. १.५०), मातेरें करणें (द्रोण. १०.८१), मान कापणें (विराट. ६.४१), (विश्वास देऊन) (द्रोण. ४.४), माळ घालणें (विराट. ६.९१), मिठी घालणें (मंत्रभाग. १०.८६९), मिशांस पीळ भरणें (गंगास्तुति १०५), मिशी कुरवाळणें (द्रोण. २१.१०५), मुखपाठ करणें (विराट. ६.१२), मुठींत पारा धरणें (दतदयोदय ३८), मुंडी उडविणें (द्रोण. १७.६७), मुळमुळ रडणें (विराट. १.११३), मूठ मारणें (द्रोण. १२.५३), मृत्युमुखांत ढकलणें (द्रोण. ४.५), मोडा घालणें (वामनचरित्र १९५), मोल लावणें (गदा. ४.१६), यत्न करून पाहणें (द्रोण. ३.१२०), र आणणें (हरिवंश १७.३८), रवा काढणें (द्रोण. २२.३१), रेंच उतरणें (भीष्म. १.१६), रोकडा मृत्यु देणें (द्रोण. १४.३९), लगट करणें (वन.१.९०), लाखोली वाहणें (शांति.२.८), लात हाणणें (शल्य. १.१०), लोखंडाचे चणे खावविणें (कर्ण. ३९.१), वचनास मान देऊन येणें (विराट. ३.२५), वरचेवर झेलणें (भारत), वळणीस येणें (नामरसा. २०), वस्त्र कांद्यावर घालणें

(विराट. ३.४१), वांकोल्या दाखविणें (द्रोण. १७.६१), वाटेस लावणें (रुक्मिणी. ४९), वेणीफणी करणें (सीतागीत १६), शंख करून तोंड सुजवणें (द्रोण. ११.३६), शब्द लावणें (आश्रम. २.२४), शब्दाला मान देणें (द्रोण. २२.३१), शिगेला चढणें (उद्योग. १३.३३), शिरावर पाय देणें (गदा. ९.१२ शल्य. १.५१), शिरावर जागा असणें (आर्या केका१), शिरावर शनीची लात वसणें (द्रोण. ३.४३), शेंडी धरून ओढणें (विराट. २.५७), समाचार घेणें (सभा. ४.७६), सर पावणें (आदि. १०.१४), सर्वस्वाची किल्ली (सीतागीत १६४), सत्वास जागणें (वन. ८.२८), सासर माहेर बुडविणें (सीतागीत ४६), सुखांत पडणें (रुक्मिणी ४७), स्वर्गास पाठविणे (द्रोण. २.३०), स्वप्नांत ठाऊक नसणे (रुक्मिणी. १०), हटकून तटकर तोडणे (द्रोण. २.८४), हाक कानावर न जाणें (संशयरत्न. २०), हाक देणें (शल्य. १.७७), हाका मारणें (विराट. ५.१९), हाडें घुसळणे (हरिवंश १.८४), हात आवरणें (द्रोण. ५.८६), हात चुरावयास लावणें (गंगावकिली २३), हात चोळणें (शांति. ४.३८), हात जोडणें (=नकारार्थी) (गोपीगोडवा ६०), हात जोडणे (=शरण जाणे) (द्रोण. ३.६२), हातपाय झाडणें (मंत्रभाग. १०.१२२), हात पाहणे (वैद्यानें) (विराट. १.१२१), हात वाहणें (उद्योग. १२.५४), हातांत हात देणें (रुक्मिणी. २४), हातास येणे (कर्ण. २२.३), हार घेणें (द्रोण. २३.२५), हुरुरु करणे (द्रोण. १०.६४), हूं म्हणणे (पंचशतीरामा. २४६), 'हूं' ह्मणणेही सहन करीत नाहीत (द्रोण. ५.१६), होळी करणें (पंचशतीरामा. २८०), हृदय खवळणें (विराट. ३.१३).



परिशिष्ट–ग.



अपरिचित विशिष्ट प्रांतिक शब्द.

आप्पा (=दादा) (विराट. ६.११), आव (=अवसान) (द्रोण. १.५०), आवांका (=धैर्य) (द्रोण. १.४), **कच करणें** (=मागे सरणें) (द्रोण. १६.२१), कडबा (=धान्य कापल्यावरची गवतकाडी) (द्रोण. १८.६०), कलागत (=कलह), (रुक्मिणी. १०८), कळावा (=पायबंद) (द्रोण. १२.२६), कक्षा (=कोटी, मात्रा) (द्रोण. २३.४), कावे (=घिरट्या) (द्रोण, १५.२०), कुणगा (लपवून ठेविलेलें द्रव्य) (विराट. २.२१), कै (=कित्येक) (द्रोण. १८.४), कोचकी (=पगडी) (द्रोण. १७.३५), **गमजा** (=चेष्टा) (द्रोण. १७.३३), गबाळ (=रद्दी) (द्रोण. ३.७९), गरळ (=वेलीचें जाळे) (द्रोण. १४.१७), गळांठा (=फजीती) (श्रीरामायण १६), गावणे (=सापडणे) (द्रोण. १४.१६), **घोणस** (=सर्प) (द्रोण. २१.९६), **चवकळ** (=पुष्कळ) (द्रोण. १२.११६), चिबूड (=वाळूक) (भीष्म. १.६४), **जराक** (थोडेंही) (द्रोण. १७.४१), जेन (गाडगादी) (अनु. ७.६२), झकविणें (=फसविणें) (संशयरत्न. ३६), **ठोसर** (=जाड) (द्रोण. ८.२९), **डिवचणे** (=टोचणें) (द्रोण. १२.१०२), **तग** (=टिकाव) (द्रोण. १६.६७), तरकटून (=आवेशाला पेटून) (द्रोण. १२.११५), तरंडक (=तराडे, तारुं) (द्रोण. २०.६३), तरमुडी (=मुसांडी) (द्रोण.१७.६७), तुख (=तोष) (स्रग्विणी रामायण), **दाभण** (=जाड, लाब सुई) (अनु. ७.६२), देसवटा (=देशाटन) (वन. १०.७०), **धसणें** (=शिरणें) (द्रोण. ३.३३), **घिरडें** (=पक्वान्नविशेष) (उद्योग.१२.६४), **परसे** (=आगटी) (द्रोण. १९.७), पाटाऊ (स्त्रियांचें उंची रेशमी वस्त्र) (वन. १२.१२), पालवणे (=बोलावणें) (द्रोण. २२.३५), पोम (=आव) (शल्य. २.५८), **बधो** (=अनुकूळ होवो) (हरिवंश १८.१८), **भावोजी** (=वहिणीचा नवरा) (विराट. १.१५,६) भुडकी (=लहान विहीर) (शल्य. ३.५९). **रुख** (=वृक्ष) (स्रग्विणी रामायण), लगदा (=गोळा) (कर्ण. २१.२१), **वरमणे** (=लाजणें) (द्रोण. २३.७७), वाखर (स्रग्विणी रामायण), विहिरे (=झरे) (द्रोण. ५.७६), वेंघणें (=चढणे) (द्रोण. १५.२०), **सगडी** (=शेगडी) (श्रीरामायण १९), सटकणें (=पळून जाणें) (हरिवंश २०.३), सवे (=सवय) (द्रोण. १२.४४), सिता (=सीता, स्त्री) (द्रोण. १०.३०), सुपाक (=प्रशंसनीय) द्रोण. १.४४), सेरणी, (=शेरणी, खोबऱ्याचा प्रसाद) (स्रग्विणी रामायण), हुटहुटणे (=उत्कंठित होणें) (द्रोण. १७.५४), हुरुरु (=हुर्यो) (द्रोण. १०.६४), हेबाळी (=ओढाताण करी) (हरिवंश १७.१८), हेरणें (=पाहाणें) (द्रोण. ५.३८) इत्यादि.

परिशिष्ट–घ.



शकांची जंत्री.

कांहीं संतकवींच्या जन्ममरणांची.

(गीति) 'मागे झाले, असती आतां, होणार जे पुढें काय, ।
त्या भागवतांचे म्यां भावें साष्टांग वंदिले पाय. ॥
म्यां तों तुमचे चरण श्रीहरिजन हो ! सदैव वंदावे. ।
भगवान् प्रसन्न होतो, येणें कलिकालमोह मंदावे. ॥
(मोरोपंतकृत महद्विज्ञापना १०१,१०६)'

शालिवाहन शके

११८९ गोरोबाचा जन्म प्रभव संवत्सरीं.

११९० श्रीनिवृत्तिनाथ यांचा जन्म माघ वद्य प्रतिपदेस प्रातःकाळीं विभव संवत्सरी (वारकरी संतांच्या मतें श. ११९५ श्रीमुख संवत्सरी).

११९२ श्रीनामदेवाचा जन्म प्रमोद संवत्सरीं, कार्तिक शुक्ल एकादशी रविवारीं सूर्योदयीं.

११९३ श्रीज्ञानेश्वर महाराज यांचा जन्म श्रावण कृष्ण अष्टमी मध्यरात्री. प्रजापति संवत्सरीं (वारकऱ्यांच्या मतें श. ११९७ युवा संवत्सरीं).

११९६ श्री सोपानदेव यांचा जन्म कार्तिक शुक्ल पौर्णिमा प्रहररात्रीं भाव संवत्सरीं. (वारकऱ्यांच्या मतें श. ११९९ ईश्वर संवत्सरीं).

११९९ श्रीमुक्ताबाई यांचा जन्म अश्विन

शुक्ल प्रतिपदा मध्यान्हीं ईश्वर संवत्सरीं. (वारकऱ्यांच्या मतें श. १२०१ प्रमाथी संवत्सरीं).

१२१७ सांवता माळ्याचें निर्याण आषाढ कृष्ण चतुर्दशी मन्मथ संवत्सरीं.

१२१८ श्रीज्ञानेश्वर महाराजांची समाधि कार्तिक वद्य त्रयोदशी गुरुवारीं आळंदीस. श्रीसोपान देवाची समाधि मार्गशीर्ष वद्य त्रयोदशी सासवडास. यात्रेचा दिवस वैशाख शुक्ल एकादशी. श्रीचांगदेवांची समाधि माघ वद्य त्रयोदशीस पुणतांबे.

१२१९ मुक्ताबाईचें अंतर्धान वैशाख वद्य द्वादशी एदलाबादेस.
श्रीनिवृत्तिनाथांची समाधि ज्येष्ठ वद्य द्वादशी त्र्यंबकास यात्रोत्सवदिवस पौष कृष्ण एकादशी.

१२३१ विसोबा खेचराचें निर्याण श्रावण शुक्ल एकादशीस सौम्यसंवत्सरी.

१२३५ नरहरि सोनाराचें निर्याण माघ कृष्ण प्रतिपदेस प्रमाथि संवत्सरी.

१२४० बंका महार याचें निर्याण माघ शुक्ल पौर्णिमेस काल संवत्सरी.

१२५२ जनमित्र नागा याचें निर्याण कार्तिक शुक्ल एकादशीस शनिवारी प्रमोद संवत्सरीं.

१२६० चोखामेळा महाराची समाधि वैशाख कृष्ण पंचमीस बहुधान्य संवत्सरी.

१२७२ श्रीनामदेवरायाचे निर्याण आषाढ कृष्ण त्रयोदशीस पंढरीस विकृत संवत्सरीं.

१२९७ श्रीमोरया गोसावी यांचा जन्म माघ शुक्ल ४ विधातृ नाम संवत्सरी मध्याह्न भृगुवासर.

१३७० श्रीभानुदासजन्म पैठणास.

१४०३ श्रीचिंतामणि देव गोसावी यांचा जन्म माघ वद्य ४ विकृति संवत्सरीं चंद्रदर्शनी.

१४०५ संत सूरदास यांचा जन्म.

१४०७ गौरंगप्रभूचा जन्म फाल्गुनी पौर्णिमेस.

१४२६ श्रीजनार्दनस्वामी देशपांडे चाळीसगांवकर यांचा जन्म फाल्गुन वद्य षष्ठीस.

१४३५ भानुदासाचें निर्याण.

१४५० श्रीएकनाथ महाराजांचा जन्म.

१४७२ दत्तभक्त दासोपंताचा जन्म.

१४८३ श्रीमोरया गोसावी यांची समाधि मार्गशीर्ष वद्य षष्ठीस चिंचवडास कांहींच्या मतें शके १५७० त.

१४८५ संत सूरदास यांचें निर्याण.

१४९७ श्रीजनार्दनस्वामीचें निर्याण फाल्गुन वद्य षष्ठीस.

१५२१ श्रीएकनाथ महाराजांचें निर्याण पैठणास फाल्गुन वद्य षष्ठी.

१५३० श्रीसमर्थ रामदासस्वामींचा जांबेस जन्म रामनवमीस मध्याह्नी.

१५३० श्रीतुकाराममहाराजांचा देहूस जन्म.

१५३४ रंगनाथ स्वामी निगडीकर यांचा जन्म मार्गशीर्ष शुक्ल दशमीस रविवारी.

१५३७ दासोपंताचें निर्याण माघ वद्य षष्ठी.

१५३८ समर्थास श्रीरामाचा उपदेश श्रावण शुक्ल अष्टमी मध्यान्ही.

१५४५ कृष्णाप्पा स्वामीची समाधी माघ पौर्णिमा.

१५४७ श्रीचिंतामणि देवांचे निर्याण पौष वद्य ४ क्रोधन संवत्सर चंद्रोदयीं.

१५४९ शिवाजी महाराजाचा जन्म वैशाख शुक्ल द्वितीयेस शिवनेरीं.

१५५० बहिणाबाई तुकोबाची शिष्या हिचा जन्म.

१५५४ श्रीतुकोबास स्वप्नांत गुरूपदेश माघ शुक्ल दशमीस गुरुवारीं.
(ता. १० जानेवारी इ. स. १६३३)

१४९५-१५६० (सरासरीनें मुक्तेश्वराचा काळ)

१५६४ निजानंदस्वामी रंगनाथ स्वामीचे गुरु यांची समाधि मार्गशीर्ष कृष्ण अमावास्येस.

१५७१ श्रीतुकाराम महाराजांचें अंतर्धान फाल्गुन वद्य द्वितीयेस विरोधी संवत्सरीं सूर्योदयानंतर चार घटका दिवसास शनिवारीं.

१५८८ रघुनाथस्वामी ब्रह्मनाळकर यांचें निर्याण भाद्रपद शुक्ल द्वितीयेस वडगांवीं.

१५९४ जयराम स्वामी •वडगांवकर यांचें निर्याण भाद्रपद कृष्ण एकादशीस गुरुवारीं वडगांवीं.

१६०० वेणूबाईचें निर्याण चैत्र वद्य १४ स परळीस.

१६०२ शिवाजीचें निर्याण चैत्री पौर्णिमेस रविवार थेऊरास.

१६०३ श्रीसमर्थ रामदास स्वामीचें निर्याण माघ वद्य नवमीस शनिवारीं मध्यान्हीं.

१६०६ रंगनाथ स्वामी निगडीकर यांचें निर्याण मार्गशीर्ष कृष्ण दशमीस निगडीस रविवारीं प्रातःकाळीं.

१६१७ वामन पंडिताचें निर्याण पांडववाडीस वैशाख शुक्ल षष्ठीस रविवारीं.

१६१८ आनंदमूर्तीचें निर्याण कार्तिक शुक्ल चतुर्दशीस ब्रह्मनाळास.

१६२० अमृतरायाचा बीड परगण्यांत जन्म.
शिवदिनकेसरीचा पैठणास जन्म.

१६२२ बहिणाबाई (तुकोबाची शिष्या) हिचें निर्याण अश्विन शुक्ल प्रतिपदेस बुधवारीं.

१६३५ श्रीसमर्थशिष्य उद्धव गोसावी यांचें निर्याण फाल्गुन कृष्ण प्रतिपदेस टाकळीस.

१६३६ सोहिरोबा आंबिये यांचा सांवतवाडी प्रांतांत जन्म.
श्रीसमर्थशिष्यकल्याण गोसावी यांचें निर्याण डोमगावीं आषाढ शुक्ल त्रयोदशीस.

१६३७ महिपतिबावांचा ताहराबादेस जन्म.

१६४० प्रल्हादबावा वडवे यांचें निर्याण माघ कृष्ण ११ स बुधवारीं पंढरीस.

१६४६ आनंदतनय कवीचें प्रयाण.

१६५१ श्रीधरस्वामीचें निर्याण पंढरीस माघ कृष्ण तृतीयेस सोमवारीं.

१६५१ मोरोपंत पराडकर यांचा पन्हाळगडावर जन्म.

१६५५ अमृतरायशिष्य सिद्धेश्वर भटजीचा जन्म चैत्र शुक्ल नवमीस मंगळवारीं पुनर्वसु नक्षत्रावर.

१६५६ मध्वमुनीचें निर्याण मार्गशीर्ष शुक्ल प्रतिपदेस. (कोणी १६६९ शक मानितात).

१६६२ कृष्णदयार्णवाचें पैठणास निर्याण मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमीस.

१६६७ अनंतफंदीचा संगमनेरास जन्म. ब्रह्मेंद्रस्वामींचें निर्याण.

१६६७ अमृतरायाचें पैठणास निर्याण चैत्र शुद्ध षष्ठीस.

१६६९ रमावल्लभदासाचें निर्याण.

१६७६ देवनाथाचा वऱ्हाडांत सुरजी अंजनगांवास जन्म. नगाजी महाराज पार्डीकर नापिक (वर्धा, मध्यप्रांत) यांचा जन्म.

१६७९ सखारामबोवा अमळनेरकर यांचा जन्म.

१६८० चिदंबर दीक्षितांचा जन्म कार्तिक कृष्ण षष्ठीस.

१६८७ भक्तमंजरीमालाकारांचे गुरु सिद्धनाथ यांचा बारामतीस जन्म.

१६९० तुकाविप्राचें निर्याण.
प्रभाकर दातार शाहीर यांचा जन्म.

१६९६ शिवदिन केसरीचें पैठणास निर्याण माघ वद्य त्रयोदशीस.
अनंत पाध्ये यांचें निर्याण.

१७१० दयाळनाथ (देवनाथशिष्य) यांचा जन्म कार्तिक शुक्ल चतुर्दशीस वऱ्हाडांत.

१७११ सोहिरोबा आंबिये यांचें अंतर्धान.

१७१३ विठोबादादा चातुर्मासे यांचें निर्याण.

१७१४ सोहिरोबानाथ आंबिये यांची समाधि चैत्र शु० नवमीस.

१७१५ महिपतिबावांचें निर्याण.

१७१६ मोरोपंतांचें निर्याण चैत्र शुक्ल पौर्णिमेस मंगळवारीं बारामतीस.

१७१७ देवी अहिल्याबाई होळकरीण हिचें निर्याण श्रावण कृष्ण चतुर्दशीस.

१७२३ सिद्धेश्वर भटजीचें निर्याण वैशाख शुक्ल षष्ठीस सोमवारीं. सखारामबोवा कवाडकर यांचा जन्म ज्येष्ठ शुक्ल अष्टमीस सायंकाळीं दुर्मति संवत्सरीं.

१७२९ नारायण महाराज जालवणकर यांचा जन्म आषाढ कृष्ण पंचमीस.

१७३४ विठोबा अण्णा बेंद्रे दप्तरदार यांचा जन्म पौष कृ० अमावास्या.

१७३७ श्रीचिदंबर दीक्षिताचें निर्याण पौष शुक्ल चतुर्थीस युव संवत्सरीं. (जन्म कार्तिक कृष्ण षष्ठीस सोमवारीं).

१७३७ यशवंतराव भोसेकर देवमामलेदार यांचा जन्म भाद्रपद शुद्धांत (१३ आगष्ट १८१५).

१७३९ रघुनाथभटजी नासिककर यांचें निर्याण माघ कृष्ण चतुर्दशीस.

१७४० सखाराम बोवा अमळनेरकर यांचें निर्याण वैशाख शुक्ल चतुर्दशीस अमळनेरीं.

१७४२ रघुनाथ भटजीचें निर्याण माघ कृष्ण चतुर्दशीस नासिकास.

१७४३ माणिकप्रभूचा जन्म मार्गशीर्ष शु० १४.

१७४९ नारायण बोवा ऊर्फ पद्मनाभस्वामी धुळेकर यांचा जन्म.

१७५७ श्रीरामकृष्ण परमहंसांचा जन्म फाल्गुन शुक्ल द्वितीयेस बुधवारीं. (इ. स. २० फेब्रुवारी १८३६).
श्रीकृष्णस्वामी ऊर्फ दत्तमहाराज करवीरकर यांचा जन्म.

१७५८ दयाळनाथाचें निर्याण. सिद्धारूढ स्वामी हुबळीकर यांचा जन्म.

१७६६ ब्रह्मचैतन्य गोंदवलेकर (गणपतिबोवा घुगरदरे) यांचा जन्म माघ शुक्ल दशमीस.
नगाजी महाराज पार्डीकर यांचें निर्याण अश्विन कृष्ण द्वितीयेस.

१७७२ तैलंग स्वामीचें निर्याण पौष शुक्ल एकादशीस.

१७७५ बलभीम बोला साडेकर यांचा जन्म चैत्र शुक्ल प्रतिपदेस.

१७७६ वासुदेवानंदसरस्वती (टेंभेस्वामी) यांचा जन्म श्रावण कृष्ण पंचमी आनंद सवत्सरीं.

१७७८ गीतारहस्यकार कर्मयोगाचार्य बाळ गंगाधर टिळक यांचा जन्म आषाढ वद्य षष्ठीस (ता० २३ जुलै इ. स. १८५६).

१७८४ स्वामी विवेकानंदाचा जन्म पौष अमावास्येस (इ. स. १२ जानेवारी १८६३).

१७८७ माणिकप्रभूचें निर्याण मार्गशीर्ष शुक्ल ११ स.

१७८९ नारायण महाराज जालवणकर यांचें निर्याण आषाढ कृ० पंचमीस.

सखारामबोवा कवाडकर यांची समाधि भाद्रपद कृष्ण सप्तमीस.

१७९० महात्मा मोहनदास करमचंद्र गांधी यांचा जन्म भाद्रपद कृष्ण द्वादशीस पोरबंदरीं. (ता० २ आक्टोबर १८६९),

१७९५ स्वामी रामतीर्थ यांचा जन्म कार्तिक शुक्ल प्रतिपदेस बुधवारीं (इ. स. १५ अक्टोबर १८७३).

विठोबा अण्णा दप्तरदार यांचें निर्याण चैत्र कृष्ण एकादशीस सकाळीं.

१८०० अक्कलकोटच्या स्वामी महाराजांचें निर्याण चैत्र कृष्ण त्रयोदशीस मंगळवारीं.

१८०३ गुलाबराव महाराज माधानकर (वऱ्हाड) यांचा जन्म आषाढ शुक्लांत वृषभ संवत्सरीं.

१८०८ श्रीरामकृष्ण परमहंसाचें निर्याण (इ. स. १६ आगस्ट १८८६ रविवारीं).

१८०९ यशवंतराव महाराजांचे निर्याण मार्गशीर्ष कृ० ११ (१७ डिसेंबर १८८७),

१८२२ श्रीकृष्णस्वामी ऊर्फ दत्तमहाराज यांचें निर्याण श्रावण कृष्ण दशमीस सोमवारीं.

१८२३ पद्मनाभस्वामी धुळेकर यांचें निर्याण वैशाख शुक्ल द्वादशीस.

१८२४ विवेकानंदस्वामी (पूर्वाश्रमींचे नरेन्द्र-नाथ दत्त) यांचें निर्याण. (इ. स. ४ जुलै १९०२).

१८२८ स्वामी रामतीर्थांचें निर्याण अश्विन कृष्ण अमावास्येस (इ. स. १७ अक्टोबर १९०६).

१८३१ बळभीम बोवा साडेकर यांचें निर्याण भाद्रपद कृष्ण एकादशीस.

१८३५ ब्रह्मचैतन्य गोंदवलेकर महाराजांचें निर्याण मार्गशीर्ष कृष्ण दशमीस (इ. स. २२ डिसेंबर १९१३).

१८३६ वासुदेवानंद सरस्वती (टेंभेस्वामी) यांचें गरुडेश्वरीं निर्याण मंगळवारीं ज्येष्ठ कृष्ण अमावास्येस रात्रीं आनंदसंवत्सरीं.

१८३७ गुलाबराव महाराजांचें निर्याण भाद्रपद शुक्ल द्वादशीस.

१८३८ अण्णासाहेब पटवर्धन माघ शुक्ल एकादशीस शुक्रवारीं.

१८४२ कर्मयोगाचार्य बाळ गंगाधर टिळक यांचें निर्याण आषाढ वद्य प्रतिपदेस (ता० १ आगस्ट इ. स. १९२० मुंबईस).

परिशिष्ट–ङ.



शकांची जंत्री.

मोरोपंताच्या चरित्रांतील ठळक गोष्टींची.

(गीति) 'घाली प्रभुच्या कंठीं सन्मणिमाला रचोनि जो भावें ।
तेणेंही त्या सत्तममाळेंतचि तत्समान शोभावें. ॥

(परशुराम तात्या गोडबोले)'

१६३५ पंतांचे तीर्थरूप रामाजीपंत पराडकर कोंकणांतून पन्हाळगडावर आले.

१६५१ **मोरोपंतांचा** पन्हाळगडावर जन्म.

१६६२ रामाजीपंत बाबुजी नाईक बारामतीकर यांच्या आश्रयास गेले. मोरोपंत पन्हाळगडीं केशव पाध्ये व गणेश पाध्ये यांजपाशीं संस्कृत शिकूं लागले.

१६६५ बारामती महाल शाहूनें बाबूजी नाईकास दिल्यावरून नाईक बारामतीस राहाण्यास गेले.

१६७४ मोरोपंत बापूजी नाईकाच्या आश्रयास बारामतीस आले.

१६७४–८३ मोरोपंतांनीं संस्कृत काव्यें, नाटकें साहित्य, छंदःशास्त्र इ. यांचें अध्ययन केलें. तसेंच १०–१५ ग्रंथ स्वहस्तानें लिहून घेतले.

१६७५–१६८० मोरोपंतांनीं ब्रह्मोत्तरखंड, कुशलवचरित, मदालसाख्यान, हरिश्चंद्राख्यान, देवीमाहात्म्य इत्यादि पुराणाधारें भाषांतररूप ग्रंथ रचिले. सतींचीं गाणीं (रुक्मिणीगीत, सीतागीत, सावित्रीगीत) स्वतंत्र रचिलीं. तसेंच विष्णुपुराणाधारें प्रल्हादविजय हें सुरस काव्य शके १६८० पौष शुक्ल अष्टमीस संपविलें.

१६७६ मोरोपंतांचा प्रथम पुत्र रघुनाथ याचा जन्म.

१६८२ मोरोपंतांचा द्वितीय पुत्र रामकृष्ण याचा जन्म. मोरोपंत चातुर्मासांत पंढरीस जाऊन आले.

१६८९ माधवराव साहेब पेशवे बारामतीस बाबूजी नाईकांच्या येथें चार दिवस पाहुणे होते.

१६८०–१६९४ या चौदा वर्षांत पंतांनीं मंत्ररामायण, कृष्णविजय, अवतारमाला, वामनचरित्र, पृथुकोपाख्यान, भक्तभूषण, सुदामचरित्र, भीष्मभक्तिभाग्य, भागवती प्रकरणें, तसेंच संशयरत्नावलि, साधुसत्कार, आर्याकेकावलि, नामसुधाचपक, रामनामार्या, आर्यामुक्तामाला इ. स्फुट प्रकरणें व देवसंततीर्थक्षेत्रें यांवरील बहुतेक स्तोत्रें रचिलीं. हीं सर्वे

काव्यें त्यांनीं अनंत पाध्यांस दाखविलीं होतीं.

१६९५ राघोबा दादांची कन्या दुर्गाबाई हिचें लग्न बाबूजी नाईकाचे मध्यमपुत्र पांडुरंगराय यांच्याशीं माघ शुक्ल पौर्णिमेस पुण्यास झालें. मोरोपंत माघ महिन्यांत लग्नांत नाईकाबरोबर पुण्यास होते.

१६९८ भारताचें लेखन चैत्रीपौर्णिमेपर्यंत उद्योगपर्व संजययानपर्यंत आलें होतें.

१६९९ बाबूजी नाईकांनीं बारामतीस पंतांना घरवाडा बक्षीस दिला.

१६९३-१७०४ महाभारतरचनाकाल. गीतार्या पूर्वार्ध, ज्ञानदेवकीर्तन व अमृतमथन यांची रचना.

१७०२ बाबुजी नाईक वारले.

१७०३ आषाढ कृष्ण ९ पर्यंत शांतिपर्वाच्या कांहीं भागापर्यंत भारत लिहून तयार झालें होतें.

१७०४ भारताची चातुर्मासांत समाप्ति.

१७०४-१७०७ महद्विज्ञापना भागवती प्रकरणें, मंत्रभागवत यांची समाप्ति. कार्तिक वद्य सप्तमीस शके १७०७ त मंत्रभागवत पूर्ण झालें.

१७०७-१७१० मोरोपंतांनीं पांडुरंगराय नाईक यांच्या सांगण्यावरून नाईकांच्या मुलांत विभक्तपणाचे तंटे चालले असतां घाईघाईनें हरिवंश लिहिला व रामायणें लिहिण्यास आरंभ केला.

१७१० मोरोपंत कार्तिकांत काशीयात्रेस गेले. "मोरोपंतांचे पुत्र रामकृष्णपंत यास जगतापराव निंबाळकर व नरसिंगराव यांनीं अनुक्रमें ३० व ६० बिघे जमीन 'पंत सत्पुरुष आहेत हें जाणोन' इनाम दिली."

१७११ वैशाखांत गयायात्रा; चातुर्मास काशीस राहून काशी, गंगा इ. स्तोत्रांची, गंगावकिली, विष्णुपदवकिली या वकिल्यांची व गंगा, काशी, तीर्थ, शिव इत्यादि नामें साधून लिहिलेल्या रामायणांची रचना.

१७०७-१७१३ बहुतेक रामायणांची रचना.

१७१२ काशीयात्रा करून वैशाखांत मोरोपंत परत बारामतीस आले.

१७१५ **केकावलि,** रामरीति इत्यादि काव्यांची रचना.

१७१६ **मोरोपंतांचें निर्याण** बारामतीस चैत्रशुक्ल पौर्णिमा मंगळवार सूर्योदयीं मारुतिजन्मसमयीं.



परिशिष्ट—च.

'पवित्र तें कुळ पावन तो देश। जेथें हरीचे दास जन्म घेती ॥

(तुकाराम).'

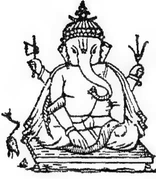
'एकेन हि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगन्धिना। वासितं तद्वनं सर्वं **सुपुत्रेण कुलं यथा** ॥

(सुभाषित).'

'त्रिसप्तभिः पिता पूतः पितृभिः सह तेऽनघ। यत्साधोऽस्य गृहे जातो भवान्वै कुलपावनः ॥

(भागवत ७.१०.१८).'

(१) मोरोपंताची वंशावळ.

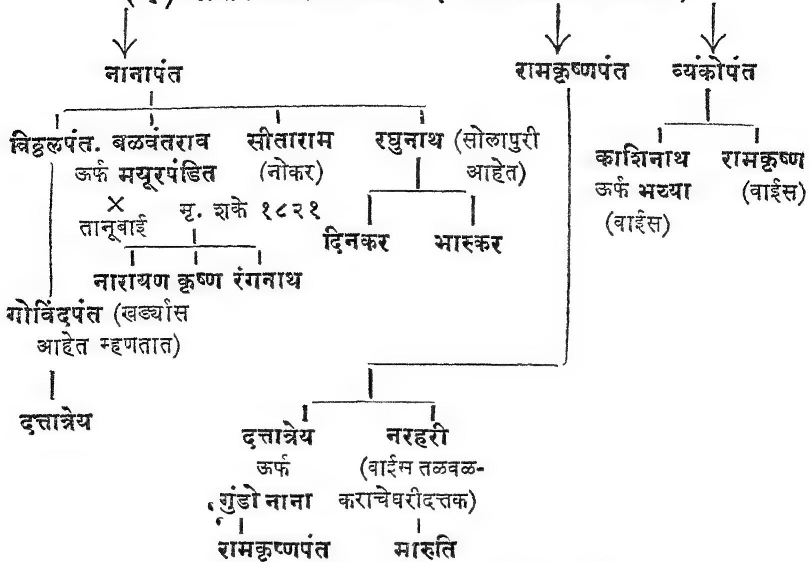


मूळ पुरुष **सोनोपंत,** त्यांचा पुत्र **बहिरोपंत,** त्यांचा पुत्र **कृष्णाजीपंत,** त्यांचा **अंताजीपंत,** त्यांचा **नरसीपंत,** त्यांचा पुत्र **रामाजीपंत,** त्यांचा **कृष्णाजीपंत,** त्यांचा **बापूजीपंत** ऊर्फ **रामाजीपंत.**

रामाजीपंत पराडकर ऊर्फ **बापूजीपंत** (गोत्र जामदग्न्य)
× **लक्ष्मीबाई**

- **सोनोपंत** (काशीत)
  - **बापूजीपंत**
    - **रावजी**
- **मोरोपंत** (बारामतीत) × **रमाबाई**
  - **रघुनाथ** (ग्वालेरींत) × जानकीबाई
    - **गोविंदराव** (उज्जयिनी)
    - **केशवभट**
  - **रामकृष्णपंत** (पंढरीत) × **सुंदराबाई** (बावा पाध्ये यांची कन्या)
    - **मोरुभाऊ** ×सरस्वतीबाई
      - **नानापंत** ↓
    - **रामचंद्रपंत** (लग्नांत वारला)
    - **विठाबाई** × लिबगेंकर नाझरे
    - **काशिनाथपंत** × गंगाबाई (किर्लोसकर)
      - **विनायकपंत**
      - **रामकृष्णपंत** ↓
      - **व्यंकोपंत** मृत्यु शके १८१४ ↓
  - **काशीनाथ** (मृत)
  - **साळुबाई** × राजापुरकर ठाकूर
  - ×**सईबाई** साताऱ्यात नांदगांवकर
  - …**बाई** × कृष्णाजीपंत देवस्थळे
- **आबाजीपंत** × सगुणाबाई
  - **बाळाजीपंत**
  - **दिनकरपंत**
  - **सदाशिवभट**
  - **लक्ष्मणराव** ऊर्फ **आप्पा**
    - **भिकाजीपंत**
      - **बाबूजीपंत** (ब्रह्मावर्ती)
    - **आवडाबाई** ×वेरवडीस **पोतदाराकडे**
    - **बहिणाबाई** ×महादाजी-काकिरडे

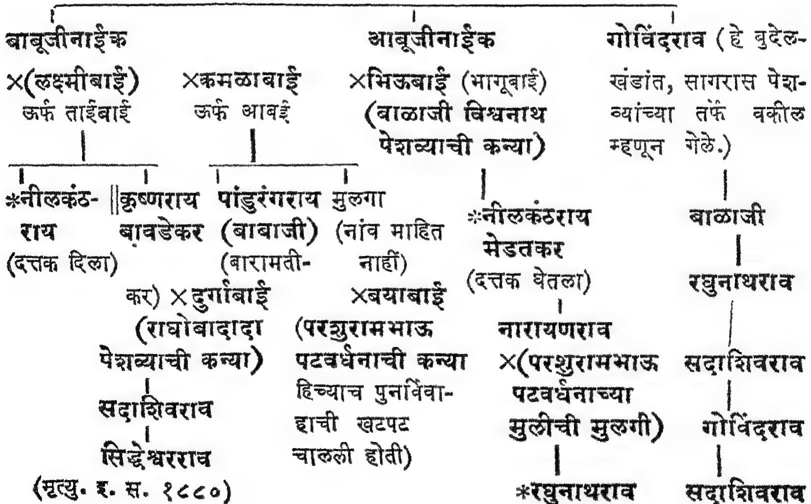
(१) मोरोपंताची वंशावळ. (मागील पृष्ठावरून समाप्त.)



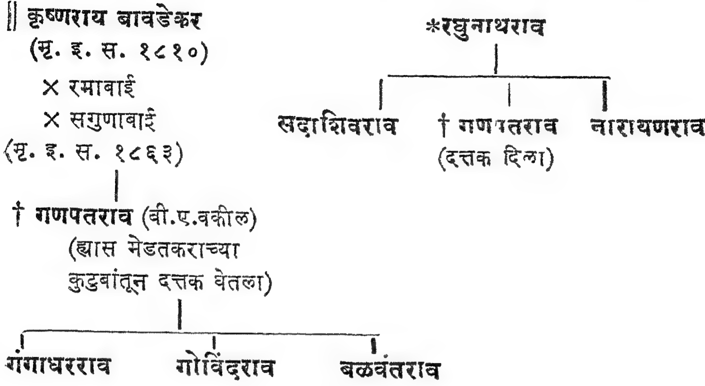
(२) मोरोपंताच्या यजमानाची वंशावळ.

केसोबानाईक जोशी (गोत्र शांडिल्य) [यांचे पूर्वज मूळचे केळशीकर जोशी. ते पुढें काशीस गेले.]
(लक्षाधीश, सराफ, काशी)

सदाशिवनाईक बारामतीकर [यांस बाळाजी विश्वनाथ पेशव्यानें काशीहून बारामतीस आणिलें.]
(मराठी राज्याचे पोतदार)

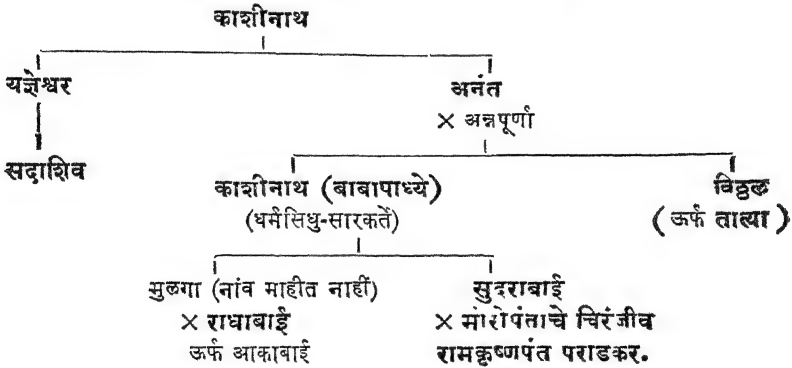


(२) मोरोपंताच्या यजमानाची वंशावळ. (मागील पृष्ठावरून समाप्त.)



☞ (३) पंताचे संबंधी पाध्ये यांची संक्षिप्त वंशावळ.

(मूळ पुरुष भास्करपाध्ये, पुढें नारो पाध्ये, त्याचे अंतोबा पाध्ये त्यांचे पुत्र काशीनाथ ऊर्फ काशी पाध्ये.)





परिशिष्ट-छ.



मोरोपंतांचा काव्यरचनोद्देश–

(गीति) 'वाखाणावें प्रेमें भगवद्यश मुनिवरा ! तुवां आतां, ।
हृदय प्रसन्न होतें प्रभुचा महिमाचि आदरें गातां. ॥
सुयश न जयांत हरिचें, चित्रहि गुणभवन कवन तें अशुचि ।
त्यांत सुमति नर न रमति पळही, वहु मानिती तया पशुची. ॥
देवाचीं ज्यामध्यें नामें सुयशोकितें प्रतिश्लोकीं ।
अघ नुरवीच अबद्धहि असतां तो वाग्विसर्ग या लोकीं. ॥

(मोरोपंतकृत मंत्रभागवत प्रथम स्कंध गी० ७–९)'

'इंग्रजी कविता मुख्यतः प्रवृत्तिपर असून मराठी कविता मुख्यतः निवृत्तिपर आहे···एकंदर मराठी कवितेचें धोरण जीवांनी विषयपराङ्मुख व्हावें; सर्वांनी भेदभाव विसरून जगदीश्वराचें अखंड भजन चालवावें; नामस्मरणानें, साधुसहवासानें व सद्गुरुसेवनानें ईश्वरप्राप्ति करून घ्यावी व इहपर साधून भवसागरांतून सर्वांसह तरून जावें हेंच आहे. मराठी कवितेचा उगम व उत्कर्ष भागवतधर्माच्या प्रसारासाठी झालेला उघड दिसतो.

(मोरोपंत वेंचे–रा. ल. रा. पांगारकरकृत)'

'स्वतःच्या काव्याबद्दल पंतांना जरी अभिमान होता तरी एकंदरीनें कथा घेऊन त्यावर आपलें बुद्धिसर्वस्व खर्च करून कविश्रेष्ठ किंवा नाटकाचार्य यांमध्यें आपणास उच्च स्थान

मिळवावें असा त्यांचा हेतु नव्हता. आपल्या कल्पनाचातुर्यानें लोकमनोरंजन करून त्यांना थक्क करून सोडावें अशा प्रकारची महत्वाकांक्षा पंताच्या मनांत प्रबलतेनें कधीही आली नाहीं. त्यांच्या लहान मोठ्या काव्यांच्या उपसंहारात्मक श्लोकांवरून परमेश्वराचें अनेकविध चरित्र तो आपल्याकडून लिहवीत असून आपलें जन्म प्रभुकीर्तनांत जावें व तें कीर्तन कवितारूपानें करावें एवढाच शुद्धभक्तिस्वरूप कवीचा हेतु स्पष्टपणें दिसतो.

(गदापर्वाचा उपोद्धात–नारायण चिंतामण केळकरकृत)'.

'पंतांनीं जी इतकी ग्रंथरचना केली, ती आपणास द्रव्यप्राप्ति व्हावी किंवा आपला नांव-लौकिक व्हावा, ह्मणून त्यांनी केली नाहीं. तर केवळ आपला उद्धार व्हावा व संस्कृताभिमानी पंडितंमन्य जिचा पदोपदी धिक्कार करीत असत अशा आपल्या मातृभाषेच्या सारस्वताची अभिवृद्धि व्हावी व तिला भारदस्तपणा येऊन तिचा दर्जा वाढावा, ह्या पवित्र हेतूनें व निरपेक्षबुद्धीनें केली आहे.

(द्रोणपर्व, आवृत्ति दुसरी. उपोद्धात–दामोदर केशव ओककृत)'.

(श्लोक) सजलजलदश्यामा ! रामा मनीं सुख दाटतें, ।
'चरितचि तुझें भावें गावें' असें मज वाटतें. ॥
जनकतनयाकांता ! शांताकृते ! रघुनायका !
पुरिव सदया ! कामा या माधवा ! वरदायका ! ॥ १ ॥

(हरिवंशाच्या पंतलिखित मूळप्रतीच्या अंतिम पृष्ठावर वरील श्लोक आहे.)

(गीति) श्रीहरिहरभक्तरसिक ह्मणति **'यथाबुद्धि पुण्ययश गावें,'** ।
यास्तव भक्तमयूरें गावुनि लिहिलें, तया नमुनि भावें. ॥ २ ॥
(हरिवंश ५४.६६)

त्वत्प्रीत्यर्थ तव सुगुणमयचि करुनि कवन वेचितों देहा, ।
उत्साह त्वत्कीर्तनरस चित्ता नवनवेचि तो दे हा. ॥ ३ ॥ (रामरीति ६८)
मज अभिमान नसे, म्यां रामपदाच्याचि वाहिल्या आणा, ।
आर्या मनीं सुजन हो ! **श्रीरामपदींच वाहिल्या आणा.** ॥४॥(राम. ७७)
जीभ विनिव, तीकरवी प्रभुचे गुण सबहुमान वानीव, ।
तापत्रयें भवीं या बा ! तापे न बहु, मानवा ! नीव ॥ ५ ॥ (राम. ७८)
हरि ज्यांचा कैवारी, त्या पांडुसुतांसि वंदितों भावें. ।
वाटे, चरित्र त्यांचें कांहीं **आपण तरावया** गावें. ॥ ६ ॥ (आदि. १.८)
श्रीरामगुरुपदाब्जीं **भावें** हें द्रोणपर्व वाहून ।
झालों प्रसादभाजन; सर्वेहि होतिल असेचि पाहून ॥ ७ ॥ (द्रोण. २४.३१)
श्रीरामसुतमयूरें शुभ 'आश्रमवासिकाख्य' हें पर्व ।
भावें समर्पिलें श्रीपतिचरणीं दोष जावया सर्व. ॥ ८ ॥
भगवद्भक्तानुज्ञा कीं गाव्या सत्कथा यथामति; तें ।
स्वीकारिलें स्वहित म्यां, नमुनि स्वसुरद्रुमा रमापतितें. ॥ ९ ॥ (भीष्मभक्तिभा.७)

(आर्या) सादर हो मन नामीं; हरिचरिताच्या करीन हो मनना मी. ।
म्हणती संत, 'तमातें हें चिंतन रवि,' घडेल संतत मातें. ॥१०॥ (कृष्णविजय १.९)

(गीति) श्रीनारदवाल्मीकीव्यासपराशर शुकादि सन्मुनि हो ! ।
नमितो, हरिगुणकीर्तन मज इतरालाहि हेंचि जन्मुनि हो. ॥११॥ (हरिवंश १.४)
श्रीहरिहरभक्त रसिक ह्मणति 'यथाबुद्धि पुण्ययश गावें,' ।
यास्तव भक्तमयूरें गाउनि लिहिलें, तयां नमुनि, भावें. ॥ १२ ॥
(हरिवंश. ५४.६६)

हें पर्वपुष्प वाहे श्रीरामपदीं मयूर तो भावें ।
शोभावें साधुशिरीं, यासि रसिकमधुपवृंद लोभावें. ॥ १३ ॥ (गदा. १०.४०)
या साधुसंगमुदिरें मुदितश्रीरामसुत मयूरकृती ।
नरनारायणविजयग्रंथ करी **व्हावया सुखी सुकृती.** ॥ १४ ॥
(कर्ण. ५०.७५)

मंत्र 'श्रीशिव जयशिव जयजय शिव' हा मनीं मुखीं राहो, ।
आमरण ग्रंथ रचुनि हरिहरचरणीं मयूर हा वाहो ॥ १५ ॥
(ब्रह्मो. २२.८२)

(श्लोक) हरिपादयुगस्मरणप्रवणें । भगवज्जनदिव्यकथाश्रवणें
चतुरें रसिकें समय क्रमणें । **सुख अन्य नसेचि भवभ्रमणें.** ॥ १६ ॥
(प्रन्हादविजय ४.४९)

श्रीमद्विष्णुपुराणसागरसुधा प्रन्हादजीची कथा, ।
साधुश्रोत्रपथासि येउनि हरी संसाररोगव्यथा, ॥
केलें सेवन यास्तव क्षणभरी आह्मां न माने पृथा, ।
हा काळव्यय चांगला इतरथा आयुष्य जातें वृथा. ॥ १७ ॥
(प्रन्हाद. ४.५०)

(गीति) हे सत्कथा यथामति रामसुतें लिहुनि वाहिली देवा; ।
प्रभुचा प्रसाद व्हाया, बुध ह्मणती, 'हेचि बहु वरी सेवा' ॥ १८ ॥
(ब्रह्मोत्तरखंड ७.५२)

लिहिली कथा यथामति हे श्रीरामात्मजें **अघ सराया,** ।
अत्युच्चपदा पावुनि गातां जनही कधीं न घसराया. ॥ १९ ॥ (ब्रह्मो. ८.११५)
हे सत्कथा यथामति लिहिली रामात्मजें **भव तराया,** ।
सद्भावें श्रोत्यात **स्वमनांतहि सद्यश अवतराया.** ॥ २० ॥
(ब्रह्मो. १५.५०)

लिहिली कथा यथामति रामसुतें **सत्प्रसाद जोडाया,** !
थोडा याहुनि सुरतरुमहिमा, लोकीं नसेचि जोडा या. ॥२१॥ (ब्रह्मो. १९.८५)

(श्लोक) श्रीशानें संकटातें हरुनि सकरुणें मुक्त केला गिरित्र, ।
संसारारातिभीतिप्रति परिहरितें हें हरीचें चरित्र. ॥
गातां आकर्णितांही भवभय शमवी, यास्तव स्वादरानें ।
भावार्थें गाइलें, हो! सदुदितरत जो, त्या मयूरेश्वरानें. ॥ २२ ॥

(भस्मासुराख्यान ४२)

(गीति) भक्तमयूरदयाघन **भगवच्चरितें जगद्धितीं करितो,** ।
हरितो तो हर हरिहर कलिमल, निजपुण्यकीर्तिला वरितो. ॥ २३ ॥

(श्रीमल्लारिविजय ७२)

मंत्रमय स्तुनि भावें भागवता, नमुनि देवदेवा, हे ।
तुलसीच रामनंदन, **'सेवा ऐशीच दे' वदे, वाहे.** ॥ २४ ॥

(मंत्रमय भा. गी० १०९)

(साकी) मंत्रगर्भ हें श्रीरामायण रामनंदनें रामीं ।
नमुनि वाहिलें **हृदय रमाया** प्रभुच्या चरितीं नामीं. ॥ २५ ॥

(मंत्रगर्भ लंकीरामायण, उपसंहार.)

वाणी पवित्र करावयास्तव, 'पृथुकोपाख्यान' सुखे, ।
लेशमात्र वर्णिलें पुनरपि मयूरेश्वरें स्वमुखें. ॥ २६ ॥

(गीति) सुयश न जयांत हरिचें, चित्रहि गुणभवन कवनतें अशुचि, ।
त्यांत सुमति नर न रमति पळहि, बहुमानिती तया पशुचि. ॥ २७ ॥

(मंत्रभागवत. १.८)

ऐशी समर्पिली हे 'मुरलीनवरत्नमालिका' देवा, ।
दुसरी मयूरकविनें कोण करावी **स्वसार्थका सेवा?** ॥ २८ ॥

(श्लोक) 'गावा भक्तमयूर मेघ भगवान् श्रीराम सीतापती ।
याच्या भव्ययशें निवे मति, भवीं अत्यंत जे तापती.' ॥
ऐसें सांगति साधु, येतिहि असे गातां यश प्रत्यय ।
स्वामीच्या स्मृतिनें घडो कलियुगीं दुर्बुद्धिला अत्यय. ॥ २९ ॥

(पूतरामायण १६४)

यदुवरकमळार्के श्रीवरें सच्छरण्यें,
सुखकर चरितें जीं येथ केलीं अगण्यें, ।
द्विज निजसख देवें तारिला त्या **चरित्रा,**
क्षणभरि तरि **गाऊं, हो स्ववाचा पवित्रा.** ॥ ३० ॥ (सुदामचरित्र. १)

मयूरेश्वरें वर्णिलें हें चरित्र, **कराया** मनोवाग्वपूतें पवित्र. ।
रसज्ञा जनाला नमस्कार आहे, कवित्वें न मद्बुद्धि गर्वासि वाहे. ॥ ३१ ॥

(भृगुचरित्र ४७)

ऐशीं नित्य सुखाकरें, सुचरितें, एनस्तमोहस्करें
जीं केलीं करुणाकरें, रघुवरें, भक्तापदातस्करें, ।
त्यांमध्यें लव वर्णिला प्रमुदितस्वांतें मयूरेश्वरें
लोकीं नाहींच आर्य कार्य दुसरें या विग्रहें नश्वरें. ॥ ३२ ॥

(कुशलवोपाख्यान. १३.९२)

श्रीरामायण वाहिलें प्रभुपदीं 'सद्भक्तसर्वस्व हें;
प्रेमें गातिल साधु तारितिल या दीना मयूरा महें; ।
त्याचा मी उपकार फेडुनि कसा उत्तीर्ण होऊं बरें ?
श्रीरामें परि दीन हीन हित जे, ते धन्य केलें वरें. ॥ ३३ ॥

न याहूनि हा अन्य कांहींच जाणें, । दुजा अर्थ चित्तांत याच्या न बाणे ॥
मयूर स्वसेवा बरी यांत पाहे, । 'सुरामायण' श्रीशरामासि वाहे. ॥ ३४ ॥
प्रभुच्या चरणीं मयूर भावें । 'प्रिय रामायण' हें नमूनि वाहे, ॥
यश हेंचि सुखें सदैव गावें, । स्थिरता याचि रसीं मनास आहे. ॥ ३५ ॥

रामचिंतनार्थ वर्णिलें मयूरसेवकें; ।
मुक्ति सुंदरी वधू वरावि याचि देवकें ॥ ३६ ॥ (पंचचामर रामायण ९१.)
सर्व भक्त मयूर हर्षदराममेघ महोदया;
हेतु या प्रभुचीच हो, दुसरी कदापि न हो दया. ।
पुष्पसें 'विबुध प्रिया'ख्य चरित्र हें शुचि पाहिलें;
वंदुनि प्रभुच्या पदांवरि मस्तकासह वाहिलें. ॥ ३७ ॥

(विबुधप्रिय रामायण)

सत्कीर्ति स्रग्धरा कन्या हे रामायणसत्कथा;
मयूरें अर्पिली रामा बरा जाया मनोव्यथा. ॥ ३८ ॥

(सत्कीर्ति रामायण)

व्हावें कृतार्थजनु जावें लयासि अघ, यावें महागतिमना,
व्यावें विशुद्ध यश, मावें जगीं न तरि, भावें दशास्यदमना ।
ध्यावें, स्वतत्व उमगावें, असेंचि शुचि, ठावें असे गुरुमुखे,
'पावें प्रभो ! ह्मणुनि नांवें सदा जपत गावें चरित्रचि सुखें. ॥ ३९ ॥

(कविप्रियरामायण १८)

पसरूनि तुला पदर, प्रणती करितों शत बा ! भगवच्चरिता. !
तव चिंतन नित्य घडो सदया ! क्षण एकहि जाउ कधीं न रिता. ।
वर हा मज दे, तरला जन कोण न कास भवांत तुझी धरिता ?
सकळांसहि तर्पिसि, अर्पिसि तूं; शुचि गांग तसें हरता हरिता. ॥ ४० ॥

(सवाईरामायण १४६)

नामातें प्रभुच्या मयूर विनवी, चित्ता भरीं या भरीं,
श्रीरामायण गाईलें तरि पुन्हा गावेंचि ऐसें करीं, ।
पापाचा परिहार फार बरवा व्यापार हा साधुनी,
गावायासि सदैव या मम मुखीं बापा! रहा साधुनी. ॥ ४१ ॥

(रम्यमंत्र रामा. उपसंहार ९)

सख्या रामनामा ! अशी एक आहे । मयूरेश्वराची तुला प्रार्थना हे, ।
पिता माय तूं, सत्य मी बाळ साचा, । नव्हे काळ साचार हा आळसाचा. ॥ ४२ ॥

(वाङ्मनःप्रार्थना ५१)

स्वल्पचि रसिकमत वदति, बहुत लिहुनि काय कवि कथा विकती ? ॥ ४३ ॥

(द्रोण. ५.५४)

(गीति) भक्तमयूरकरें हें श्रीगुरुनें लिहविलें सभापर्व, ।
कीं आर्यानंदांचें रसिकांची नित्य हो सभा पर्व. ॥ ४४ ॥

(सभापर्व. ७.९२)

ऐसें हरिहरचरित प्रेमें विस्तरभयें यथाशक्ती ।
गाउनि हरिहरचरणीं अर्पुनि मी मागतों सवी भक्ती. ॥ ४५ ॥

(कृष्ण. ८८.८५)

प्रभुचीं अमितें चरितें जरि तें यश वर्णितां नसे अंत, ।
गातां दुर्गति चुकवी सुकविप्रिय हेंचि वर्णिती संत. ॥ ४६ ॥

(कृष्णविजय अ० ८९ गी० १००)



परिशिष्ट-ज.



यजमान, यजमानपुत्रादि, गुरु, गुरुपुत्र, आप्त, स्नेही, राजकीय पुरुष इत्यादिकांविषयींचे मोरोपंतांचे निवडक उल्लेख.

(यजमान)

(गीति) श्रीमत्सदाशिवात्मज **बाबूजीनायक** प्रभु ज्ञानी, ।
'धन्य' म्हणावें ज्याला शुद्धगुणश्रवणतृप्तसुज्ञांनीं. ॥
दाता वक्ता योद्धा तेजस्वी मानधन असामान्य ।
अतुळें पितृप्रसादें मंडित देवव्रता असा मान्य. ॥
या साधुसंगमुदिरें मुदितश्रीरामसुतमयूर कृती, ।
नरनारायणविजयग्रंथ करी व्हावया सुखी सुकृती. ॥१-३॥ (कर्ण.५०.७३-७५)
जो धीरवीरहीर, श्रीसिद्धेश्वरमहादयापात्र, ।
श्रीमान् बाबूराय प्रभु, ज्याचें शोभलें यशें गात्र. ॥
भीष्मद्रोणसम गुणें, शांडिल्यासुगोत्रपद्मरवि, दे हा ।
आश्रय, शंकर जैसा उपमन्युमना, मयुरकविदेहा. ॥४-५॥ (स्वर्गा.२.३५-३६)
गंगे ! बाबूरायप्रभु भक्त तुझा; तदीय जन सर्व ।
तारावे; बहुत भली तूं, म्हणुनचि, तुज शिरीं धरी शर्व. ॥ ६ ॥
(गंगावकिली १३)
श्रीबाबूराय प्रभु माझा अत्यंत सदय अन्नद, हा ।
अर्थिजनां न म्हणो दे तैसा, तत्पास जेंवि सन्नद हा ! ॥
श्रीगायत्रीगीतागंगासिद्धेश्वरैकभक्तातें ।
या विष्णुपदा! मुक्ति न वरिल कशी गुरुपदाब्जसक्तातें? ॥ ७-८ ॥
(विष्णुपदवकिली ८-९)

(यजमानपुत्र)

शीलजितामरचंदन तन्नंदन **पांडुरंगराय**हि तें ।
यश मिरवितो, प्रजांचीं करि दशरथसा न राम काय हितें ? ॥ ९ ॥
(स्वर्गा. २.३७)

श्रीबाबूरायाचा पुत्र पहा पांडुरंगराय कवी. ।
देवि ! भगिरथनंदिनि ! तात तसा स्वयश हाहि आयकवी. ॥ १० ॥
(गंगावकिली ८)

श्रीपांडुरंगराय, प्रेक्षुनि तुज, या जगांत हो धन्य. ।
श्रीविष्णुपदा ! व्हावें यासि यश असें, तसें नको अन्य. ॥११॥ (विष्णुपद.१५)
श्रीपांडुरंगरायें मज तुज वंदावयास पाठविलें. ।
तारिति साधु, असें म्यां, त्या प्रभुनेंही मनांत आठविलें. ॥१२॥ (विष्णुपद.२)
जी पांडुरंगरायें दिधली, या सुयश दे वकीलीला. ।
ऐकोत तुझ्या हि सुखें श्रीगौरी अदिति देवकी लीला. ॥१३॥ (गंगा.१०२)
श्रीबाबूरायाचा ज्येष्ठ तनय सनय **कृष्णराय** शतें ।
सुकवींच्या वर्णावा. गंगे ! दे जे विशुद्ध या यश तें. ॥ १४ ॥ (गंगा. ७)
ऋण कृष्णराय नेवू, तुजला वाहोनि पिंड विलयातें. ।
विष्णुपदा ! नमन तुझें संसारवनीं न हिंडविल यातें. ॥ १५ ॥ (विष्णु. १४)
श्रीआबूरायाचा जो नंदन **नीलकंठराय,** सदा ।
गंगे ! मुदित असो; या वर्णूत द्विज यथेष्ट पायसदा. ॥ १६ ॥ (गंगा. ९)
दे नीलकंठराया दर्शन, देवूनि पुण्ययश गाया. ।
विष्णुपदा ! म्हणसि जना, 'करितों सर्वांहि सिद्धि वशगा या.' ॥ १७ ॥
(विष्णु. १३)

ज्या बाबूरायाची, तत्पुत्रांचीही साधली सेवा, ।
विष्णुपदा ! 'तारावे ते सर्वहि' विनवि तूं असें देवा. ॥१८॥ (विष्णु.६३)
बाबूराय तव सुतचि न शके तत्प्रेमवर्णना तुंड, ।
कुरवाळीं तदपत्यें भरुत यशें साधुकर्ण नातुंड. ॥ १९ ॥ (गंगा. ९८)

(यजमानपत्नी)

यांच्या मातासि पहा, ज्यां ताई, आबई असें म्हणती. ।
प्रणती करितों गंगे ! न करीं साधारणांत तूं गणती. ॥ २० ॥ (गंगा. १०)
स्मरती **ताईबाई**, पुण्ययशीं धरुनि लोभ, विष्णुपदा. ।
सुखवीं, जो तुज भजतो, होतोचि सुपात्र तो भविष्णुपदा ॥२१॥ (गंगा.११)
कमळाबाई सदया जननीजननीति आश्रितीं दावी. ।
बा ! विष्णुपदा ! तीतें, करुनी कृपा भेटि सर्वथा द्यावी. ॥२२॥ (विष्णु.१२)

(कारभारी)

श्रवणीं प्रेमाश्रु जया येती, तो फार आठवे **दाजी**. ।
या गति दे विष्णुपदा ! पावावी करुनि पाठ वेदा जी. ॥२३॥ (विष्णु. १६)
तारीं, यांच्या वाहति जे दाजीप्रमुख कार्यभारा, हे ।
आर्य तव भजक गंगे ! सर्वत्र तशीच आर्यभा राहे. ॥ २४ ॥ (गंगा. १४)

याचे आश्रित, सेवक, गुरु जे, तत्कामना पुरो, हित हो. ।
गंगे ! म्हणतीस सुरी व्हाया यजमान हो पुरोहित हो ! ॥२५॥ (गंगा. ११)

(गुरु)

माझ्या [illegible]वंशी झाले आहेत पुरुष, होतील. ।
[illegible]! म्हणु 'यांच्या श्रीगुरु कर्णात अमृत ओतील.' ॥२६॥ (विष्णु.४९)
[illegible] श्रीराम, श्रीमत्केशव, गणे[illegible], हरि, चवघे, ।
[illegible] प्रसाद वदला, 'गंगामृत पी यथेष्ट वारं चवघे.' ॥२७॥ (गंगा. १०९)
[illegible] **मोरोबा** [illegible], **मराळ**प्रमुख जे तया भ्राते ।
[illegible] ! दयाभ्रा ते. ॥ २८ ॥ (विष्णु. ५५)

(गुरुपुत्र)

[illegible] **सदाशिव**, **यज्ञेश्वर**, यांसि भेट दे. यश तें, ।
[illegible] गंगे ! तूंचि स्वजना अदेयदेयशतें. ॥ २९ ॥ (गंगा.७८)
[illegible] साधु सदाशिव तथापि तूं गंगे ! ।
[illegible], विघ्न न करितील सर्वथा दंगे. ॥ ३० ॥ (गंगा. ७९)
[illegible]चा जसा उपाध्याय, ।
[illegible] श्रीमद**नंताख्य** जो उपाध्याय. ॥३१॥ (स्वर्गा. २-३८)
[illegible] या कवनातें साधु विप्र भासविता, ।
[illegible] पंकरुहा जेंवि विप्रभा सविता. ॥ ३२ ॥

(स्नेही)

[illegible] **काशीनाथ** साधु या लाहो. ।
[illegible] ! प्राप्त तुझ्या [illegible] तव पायरा धुयाला, हो. ॥ ३३ ॥ (गंगा. ८०)
गंगे ! [illegible] ! **विठोबादादा** श्रीविष्णुभक्त शिवशील; ।
[illegible] काशीसमेत निवशील ॥ ३४ ॥ (गंगा. ८१)
[illegible] श्रीविठ्ठल भक्तराय कवनातें, ।
[illegible] प्रकट गुण वसंत नायक वनातें. ॥३५॥ (स्वर्गा. २.४०)
[illegible] नंदन **मराळ** [illegible] तथापि कसा ।
[illegible] ! [illegible] पंढरपुरचूतवनीं करितसे कथा पिकसा. ॥ ३६ ॥ (गंगा. ८२)
मम [illegible] सर्वहि गंगे ! तूं अच्युतप्रमुख तारीं. ।
वारीं संसारश्रम, मारा प्राचीन पातकें सारीं. ॥ ३७ ॥ (गंगा. ९७)

(आप्त)

मातेहूनि बहु दया केली, आदर करुनि **आकानें**. ।
विष्णुपदा ! तारीं गुण घ्यावेंच इचे, करुनि आ कानें. ॥३८॥ (विष्णु. ६७)
यावी सद्गति गंगे ! या माझ्या अग्रजाति(=**सोनोपंत**), जो भावें ।
तुज भेटे श्रीपुत्र त्यागुनि, जेथें अवश्य लोभावें ॥ ३९ ॥ (गंगा. ९३)

वदला प्रसन्न चित्तें, साहित्य करूनि, बंधु **आबा** 'जा'।
विष्णुपदा! तारावा, याची **सगुणा** तशीच बा! भाजा. ॥४०॥ (विष्णु. ६८)
मी जरि अशक्त निर्धन, कोपी, तरि बहु भली **रमा** भार्या.।
ईतें सद्गति दे तूं; हेचि करीं प्रथम बोध या कार्या. ॥ ४१ ॥ (विष्णु. ६९)
धन्य **श्रीराम** पिता, धन्या **लक्ष्मी** प्रसू जगीं झाली,।
आली सत्यवतीची, कीं, भारतकीर्ति सुतमुखे आली. ॥४२॥ (स्वर्गा. २.४२)
जो सज्जनरंजन सुत **दादा** मार्गांत पावला मरण,।
स्मरण करूनि करावें गंगे! त्वां तद्भवव्यथाहरण. ॥४३॥ (गंगा. १०७)

(राजकीय व्यक्ती)

जो **अमरसिंह जाधव**, या धवल प्राज्य यश जसें मातें!।
तोकहि लोकहितावह दे, जें शिवभक्तिच्या रसें माते. ॥ ४४ ॥ (गंगा.८५)
गंगे! संदर्शन दे श्रीविष्णुस्वामिभक्त **नानातें.**।
जग तोक, माय तूं, हें पूर्ण करु मनोरथासि या नातें ॥ ४५ ॥ (गंगा.८६)
यावें प्रभुप्रतापा करुनि पुढें, तुज नमावया **फडके.**।
गंगे! तव तेजें तों विघ्नांचें उर कठोरही तडके. ॥ ४६ ॥ (गंगा. ८७)
व्हावे कृतार्थ गंगे! यावे पूजावया तुला **रास्ते**।
हा स्तेनासि म्हणविते पाठिव निजदूत परचमूशास्ते. ॥ ४७ ॥ (गंगा. ८८)
यावें द्युनदि! खळांतें **श्रीमाधवराय पेशवे** दमुनी.।
व्हावें श्रीरामजयें हृष्ट जसे सर्व देश, वेद, मुनी. ॥ ४८ ॥ (गंगा. ८९)
देवि! **अहल्याबाई** यावी भेटावयासि सत्वर ती.।
तूं पुण्यकीर्ति, हे ही; गंगे! दोघीजणीहि सत्वरती. ॥ ४९ ॥ (गंगा. ९०)

या शिवाय गंगावकिलींत भिकंभट्ट, सदाशिवभट्ट, वासुदेवभट्ट, विठ्ठलभट्ट, श्रीधर उपाध्याय, भाऊभट्ट, पांडुरंगशास्त्री, वाजि जोशी, राघोपत भिडा, नाना परचुरा, विठ्ठल दिवाकर, विष्णुस्मरणीं नित्यनिरत निळोबा, मुद्गलभट्ट, शिवराम भाऊ, राघोबा जोशी, गोविंदराय, एकबोटे, विसोबा बापू, भिकाजी रामचंद्र, गोपाळभट्ट साधु, राघोपंत शेंबेकर, सदाशिव रहाळकर, गाडगिळ, कृष्णभट्ट वैष्णव, विश्वनाथसुत तात्या, हरिभक्त सदावर्ती मारडकर, मैनासुत बाळ, डुणाखे, बहिरोबादादा रामदासी, महादेवपुत्र साधु राघोबा रामदास, जनदास, गोपाळ नायक, भुजंगनायक, सदाशिवभक्त कृष्णद्विज करंदीकर, देवबा, बाबूराय कृष्ण, राघोपंत कोतवाल, आचार्य आवजी, चिमणाजीपाठक, वेंकटराय देशमुख, मायाजी देशमुख, बापू देशपांड्या, चिमाजी मैराळ, ढबू शिपी, हेंदरा सुभाना, सिदरामादि वाणी, हैबतरायादि बाबर, गोविंद गोसावी, भगवद्भक्त श्रीधर, मातुळपुत्र गंगाधर व नारायण, सज्जनरंजन दादा; यांचीं तसेंच विष्णुपदवकिलींत वरील नांवांपैकी कित्येक नांवें येऊन शिवाय विष्णुभक्त रुद्राजी, आबाजी व्यंकटेश, छोटेलाल, आपा आठवला, दामोदर, प्रभाकर, भक्तारखुमाबाई, दत्तात्रेय, यादवराय, त्र्यंबकराय, विसोबा, वासुदेव कृष्ण, बापुभट्ट जामदार, प्रभुसेवासादर

आबाजी, गंगाजी, गुणरत्नांचा डबा कमळाकर, तत्पुत्र बापू, बाबा, बाळ राघव, सदाशिव हरिदास, श्रीपति नीराजी, गंगाधर पराडकर, जगन्नाथपंत कुंटे, सन्मित्रपुत्र विठ्ठल, जगन्नाथपुत्र राम, अनंतभट्ट, हरिदास बैरागी, नारोपंत, त्र्यंबकपंत महादेवपंत, कृपाराम, बाळ हेंदरा, भिवजी खोत, कोंड दीक्षित, राजाराम, उदाराम, महादेव हरिदास, संभाजी नालबंद, हरिहरि ह्मणणारा कृष्णा गौड, रामजी, उदाजी, नरसो साबाजी, संभाजी व शंभु केदारी, खेमा, केशवपंत, मोरो मल्हार, केशव दांडेकर, गोकुळजी गयावळ इत्यादिकांचीं नांवें आलीं आहेत.



परिशिष्ट-झ.



मोरोपंतांच्या काव्यांतील निवडक ह्मणीः-

'Short sayings, sententious and true, and long since accepted as such by common consent. (Cipriano de Valera)'.

'The distinctive charactei istic of the proverb is that it is a popular current saying adopted as a convenience by the community. All the qualities said to be essential to it, shortness, sense, salt, and the rest, are subsidiary to this....But there is another quality no less essential than these, and that is general applicability. Unless a saying is capable of being applied to a variety of cases it can never become a proverb.' (*Chamber's Encyclopædia* Vol. viii, '*Prove1 bs*').

'**ह्मण** ह्मणजे ज्यांत कांहीं अनुभव किंवा ज्ञान गोविलेलें आहे, जें अल्पशब्दात्मक आहे, ज्यांत कांहीं चटकदारपणा आहे, आणि जें लोक संभाषणांत वगैरे वारंवार योजतात, असें वचन किंवा वाक्य अशी ह्मणीची शास्त्रीय व्याख्या आहे. (मराठी भाषेचे वाक्प्रचार, ह्मणी, इत्यादि-विद्याधरवामन भिडेकृत)'

पृथ्वीतील सुधारलेल्या भाषांतून ह्मणींचें (Proverbs, Sayings) महत्त्व फार मानिलें आहे. मोठे मोठे ग्रंथकार, निबंधकार, पंडित व वक्ते आपल्या लेखांतून व भाषणांतून ह्मणींचा उपयोग करून आपल्या ह्मणण्यास बळकटी आणतात व त्यामुळें त्यांची भाषणें व लेख ऐकून व वाचून श्रोत्यांच्या व वाचकांच्या मनांवर चांगला परिणाम होतो. भाषेतील ह्मणींची विचिकित्सा केली असतां राष्ट्रांतील राजकीय, सामाजिक, धार्मिक, औद्योगिक इ० विविध स्थितींचें ज्ञान होण्यास चांगलें साहाय्य होतें. मराठींतही शेंकडों ह्मणी प्रचारांत आहेत व प्रत्येक महाकवींच्या काव्यांतून त्यांचा उपयोग केलेला आढळतो. एवढेंच नव्हे तर त्यांच्याही चटकदार भाषेत वर्णिलेले अभंग, ओव्या, आर्या, श्लोक, दोहे इत्यादिकांचे कित्येक चरण ह्मणीवजा होऊन बसलेले आढळतात. पंतांच्या काव्यांतूनही

प्रचलीत ह्मणींचा उपयोग आढळून येतो व त्यांच्या आर्या व श्लोक यांतील कित्येक चरण लोकांस पसंत पडून ते त्यांचा ह्मणीप्रमाणें उपयोग करितात. त्यांच्या काव्यांतून कांहीं ह्मणी जशाच्या तशा, तर कांहीं थोड्या रूपांतरानें घातलेल्या आहेत. यांचीं थोडीं निवडक उदाहरणें तेवढीं येथें देतों.

(अ) ह्मणीः—

(१) **'आयुरन्नं प्रयच्छति'.**

ह्मणताति 'आयुरन्नं प्रयच्छति' प्राज्ञ, तेथ विश्वास. । (आर्याकेकावलि ५७)

(२) **आशा वेडी** राया ! जरि भीष्म द्रोण कर्णही खपला । (शल्य. २.३)

(३) **कडू कारलें, तुपांत तळलें, साखरेंत घोळलें, तरी तें कडूच.**

लकुच कटुचि अमृतकराकरवींही शर्करेंत घोळविला. ।

(४) **कांट्यानें कांटा काढावा.**

बापा ! कांट्यानेंचि प्राज्ञ सुखे काढिताति कांटा कीं. । (आदि. ३१.३०)

(५) **कुत्र्याचें शेंपूट नळींत सहा महिने घातलें तरी वांकडेंच.**

नीतित तसें खळमन, जेंवि नळीत श्वपुच्छ सा मास. । (उद्योग. ३.३२)

(६) **कुऱ्हाडीचा दांडा गोतास काळ.**

(गीति) नष्टनय कसा झाला दितिसुतचंदनवनांत ह्या बाळ ? ।

कंटकतरु, व्हायाला तच्छेदक विष्णुपरशुला नाळ. ॥ (मंत्रभागवत ७.४५)

(७) **कुसंतानापेक्षां निसंतान बरें.**

वंध्यत्व लिहो भाळीं विधिचें कदपत्य न करकंज लिहो. । (आश्रम. २.५३)

(८) **'कोळसा उगाळला तितका काळाच, कोळसा किती जरी उगाळला तरी तो काळाच, कोळशाची दलाली हात काळे.**

ह्या कोळसा कराया शुद्ध, धुतां व्यर्थ पाणितळ मळलें. । (द्रोण. १.२१)

तरि, वरि तसाचि आंतहि उगाळितां कोळसा; प्रयास करा. । (संशयरत्न. २४)

(९) **गरज सरो वैद्य मरो.**

गरज सरतांचि वैद्या त्यजिती; होती गळां प्रथम हार ।

आपण होउनि तृप्त, त्यजिती अतृप्त स्त्रियांसही जार. ॥

(मंत्रभागवत. १०.५९८)

(१०) **चोराच्या मनांत चांदणें.**

वाढति सद्गुण तों तो प्रेम करिति लोक पांडवावरि, तें ।

चोरासि चांदणेंसें, तापचि देते सुयोधना अरितें. ॥ (मं. भा. १०.६३७)

(११) **ज्याचा त्याचा स्वजातीकडे ओढा.**

हंसी हंस बकीं बक मिसळे, जन ओढतो स्वजातिकडे. ।

(१२) **'तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते'** (कालिदास)

न वय प्रमाण तेजस्विजनीं ह्मणती कवी न तें लटिकें. । (विराट. ६.७१)

तेजःप्रमाण आत्मा तत्त्वज्ञांस प्रमाण, न वय जनीं । (आदि. ३३.८९)

(१३) दर्यांमें खसखस.

मुनि ह्मणति, 'अर्जुनीं तव शक्ती, जसि सागरांत खसखस रे.'। (द्रोण.२.६३)

(१४) धर्मस्य सूक्ष्मा गतिः.

धर्माची गति सूक्ष्मा, केवळ तूं स्थूलदृष्टि मुग्धा ! तें। (कर्ण. ४१.३१)

(१५) नखानें काम होतें तेथें कुऱ्हाड कशाला ?

नखहि नको ज्या कार्या त्या काढावा कशास करवाल?। (भीष्म. ४.४८)

(१६) नदीचें मूळ व ऋषीचें कुळ पाहूं नये.

शूराच्या तटिनीच्या ठेविति सुगुणीं, न मन कवि प्रभवीं. (आदि. २५.६३)

(१७) निश्चयापुढें कांहीं असाध्य नाहीं.

ह्मणति 'असाध्य न कांहीं कृतनिश्चय जो तया' असें आर्य।

('निश्चयाचें बळ। तुका ह्मणे तेंचि फळ.')

(१८) पयःपानं भुजंगानां केवलं विषवर्धनम्.

अहि सोडिला जसा पय पाजुनि, मनि मणि हरूनि पोळविला।

(आदि. २७.३३)

(१९) प्राज्ञस्तोषं जनयेत् तदेव शिवपूजनं अशा उक्ति। (कर्ण. ४१.८२)

(२०) बापास बाप ह्मणत नाहीं तर चुलत्याला काका कोण ह्मणतो ?

बापासि बाप न ह्मणे ऐशाला काय होय आजोबा ?। (वन. १.६५)

(२१) 'बालादपि सुभाषितं ग्राह्यं'.

...शिशुचें ह्मणुनि न घे सूक्त जाणता कोण?। (आदि. २७.९)

(२२) मऊ लागलें ह्मणून कोंपरानें खणूं नये. (किंवा भात दडपावा.)

जों मृदु लागे तों तों दडपी शिशु फार ऊन भातातें.। (सभा. ४.३७)

(केलें काय) स्वयेंही मृदु ह्मणुनि नये भू खणों कोपरानें.।

(कृष्णविजय ७९.३०)

(२३) महाजनो येन गतः स पंथाः।

ज्या वाटेनें गेले गुरु, धरिति छात्र त्याचि वाटेतें.। (द्रोण. ११.३४)

(२४) मुद्दाम झोपेचें सोंग घेणारास जागें कोण करणार ?

जागे काय करावें निपट कपट निद्रितां जनां अन्यें ?।

(२५) मोठ्याचें दुःखही मोठेंच.

बलवत्तर विधि देतो थोराला थोरल्याचि तापातें.। (भारत.)

(२६) 'यतो धर्मस्ततो जयः'.

जिकडे सुधर्म तिकडे जय युद्धीं; न भ्रमें महाभागा !॥ (स्त्रीपर्व ४.१८)

(२७) व्याप तितका संताप.

हें सत्य अत्यबाधित, तेथें संताप जे स्थळीं व्याप.। (आर्याकेकावली ९४)

(२८) शितावरून भाताची परीक्षा.

येणेंचि सिद्धि कळली, जाणति एकेंचि बायका शीतें.। (द्रोण. १५.७१)

(२९) **शिष्यादिच्छेत्पराजयम् । पुत्रादिच्छेत्पराभवम् ॥**

प्रार्थुनि मागति पुत्रच्छात्रांपासुनि भले परिभवातें. । (उद्योग. १३.१७२)

(३०) **समुद्रांत पाषाण कोरडा.**

पाषाण आंत शुष्कचि वाहो वरि थोर सिंधुचा ओघ. ।

(मंत्रभागवत १०.९७९)

(३१) **सांपळयामध्यें वाघ सांपडे बायकामुळें मारिती खडे.**

पंजररुद्धव्याघ्राप्रति लोक विशंक मारितात खडे ।

(३२) **सोय जाणेल तो सोयरा.**

तूं सोय जाणसी बहु, दीनाचा सोयरा खरा सुभगा ! ॥ (आर्याकेका. १७१)

तो आप्तोत्तम, कामा ये जो धांवोनि अवसरीं विषमीं. (अमृत. १.६२)

A friend in need is a friend indeed!

(३३) **'हसद्भिर्यत्कृतं कर्म क्रोशद्भिरनुभूयते'** । (अश्वघोषकृत बुद्धचरित्र)

('करावें तसें भरावें')

हांसत कर्म करावें भोगावें रडत तेंचि परिणामीं. । (वन. ११.८०)

(३४) **हिरा तो हिरा, गार ती गार.**

जरि उकिरड्यांत पडला, मळला, न हिरा तथापि सामान्य. । (सन्मणिमाला २७)

आंतहि अधचि. गारा वेंचुनि टाकील कां कवि हिऱ्यातें ? । (आदि. २९ ४२)

जरि केंडिला तरि हिरा, स्तविलाचि शिरीं चढे न शिरगोळा. ।

(आदि. २८.४४)

यांशिवाय **'अतिपरिचयादवज्ञा,' 'खऱ्याला मरण नाहीं,' 'खाण तशी माती,' 'गर्वाचें घर खालीं,' 'जनीं जनार्दन,' 'टाकीचे घाव सोसल्याशिवाय देवपण येत नाहीं,' 'धर्मस्य त्वरिता गतिः,' 'परदुःख शीतल,' 'बधिरापुढें गायन,' 'बुद्धिः कर्मानुसारिणी,' 'मूर्ति तितक्या प्रकृति'** या किंवा या अर्थाच्या, तसेंच आणखी बऱ्याच संस्कृत मराठी ह्मणी पंतांच्या काव्यांत शोधकांस आढळतील. त्यामुळें पंतांच्या काव्यांत जोम व चटकदारपणा हे गुण आले आहेत.

(आ) ह्मणीवजा झालेले किंवा होण्याच्या योग्यतेचे पंतकाव्यांतील निवडक पद्यांश (किंवा पद्यें):–

(१) अरिच्याहि सद्गुणांतें प्रेमें वाखाणितात सुज्ञानी. ।

(२) जातां परार्थ ही बहु तापातें पावली सुरामा ती ।

न करील कां पित्याची दुर्गतिची माउली सुरा माती ? ॥

(३) हंसें मुक्ता नेली मग केला कलकलाट काकांनीं ।

(४) सत्पुरुषकथा अद्भुत रसदा ह्मणतों इलाच सुरगी मी. ।

(५) मरणाऱ्या रोग्याला काय करिल जाणता भला वैद्य ? ।

(६) प्रकृतिमनोहर तेथें वद न धरी कोण आदरा जीव ? ।

(७) तो आप्तोत्तम कामा ये जो धांवोनि अवसरीं विषमीं. ।
(८) खळ न वळेल झिजविला जरि करितां बोध काय सा मास. ।
(९) जें नयविरुद्ध केलें तें हृदयीं कर्म सर्वदा सलतें. ।
(१०) फारचि बरी निरयगति, परवशता शतगुणें करी जाच. ।
(११) धर्मन्यायविरोधें कोणाचेंही न इष्ट साधेल ।
(१२) चित्त प्रसन्न नसतां उपचाराग्रह नव्हेत जाचकसे ? ।
(१३) सत्कुलजांचेंचि सदा स्वकुलाचाराकडेचि मन वाहे ।
(१४) मधुतेंचि मूढ पाहे पाहत नाहीं परि प्रपातातें. ।
(१५) संत ह्मणति सप्तपदें सहवासें सख्य साधुसीं घडतें. ।
(१६) पुरुषें आरंभावें कर्म न पौरुष कदापि सोडावें. ।
(१७) छेदावा गतिहेतुहि जो विषरुग्दुष्ट निजहि तो पाय ।
(१८) दुर्गत बंधु पहातां दुःख जसें इतरथा न मातें तें ।
(१९) बहुतांचे संकल्पित जें तें होतेंचि निश्चयें कार्य. ।
(२०) संसर्गीही भोगिति, दोषीच न दोष आपुले भोगी. ।
(२१) जो शुचि तो स्वप्नींही परदारांच्या विलोकनें विटतो. ।
(२२) संसारीं पुरुषार्थप्रासादा साधुसंग हा पाया. ।
(२३) बहु जनवाद अनावर, वेग निरोधील कोण तोयाचा ?
(२४) व्यसनीं प्रवृत्ति आवरि थोर, जसा सिंधु आवरी लहरी. ।
(२५) सकळा मर्त्यजनातें सुख द्यावें नित्य नव पुरोगानें ।

वरील ह्मणीवजा वचनांपैकीं बहुतेक पंतांचीं निवडक सुभाषितें यांत विषयक्रमवार आलीं असल्यामुळें त्यांच्या स्थळांचा येथें पुनः उल्लेख केला नाहीं.

(इ) केकावलींतील ह्मणीवजा चरण किंवा चरणांश.

(१) उरे न तृण भेटतां इंगळा. (केका २)
(२) विषाद धरिला ह्मणों, न सुरभी विषक्षीर दी. । (के० ४)
(३) अलंकृतिमती सती मनिं झुरे न जों संगती. । (के० १३)
(४) व्रणार्त पशुच्या शिरावरि वनीं उभे काकसे. (के० २१)
(४) परि प्रभुहि संग्रहीं सकल वस्तुला ठेविती; ।
गुणा न ह्मणतां उणा, अधिक, आदरें सेविती. ॥ (के० २३)
(५) प्रसाद करितां नसे पळ विलंब बापा ! खरें, ।
घनांबु न पडे मुखीं उघडिल्याविना पांखरें. ॥ (के० ४०)
'God helps those who help themselves.'
(६) ...ज्यां मिळे अमृत ते न मद्या पिती. । (के० ४१)
(७) कृतांतकटकामलध्वजजरा दिसों लागली. । (के० ४६)
(८) प्रसाद करितां उणें अधिक नाठवा, हो हरि ! ॥ (के० ६५)

(९) प्रभुत्व तरि हेंच कीं कृपा दान तें, ।
स्वसाम्य यदुपार्जनें मिरविजे स्वपादानतें. ॥ (के० ६६)
(१०) प्रसाद मग काय तो, जरि निवारिना लाघवा ? । (के० ६६)
(११) उदारपण तें बरें सुखवि जें सुपात्रा सदा; ।
दिलें अमृत पन्नगा, तशि खळी कृपा त्रासदा. ॥ (के० ६९)
(१२) ···················चामरें, ।
नृपासि उचितें; वृथा, मिरविलीं जरी पामरें. । (के० ७८)
(१३) सुधा त्यजुनि कामुक प्रकट अंगनाझा पिती. । (के० ८३)
(१४) असे मृदु ह्मणोनि बा ! मज न धोपटा कापुसा. (के० ८४)
(१५) स्वतोक पितरां रुचे, जरिहि कर्दमीं रांगलें. । (के० ८५)
(१६) सकोप दिसती गुरु क्षणभरीच. । (के० ८८)
(१७) अमृत नेदिजे घातुकें (के० ९०)
(१८) कधीं न करिसी प्रभो ! भजक बाळकोपेक्षण । (के० ९२)
(१९) ·········न रिण जन्मदेचें फिटे. । (के० ९५)



परिशिष्ट-ञ.



मोरोपंताचीं निवडक सुभाषितें.*

'मोरोपंतांनीं उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षादि अर्थालंकारांची योजना आपल्या काव्यांत विपुलपणें केल्यामुळें मनोरंजनादि अनेक प्रकारचे लाभ जे अनुभवास येतात, त्यांतील सुभाषितश्रवण हा एक होय. पंतांची कविता वाचित असतां अनेक प्रकारचीं सुभाषितें अवलोकनांत येतात. संस्कृतांत ज्याप्रमाणें अनेक अभियुक्त कवीच्या ग्रंथांतून निवडक कविता घेऊन सुभाषितरत्नाकरादि ग्रंथ बनविले आहेत, त्याप्रमाणेंच मोरोपंत, वामनपंडित मुक्तेश्वर, तुकाराम, रामदास इत्यादि महाराष्ट्र कवीच्या ग्रंथांतून सुभाषितें काढल्यास महाराष्ट्रसुभाषितरत्नाकर जरी बनला नाहीं तथापि त्याची रसतरंगिणी तरी बनेल असें आह्मांस वाटतें.' (कै० म. बा. हंस)

श्रीमन्मयूरभक्तशिरोमणि कै० हंसांच्या ह्या सूचनेस अनुसरून या परिशिष्टांत मोरोपंतांच्या ग्रंथांतून कांहीं निवडक सुभाषितें दिलीं आहेत. तीं वाचकांस आवडल्यास हंसांच्या मार्मिक सूचनेप्रमाणें महाराष्ट्र रसतरंगिणीचा शोध लावून तिच्या पुण्यजलांनीं रसिकांस अभिषेक करण्यास महाराष्ट्रांत कोणी तरी पंतभक्त तयार होईल असा भरंवसा वाटतो. पुढें दिलेलीं सुभाषितें विषयानुरोधानें क्रमवार देण्याचा प्रयत्न केला आहे.

(१) व्हावें **शिवपदरतमति** न शिवाया कलियुगींहि तापानें ।
होय न भय संसारी हरभक्तिरसायनाचिया पानें. ॥ (अनु. ३.२३)

(२) हरिदास्य यल्ललाटीं धन्यचि तें जरि असेल तोक पिसें. ॥ (वन. १०.४०)

(३) **भगवत्प्रसाद** सुकवच त्याला जो साधु, काय तो मरतो ? ॥ (द्रोण. २.६४)

(४) प्रभु काय ? तद्धृत तृणहि हें जग नाशील, वांचविल यातें. ॥ (मौसल. २.८१)

(५) ईशक्षोभ करी तृणास अशनी हें बोलती जाणते. ॥ (कृष्णवि. ७८.२०)

(६) ईश्वरवरलाभ जया, तो कालावरि करील सत्तेतें. ॥ (द्रोण. १३.२४)

(७) **प्रभुयश** किति वर्णिल कवि? करुं आर्या लक्ष कोटि, ओव्याही. ॥ (द्रोण. १४.६८)
(८) जगदीशातें वंदुनि, गावें तद्विश्वतारका चरिता; ।
इतरा कर्मा घेता, जैसा मानूनि तार काच रिता. ॥ (मौसल. ५.१०९)
(९) **प्रभुसि स्मरुनि** निजावें स्वस्थ स्थापूनि शीर्ष अयंकीं. । (उद्योग. १.३०)
(१०) अमरेश मरे ईशा न विनत जो, विनत मर्त्यही न मरे. । (उद्योग. ५.८८)
(११) गुळ खोबरें विलोकुनि भलत्याहि जनासि बाळक वळावा; ।
सत्य प्रेमचि दावुनि सुज्ञें तो विश्वपाळ कवळावा; ॥ (उद्योग. ७.९)
(१२) कपटादरें वळो पर, पर परमेश्वर कसा वळेल हरी? ।
कृष्णकृपामृतनिधिची अकपटविनताकडे वळे लहरी. ॥ (उद्योग. ७.१०)
(१३) **भक्त्यर्पित** बहु, नाहीं तरि काय असे दुराप गांग भवा? ॥ (उद्योग. १३.२२)
(१४) तारिल दशाब्धिविषपा ईश्वर मारिल दशार्णवसुधापा. ॥ (उद्योग. १३.२०७)
(१५) **प्रभुचा प्रसाद** होतां सिंहीं घालील शशहि पल्याण. ॥ (भीष्म. ६.२०)
(१६) सद्गति कसी घडेना भावें केल्या प्रभूपदीं यजन? ॥ (दत्तदयोदय १६)
(१७) तातासि अपत्याची, प्रभुसि नताची तयापरिस गोडी. । (हरिवंश २२.५६)
(१८) भक्ताचा नग मानीं, तिळ तो श्रितकल्पनग निजायास. । (शल्य. १.८२)
(१९) **भगवन्महिमा** गातां होताहे कायवाङ्मनःशुद्धि. ॥ (अनंत. २)
(२०) जें **सुख** भक्तगृहीं या हरिस, तया हरिस तें नसे नाकीं. ॥ (आदि. ३७.८३)
(२१) बा! काय अशक्य तया, जो नम्र महाविभूतिधवचरणीं. ॥ (शल्य. २.१०३)
(२२) **गुरुभक्ता** बाधों दे स्वप्नींहि न अंतराय एकरद. ॥ (आश्रम. ४.२५)
(२३) गुरुभक्तांचा महिमा पावांत महागजांत हरिसा हो. । (आदि. १.६५)
(२४) श्रीकर माथां असतां, बहु काय च्छत्र? काय बा! चमर? । (द्रोण. ६.७४)
(२५) ताप सरे, पाप हरे, ऐक अरे? **सदुपदेश** सर्व खरे, ।
ह्मण रामकृष्ण शंकर गोविंद मुकुंद देवदेव हरे. ॥ (अवतार. ३०३)
(२६) ह्मणवील काय लोहाकरवींही कधिं तरी परिस हाय? ॥ (सभा. १.६९)
(२७) जरि पापदेशवासी तरि न करी पाप सर्वजन कांहीं; ।
नित्य खळांतचि असतां साधु खळांच्या गुणा शिकत नाहीं ॥ (कर्ण २९.४७)
(२८) पंकांत पद्म न मळे, काकांच्या दुर्गुणा शिके न पिक, ।
चंदन परगंध न घे, होय तृणामाजि तृणचि काय पिक? (कर्ण. २९.४८)
(२९) कीं मृत्तिकेंत मृगमदसंयोगें रसिकसेव्य वास वसे. (हरिवंश २२.१२२)
(३०) करिजे घनीं स्वमाथां पडतां भंगार्थही कृपा परिसें. ॥ (कर्ण. ४६.४६)
(३१) स्पर्शमणि सुवर्णचि करि, जरि भंगायासि लोह आदळतें. । (हरिवंश २२.५०)
(३२) न जळेचि पद्मराग ज्वलनीं, तत्तेज मूल्य बहु वाढे. ॥ (ऐषिक. ३.९)
(३३) वारिदपंक्ति जसें जळ, **सज्जनसंगति** तसेंचि सुख विखरी; ।
मातेपरिस शतगुणें सच्छरणागति जनासि सुखवि खरी. । (अश्व. १.११०)

(३४) विसरति अपकारातें, उपकारातेंचि **साधु** आठविती. ।
बा ! सोसितां न सा विति होय वपु, न सोसितां न आठ विती. ॥ (आश्रम. २.१०८)
(३५) आत्माहि उपेक्षावा, परि रक्षावाचि बोल संतांनीं; ।
झाला भक्तमनोरथ न गुरुजनीं, कीं न फोल संतांनीं. ॥ (द्रोण. ३.३)
(३६) बव्हर्थ, जनमनोहर, स्वल्पाक्षर, मधुर, सत्य बोलावें; ।
ज्या **सद्वाक्य**श्रवणें बुध श्रोत्यांचेंचि शिरहि डोलावें. ॥ (ब्रह्मो. ११.४६)
(३७) स्वल्पचि रसिकमत वदति; बहुत लिहुनि काय कवि कथा पिकती ? । (द्रोण. ५.५४)
(३८) सद्वृत्तीस खळाच्या धाकें न कदापि साधु सोडील; ।
चोरभयास्तव लोभी जन कोण बरें धनें न जोडील ? ॥ (दत्तदयो. ६५)
(३९) न मथितिल खळा, तरी हे भुज केले व्यर्थ काय हो पीन ? (द्रोण. १२.६७)
(४०) अद्भुत कर्म करुनिही बा ! न वदति एकही वच **नयज्ञ** ॥ (विराट. ४.२६)
(४१) कर्पूर **कुशल** वाहे नेत्रीं, जड लोक कांकरा वाहो. । (द्रोण. ६.८३).
(४२) बाहेर गमे नीरस परि अंतर मधुर पूत पणसाचें. (उद्योग. ७.२४)
(४३) शिरतां चित्त अधर्मीं, वारावें आपणासि साधूंनीं. ॥ (हरिवंश. ७.९)
(४४) जे **साधु** सत्पदीं स्थित, ते वाड्मात्रें न दूषिले जाती; ।
माती कोठें न मर्दें, खळ घेती करुनि आपुली माती. ॥ (हरि. ११.२९)
(४५) संत विवेकी करिती पाहुनि अधिकार जी दया साजे. ॥ (दत्त. ७०)
(४६) वेंचिति परोपकारीं सर्वस्व, अनित्य जीवितहि संत; ।
वचनाची काय कथा ? जोडिति सयश अनंत मतिमंत. (दत्त. ९०)
(४७) सत्पदरजीं जसा जन, गांगींहि न होय पट तसा धुवट, (दत्त. ९५)
(४८) सत्पुरुषचरणदर्शन होतें बुडतां भवार्णवीं बेट. (ब्रह्मो. २.२७)
(४९) हरिभक्तच्छल करितां तत्काळ उलेल कां न नीचोर ? ।
निश्चय सद्धन हरितां निजमार्ग भुलेल काननीं चोर. ॥ (विराट. १.११४)
(५०) **सत्पुरुषकथा** अद्भुतरसदा, म्हणतों हिलाच सुरभी मी. ॥ (द्रोण. १२.१६०)
(५१) सच्चरित अप्रगल्भहि हृदयहर, जसें स्वधीन तोकवच. ॥ (विराट. ३.३०)
(५२) हरिजनकथेंत शिरतां न विशंकावे शुकादि संन्यासी. ॥ (विराट. ७.२३)
(५३) स्वल्पाहि हरिकथा करि तृप्त हरिजना बुधा समग्रास; ।
ताता होय भरविला बाळें एकहि सुधासम ग्रास. ॥ (हरिवंश. १.८)
(५४) **रीति दहांची हे** कीं पहिले समजाविती लहानातें. ॥ (उद्योग. १.३८)
(५५) करुनि **विचार** करावें, जें काय मनास मानलें करणें. । (हरिवंश. २२.२४)
(५६) सुहृदुक्ता हितकामें, धनकामें जड म्हणों नये परिसा. ॥ (उद्योग. ३.३)
(५७) मृत्युपरीस **परिभवा**पासुनि बहुतचि भिती, परि भवातें ।
प्रार्थुनि मागति पुत्रच्छात्रापासुनि भले परिभवातें. ॥ (उद्योग. १३-१७२)
(५८) प्रेमभरचि विकळ करी **धीरा**, न तसा पडोनि नगहि वर. ॥ (भीष्म. १२.७५)

(५९) **ज्ञानेंचि** जना हो, न प्राप्त वयें केवळ स्थविरता हो ! ॥ (उद्योग. १०.२२)
(६०) वर्षोघ्णिसह जटिल वर, तरि काय बहुत तसें वनीं न वट ? ॥ (उद्योग. १०.३२)
(६१) **तेजःप्रमाण आत्मा,** तत्वज्ञांस प्रमाण न वय जनीं. ॥ (आदि. ३३.८९)
(६२) जेथें बळगुण तो **गुरु,** शूर बळा मानिति न कुलशीला; ।
गुणहीन शाल्मलि वृथा, लघु न म्हणति भजति साधु तुळशीला. ॥ (आदि.२५.६२)
(६३) शूराच्या तटिनीच्या ठेविति सुगुणीं, न मन कवि प्रभवीं; ।
भजति स्वगुरुत्वेंचि, न पाहति कुलशील कनकविप्रभवीं. ॥ (आदि. २५.६३)
(६४) **सत्यें** हा रवि तपतो, सत्यें भूमि प्रतिष्ठिता जाण, ।
सत्यांत पुमर्थ सकळ, सत्यचि जीवासि पवितनुत्राण. ॥ (हरिश्चंद्र. २.३२)
(६५) सत्यबहिष्कृत नर जो पितृवनसम वर्जनीयता पावे, ।
पूर्वज सर्व निवावे सत्यें, अनृतें करुनि तापावे. ॥ (हरिश्चंद्र. २.१५)
(६६) तोचि **ब्राह्मण** जेथें क्षांति, दया, दान, सत्य, तप, शील. ॥ (वन. ६.२६)
(६७) हृदय नवनीत तुमचें (=ब्राह्मणाचें), वचन क्षुर, आमुचें वचन लोणी, ।
चित्त क्षुरचि; सहज गुण लोकीं केला न अन्यथा कोणी. ॥ (आदि. २.९७)
(६८) क्षत्रियहृदय क्षुरसमं, जाणतसे द्यावयाचि हे शापा. । (आदि. २.९६)
(६९) **शुचिनिश्चयाहुनि** अधिक अमृतरस नसे परासु ताराया. ॥ (वन. १३.८९)
(७०) धनदाचीहि नसे मग अन्याची काय **निस्पृहा** परवा ? ॥ (कर्ण. २९.३१)
(७१) अप्रिय परि पथ्य असें **वक्ता श्रोता**हि दुर्लभ स्पष्ट, ।
बहु सुलभ प्रियंवद जे वाढविती चुकविती न ते कष्ट. ॥ (सभा. ४.४२)
(७२) मरण रुचे **वीराला,** न रुचे क्षणमात्र अपयशें मळणें. ॥ (कर्ण. ४०.७०)
(७३) मागें वरुण, पुढें हरि, उजवा यम, आणि यो धनद डावा, ।
किंबहुना क्षोभो जग, मानधन **कुलीन योध** न दडावा. ॥ (गदा. १.२५)
(७४) केलें स्वयें **सुपात्रीं** स्वधनाचें **दान** होय तें शिवद. ॥ (अश्व. ३.३४)
(७५) कष्टें जोडुनि, देउनि कोण अकार्यास **धन** वृथा दवडी ? (आश्रम. २.९८)
(७६) व्हावें कशास तें बा ! आप्तांचीं जें न करिल **धन** काजें ? ॥ (आश्रम. २.११०)
(७७) जाळी ज्वलन, न बोले; न वदेचि जरि प्रकाश करि तरणी; ।
न वदोनि **कुलज** पुरुषहि आले स्वयशःप्रकाश करित रणीं. ॥ (विराट. ४.३९)
(७८) कुलजांचें आयकिलें सत्यचि, मिथ्या न, चरित कानांहीं. । (हरिवंश २२.९९)
(७९) बहु कर्म करी **पंडित,** कथनावसरींहि थोडकेंच वदे. ॥ (विराट. ५.४७)
(८०) टपतो **सुकीर्तिला** बहुतर तेंवि न सुप्रभाव रमणीला. (विराट. २.५३)
(८१) शोभा यशेंचि, न असी लोकीं धृतदिव्यकुंडलें कानें; ।
जोडुनि अयश न व्हावें पितृहृदयीं अग्निकुंड लेकानें. ॥ (वन. १४.११)
(८२) मरतीच, न दाखविती पाउलहि पळोनि तोंड लेक विला; ।
म्हणती सयःकीर्तिप्रज्ञाग्रस्पर्श तोंडलें कवि स्या. ॥ (विराट. ३.५१)

(८३) वरितां अकीर्ति न रुचे रंमेसी हरिसही पळ विलास. ॥ (विराट. ३.५८.)
(८४) जसि कीर्ति सदा हरिस, न तसि आवडली नवी रमा नवरी; ।
स्वांतःपुरांतही जो गतकीर्ति करी न वीर मान वरी. ॥ (विराट. ६.१८)
(८५) कुलजा यशचि, न विधिसहि बहुमत हरिनाभकंज यापरिस. ॥ (उद्योग. ३.५१)
(८६) **राज्यश्री**मदिरेच्या निवृत्ति कवणासि हो दिली पानें? ।
त्यजिली कां भरतानें? त्यजिली तैसीच कां दिलीपानें? ॥ (उद्योग. ३.४५)
(८७) **कन्यादानीं** करि जो विघ्न, असुनि आयु, तो चचे नर कीं. ।
वदले मन्वादिस्मृतिकार, 'महापातकी पचे नरकीं.' ॥ (हरिवंश २२.१०४).
(८८) हे कन्याकृतिचिताऱ्हदिनीशत; तरति सर्व तात न या. (द्रोण. ४.४७).
(८९) विदुर म्हणे 'जो आस्तिक, गुरुवेदोक्तीं जयास विश्वास, ।
मीपण ज्यासि न शिवलें तो **पंडित**, मान्य होय विश्वास; ॥ (उद्योग. ३.९०)
(९०) दुर्लभवस्तु न वांछी, न करी जो नष्ट वस्तुचा शोक, ।
आपत्तींत न मोहे, त्या पंडित म्हणति जाणते लोक; ॥ (उद्योग. ३.९१)
(९१) गलिताहंकृति जाणे बंधा मोक्षासि, अनुभवीं चढला, ।
तो पंडित, इतर नव्हे जरि पुष्कळ सर्व शास्त्रही पढला.' ॥ (मंत्रभाग. ११.४००)
(९२) विद्या नसोनि उद्धत, धन नसतां जो उदारपण वाहे, ।
अर्थासि नीचकर्मे जो संपादावयासि जन पाहे ॥ (उद्योग. ३.९२)
(९३) नसतां लाभ यशाचा, दाटूनि करी परार्थ जो यत्न; ।
मित्रार्थीं कपट करी, तो साक्षात् **मूढजनशिरोरत्न**. ॥ (उद्योग. ३.९३)
(९४) मित्रत्व दे अमित्रा, जो मित्रद्वेष दुष्टकर्म करी, ।
तो **मूर्ख** असें म्हणती पुरुषपरीक्षा कळे जयांसि बरी. ॥ (उद्योग. ३.९४)
(९५) जो हरिपुढें करिल गज, होऊनि **मदांध** काननीं चेष्टा, ।
प्राप्ता दशा तयाला होइल तत्काळ कां न नीचेष्टा? ॥ (हरिवंश. २३.७).
(९६) **निर्वीर्यत्व चिकित्सासमर्थी** आलें चिरार्जितीं अगदीं. ॥ (उद्योग. ६.१९)
(९७) **कर्म** कसें टाकावें? जी अमृत मुखांत मायसी ओती, ।
ती सद्विद्या कर्मत्याग न करितांचि फळवती होती. ॥ (उद्योग. ३.५४)
(९८) रविशशिलोकपतिधराप्रमुख सकल कर्मसिद्ध हें समज; ।
कर्मजल तृप्तिदायक वाटे नैष्कर्म्य जेंवि पळस मज. ॥ (उद्योग. ३.५५)
(९९) **क्षत्रिय**शरीर जें जें पात्र सुशस्त्रा न आमयातें हो. ।
हा पक्वविचार, तुह्मी ह्मणतां कां व्यर्थ आम यातें हो! ॥ (भीष्म. ११.६२)
(१००) व्हावें शस्त्रेंचि रणीं वीरांचें गलित न वपु रोगानें. ॥ (भीष्म. ११.६१)
(१०१) साधूंसि बाहुजांचा मत विजय जसा, तसाचि वध मत रे; ।
निजधर्माश्रित न बुडे, निजधर्मच्युत कधीं न अधम तरे. ॥ (उद्योग. १०.४०)
(१०२) सोडावें कुलजांहीं जीवित समरीं, न शस्त्र सोडावें, ।
मोडावें आप्तवचन, अयश शरीरार्थ केंवि जोडावें? ॥ (द्रोण. २३.२३)

(१०३) जा, आहेसि क्षत्रिय, भांड, न अभिमान सांड, गा! साच।
स्वर्ग असे, काळमुखीं व्हायाचा काय सांडगासाच. ॥ (उद्योग. ९.४६)
(१०४) समरीं जरि न मरावें, तरि रोगक्षीणकाय गेहगत?।
सुक्षत्रियासुत मरति शयनावरि पडुनि काय गे! हगत? ॥ (स्त्री. ६.१९)
(१०५) शय्येवरि न पडाया योग्य, रणक्षितिवरीच हा काय. ॥ (विराट. ३.४४)
(१०६) न क्षत्रियें त्यजावी चापलता, जेवि यष्टि अंधानें. । (हरिवंश. २२.३८)
(१०७) शरशयनींच निजावें हा क्षत्रियधर्म मुख्य बहु शुद्ध, ।
बहु जन्मार्जित पुष्कळ निर्मळ पुण्यद्रुमैकफळ युद्ध. ॥ (कर्ण. २७.४५)
(१०८) आह्मां वीरांसि नसे सुगतिप्रद अन्य युद्धसम यज्ञ. ॥ (कर्ण. २७.५०)
(१०९) नसतां **धुरंधर** वृषभ बाळवृष भरें करूनि आ वांके. ॥ (द्रोण. १.४)
(११०) **मृत्यु** असो, परवंचन करुनि सुधेच्या जिणें नको पानें. ॥ (वन. ४.६३)
(१११) मृत्यु हरितसे समयीं अमरांसहि कवण मृत्युला चुकवी? (द्रोण. ४.९)
(११२) न रडति **अनित्य** जाणुनि जातां सुत दार वपुहि सवसु कृती. ॥ (द्रोण. ६.१७)
(११३) भावंड बुद्बुदांचें **वपु** अतिनिःसार मित्र फेसाचें. ॥ (द्रोण. २०.६५)
(११४) **संसृतिनदींत** कलावतीं पावोनि कोण जन्म तरे?। (द्रोण. ६.६६)
(११५) हांसत **कर्म** करावें **भोगावें** रडत तेंचि परिणामीं. ॥ (वन. ११.८०)
(११६) **दुःखावरि सुख**; शोभा मग, मुक्ता प्रथम वेध सुत नाकीं. ॥ (स्त्री. १.१९)
(११७) जातां परार्थीही बहु तापातें पावली सुरामा ती, ।
न करील कां पित्याची दुर्गतिची माउली **सुरा** माती? ॥ (विराट. १.५९)
(११८) ती श्रीची, कीर्तीची, पुण्यधींची करी सुरा माती. ॥ (हरि. ४१.३५)
(११९) वंध्येतें भजतां जरि फळ, तरि येईल यश **कुनीतीतें.** ॥ (शल्य. ३.५४)
(१२०) कोणाचें आचरतां लोकांत उरेल उर कुनीतीतें? ॥ (उद्योग. ४.१०७)
(१२१) **नीतींत** तसें खळमन, जेंवि नळींत श्वपुच्छ सा मास. ॥ (उद्योग. ३.३२)
(१२२) गुड निंदिजे तदधिके खंडे, परि कोणत्या गुणें लवणें? ॥ (कर्ण. ॥ ४२.३१)
(१२३) सिंहासि द्वेष करुनि कोण बळी वारणांत उरणारे?।
कां भ्रमलासि? कसा त्वां जय पावावा रणांत उरणा रे? ॥ (विराट. ४.४५)
(१२४) **निंदित जन** होय मलिनपटसा शुचि, रजकसाचि खळ मळतो. ॥ (गोपीगोडवा२५)
(१२५) फारचि बरी निरयगति, **परवशता** शतगुणें करी जाच. ॥ (विराट. १.५६)
(१२६) कीं **कुलवती**स गुरुजनभजन न घडतां जिणें वृथा वाटे. ॥ (आश्रम. ३.३)
(१२७) धर्मत्यागें न घडे स्त्रीस, तसें कुलजमतिसही शर्म. । (हरिवंश. २३.१८)
(१२८) साध्वीदर्शन दुर्लभ अशुचिजनाला; करीं बरें स्मरण. । (आदि. १.८६)
(१२९) प्रेमें पतिचरणासि न देउनि, दे हात तायिताला जे ।
ते स्त्री न रुचे पतिला, कीं तीतें आततायिता लाजे. ॥ (वन. ६.६१)
(१३०) पतिपरमेश्वरचरणा जी तत्सेवार्थ न नवशी करणें ।
ती **मुग्धा** कैसी गे! वळवील स्वामिमन वशीकरणें. (वन. ६.६३)

(१३१) हे स्त्री नव्हे प्रतिष्ठा तुमची, जरि हीस सोडितां पाणी, ।
'धर्मे चार्थे च' असें वदलां कां प्रथम जोडितां पाणी ? ॥ (विराट. १.१००)

(१३२) भुलविल गंधें रुचिर **स्त्री** मूर्तिमती सुरा, न राहो ती; ।
दुःसह कामविकार स्त्रीरत्नास्तव सुरा नरा होती. ॥ (विराट. १.१७७)

(१३३) पतिजवळि कलत्र न ये का हो ? सिद्धाश्रमांत सावज ये. । (उद्योग. ९.६५)
(१३४) स्त्रीयोगें पुरुषाचे साविति धर्मार्थकाम, सत्या गी. ॥ (मदालसा. २.५६)
(१३५) पळविति विवेक, वळविति, भ्रमविति नारी क्षणीं शुचितमातें. ॥ (ब्रह्मो. ७.१४)
(१३६) संतानोत्पादन जरि निंदित, केलें कशासि संतांनीं ? । (आदि. ४.८)
(१३७) जेंवि बहु **कुपुत्राचें**, न फणीचें तेंवि दे वपु त्रास. ॥ (कृष्णामाहात्म्य. ४.३४)
(१३८) गुरुमत जतन करिति जे त्यांलाचि **सुपुत्र** म्हणति जन तज्ज्ञ. ॥ (कर्ण. ३४.२१)
(१३९) वंध्यत्व लिहो भाळीं विधिचें कदपत्य न करकंज लिहो. ॥ (आश्रम. २.५३)
(१४०) सत्पुत्राला द्यावें धर्मज्ञें सर्व आपुलें वित्त. ॥ (हरिवंश. २.१०)
(१४१) विंध्यासि मेरु, मेरुसि विंध्यचि जाणे, न अन्यनग नीच. ॥ (कर्ण. २७.१७)
(१४२) समयीं स्फुरेचि **गुरुनें** जें कथिलें करुनियां कृपा शास्त्र. ॥ (कर्ण. ३३.४०)
(१४३) श्री **गुरुचे** उतराई व्हाया नमनाविणें उपाय नसे. ॥ (शांति. ४.२३)
(१४४) गुरुवर सारथि ज्याचा, त्यासी भांडुनि म्हणेल अमरप हा ! ॥ (उद्योग. १३.११८)
(१४५) 'स्वर्गपद, ब्रह्मपदहि, किंबहुना मोक्षपदहि, सोडावें, ।
श्रीगुरुपदचि ह्मणति कवि, 'सर्वस्वार्पण करूनि जोडावें. ॥ (द्रोण. २२.१५)

(१४६) सिंही नव्हेचि यद्यपि बाळनृपसुसत्कृता तथापि **शुनी.** (कर्ण. ३८.१३)
(१४७) संगासि उर्वशीच्या स्वप्नीं तरि काय गा ! ढवा लाहे ? ॥ (विराट. १.१३३)
(१४८) प्राणा मुकेल इच्छुनि सिंहीचे गजहि सबहुमान मुके; ।
कां न मुके कोल्हा ? कां छी म्हणतिल त्या **जनाधमा** न मुके ? ॥ (विराट. १.१३९)

(१४९) कोण करिल तें **प्रायश्चित्त** कसें, जें अनंत पातक वी ? । (कर्ण. ४२.५८)
(१५०) झाला पश्चात्ताप, प्रायश्चित्तांत मुख्य हा होय; ।
यापरि पवित्र न करी पापिजनां देवसिंधुचें तोय. ॥ (ब्रह्मो. २२)

(१५१) संपादिलें श्रमें जें व्यसनीं देतेंचि आश्रया **शास्त्र.** ॥ (कर्ण. ४७.१०)
(१५२) मन **मातेचें** चिंतुनि अगुणाहि मृता मुलास कळकळतें. ॥ (स्त्री. ३.९)
(१५३) न म्हणेल काय माता व्हावा लोकांत आत्मज न नीच ? ।
रक्षील, धर्म रक्षुनि, जी ती भलतीहि आत्मजननीच. ॥ (उद्योग. ११.२२)

(१५४) माता आपण भागे, लागोंचि न दे मुलासि परि वारा. (वामनचरित्र. १६०)
(१५५) पटु, **पथ्य** गदापूर्वी, पूरापूर्वींच साधिती सेतु. ॥ (स्त्री. ५.५०)
(१५६) कवि ह्मणति, 'कवन तैसें बहु उद्योगेंहि धन जसें मिळतें' ।
जितुकेंच मिळायाचें, अधिक मिळेनाचि एकही तिळ तें. ॥ (हरिवंश–मुखपृष्ठगीति)

(१५७) **वनवासें मुक्ति** अशी येऊं देऊं मनीं नको लहरी; ।
झाले मुक्त खग, हरिण, वृक, जंबुक कां वनीं न कोल, हरी? ॥ (शांति. ३.३६)
(१५८) उघडील जी **कपाट स्वर्गाचें** ती जिवीं धरावि किली. ॥ (अश्व. ३.५९)
(१५९) **ममकार** अहंकार त्यागुनि होशील मुक्त गेहींच; ।
भव, अपवर्ग, मम, न मम, हे दोघे नांदतात देहींच. ॥ (शांति. ३.५१)
(१६०) सर्वेहि मुमुक्षु म्हणतो जे **ममता** हेचि होय मम कारा; ।
यास्तव आर्यी अंजलि जोडी, सोडीच तोय ममकारा. ॥ (शांति. ३.५३)
(१६१) ज्याच्या मनांत लेशहि शेष वसे कायविषयलोभ, वनीं ।
बाह्यद्रव्य त्यागुनि गेला नाहीं, वसेचि तो भवनीं. ॥ (शांति. ३.५६)
(१६२) सत्संगशाणनिशितें विद्याशस्त्रेंकरूनियां ज्यांहीं ।
ममताद्रु तोडिला, बा! नाहीं भय या भवीं तया कांहीं. । (मदालसा. ६.३०)
(१६३) युक्तचि **मरणाराला** हितपरिणामहि न सोसवे काढा. ॥ (आदि. ९.३९)
(१६४) मरणाऱ्या रोग्याला काय करिल जाणता भला वैद्य? ॥ (सभा. २.३७)
(१६५) **पक्का बुद्धि** फुरितसे सुयशाची वृद्धि, मृत्तिका काची. ॥ (विराट. १.१००)
(१६६) बहु तप करितां तापस धन्य नव्हे, **धन्य** करिल जो जतन. ॥ (आदि. ११.८१)
(१६७) ते धन्य पुरुष धर्मी नेणति आयास, भीति, आळस जे. ॥ (द्रोण. १२.१५४)
(१६८) स्वजनपरित्राणाहुनि अन्य व्रत मत नसेचि आर्याला. ॥ (द्रोण. १३.२०)
(१६९) योग्य श्रितावनाक्षम, कीं परमासाध्यरुज हिरा खाया. ॥ (द्रोण. १३.३८)
(१७०) **पाळकतापहरत्वें** मान जडा, अन्यथा नसे व्यजना. ॥ (विराट. २.४८)
(१७१) जों जों दुर्लभ तों तों सस्पृह वित्तेच्छु होतसे **वित्तीं**. ॥ (आदि. २४.२४)
(१७२) निज **नीचपण** प्रकटवि तें श्वान भल्यावरीहि भुंकोन. ॥ (सभा. ४.८५)
(१७३) नीच व्यसनीं बुडतां निंदिति देवासि न स्वकर्मातें. ॥ (कर्ण. ४९.१)
(१७४) **कवि**स रुचे घालावें विषयसुख करूनी घोर तप डावें; ।
मूढासि आवडे बहु जेवुनि सस्त्रीक घोरत पडावें. ॥ (आश्रम. ४.३९)
(१७५) तो **काचा** स्पर्शमणि त्यागुनि जो काय वेंचितो काचा. ॥ (द्रोण. ४.६३)
(१७६) बापास बाप न ह्मणे ऐशाला काय होय आजोबा? ॥ (वन. १.६५)
(१७७) मूर्त नरक, नरकविच्या हृदयाला जो **कृतघ्न** तो गमला. ॥ (उद्योग. १०.८३)
(१७८) ती यातना न नरकीं होय, कृतघ्नास जी नरा धामीं. ॥ (उद्योग. ११.२४)
(१७९) **संसार** दो दिवसांचा यश जोडी जो कुलीन तोचि तरे, ।
ध्यावें बरें ह्मणोनि स्वपरसुखें तें कुलीनतोन्वित रे,! ॥ (सभा. १.७६)
(१८०) नांदे सुखें सदोदित संसारीं तोचि, जो अनय न करी; ।
न निघे, इतर जन बुडे व्यसनीं, पंकीं जसा अनयन करी. ॥ (द्रोण. १२.७५)
(१८१) भूत पुरुष सप्त तसे भावीही सात जण असे चवदा, ।
वदतां **अनृत** बुडवितो; याकरितां साधु हो! खरेंच वदा. ॥ (सभा. ५.१०६)

(१८२) लज्जाफलार्थ कैसा गुरुकर्णी अनृत शब्द पेरावा ? ॥ (विराट. ६.५५)
(१८३) 'जे स्वर्गी यज्ञांहीं संपादित असति रम्यतम लोक, ।
अनृतें ते सर्व बुडति,' धर्मज्ञ ह्मणति, 'घडे परम शोक. ॥' (हरिवंश. २२.१००)
(१८४) संसारीं **सुवचाचें ग्रहण**, जसें संगरांत वर्मांचें. ॥ (शल्य. १.३४)
(१८५) बहु पूज्य **सत्यवादी** त्रिजगीं उपमान त्या नसे कांहीं. ॥ (कर्ण. ४१.३६)
(१८६) धर्मन्यायोचित जें तेंचि **सुभाषण** मनास उद्धव दे. ॥ (विराट. ४.५३)
(१८७) सदसि परिस्फुट शब्दचि कार्य कराया समर्थ सदसिपरी. ॥ (उद्योग. ३.८)
(१८८) एक्या **सदुक्तिनें** जी सुगति घडे, ती न कोटि शिबिकांहीं. ॥ (भीष्म. १.८)
(१८९) सोडूं नये **प्रतिज्ञा**, धर्म नसे सत्यभाषणापरिस. ॥ (सप्तशती)
(१९०) **संसर्गीही** भोगिति, दोषीच न दोष आपुले भोगी ॥ (आदि. ३.२)
(१९१) देतो सकुटुंबाही **पापरता** नरकपात कीनाश. ॥ (विराट. २.२)
(१९२) आपणचि भारवाही बुडतो, बुडवी, कुळासि अघवाही. ॥ (वन. १२.१९)
(१९३) सोडावीच **कुसंगति** सर्वार्थदकायपाळणारांनीं; ।
स्वर्गपरें पुत्राचा बांधावा काय पाळणा रानीं ? ॥ (द्रोण. १२.१२७)
(१९४) पावेलचि भंगातें प्रभुहि, जरि धरिल पक्ष सदरीचा. ॥ (आदि. ७.४८)
(१९५) लाभ नसे, ताप वसे, ज्यामध्यें तो कुसंग सोडावा. ॥ (सभा. ७.८)
(१९६) न **कुसंततितें**, द्यावें आलिंगन ताविल्या पहारेतें. ॥ (उद्योग. ५.९५)
(१९७) साप डसे एकासचि, **सद्वेष्ट्याच्या** कुळासि पाप डसे. ॥ (वन. २.९)
(१९८) न जळेचि पद्मराग ज्वलनीं, तत्तेज मूल्य बहु वाढे. ॥ (ऐषिक. ३.९)
(१९९) व्यसनीं भल्यासि पाडी **दुष्ट**, गजा जेंवि पिहितमुख खळगा. ॥ (उद्योग. ६.६)
(२००) **भावि** प्रबळ; भ्रमतो सर्वहि, बालिश असो, असो सुकवी, ।
होणार सत्पथींही दिवसाही डोळसासही चुकवी. ॥ (आदि. ५.४६)
(२०१) होतां **स्वदैव** विपरीत, निजाप्तमित्रें ।
होताति केवळचि हेतुविना अमित्रें. ॥ (कुशलवो. ४.६१)
(२०२) ज्या लाभ हानि जेथें, नेतो बांधूनि काळ दाव्यानें. ॥ (कर्ण. ४७.६१)
(२०३) अनुकूळ काळ होतो तेव्हां बळ, बुद्धि, तेज, यश देतो; ।
प्रतिकूळ तोचि होउनि माघारें दत्त सर्वही घेतो. ॥ (मौसल. २.८४)
(२०४) अनुकूळ दैव असतां न समर्थ करावयासि हानि यम; ।
होतां तें प्रतिकूळ प्रबळहि दुर्बळचि होय हा नियम. ॥ (द्रोण. १६.१५)
(२०५) विधिहतमति जन हरवुनि करग अमृत फळहि, साधितो हिरडे. ॥ (वन. ४.२७१)
(२०६) बलवत्तर विधि देतो थोराला थोरल्याचि तापातें; ।
इंद्रप्रमुखसुरांसहि जें भावि न लंघवेचि बापा ! तें ॥ (उद्योग. २.२३)
(२०७) दैवत्यक्तासि शके न सखा, न पिता, न माय ताराया. ॥ (द्रोण. १२.७३)
(२०८) आयुष्य, भाग्य, भोग, स्त्री, पुत्र, द्रव्य, हे पदार्थ जसे ।
दैवें पावति उदया, विलयाही पावती क्षणांत तसे. ॥ (ब्रह्मो. १४.१५)

(२०९) **क्रोध** असावा समयीं, केवळ वश चित्त न क्षमेला हो. ॥ (वन. २.५२)
(२१०) धर्माधर्म हिताहित इत्यादि विचार कायसा कुपिता. (स्त्री. २.२१)
(२११) ढाळितिल जाळितिल हिमहेममया **कामकोपलोभ** नगा. ॥ (आश्रम. २.२८)
(२१२) बुडतो, सर्व बुडवितो लोभी, क्रोधी तसाचि नर कामी. ॥ (द्रोण. २२.२१)
(२१३) **कामांध** खळ करीना, अन्य करी लेश तरि विवेक पिसा. ॥ (वन. ९.१४)
(२१४) अर्थ अपरिहार्यचि जो झाला गेला वृथाचि हा **शोक**; ।
शोक सफल जरि असतां, मेल्याला उठविते न कां लोक ? ॥ (स्त्री. ३.७३)
(२१५) निजहित**लोभें** धरितो शिशुहि मुखीं एक, अन्य थान करीं. ॥ (विराट. ३.४८)
(२१६) श्रमवी, श्रमवी, मळवी, पळवी सत्कीर्तिला **दुराग्रह** रे ! ॥ (उद्योग. ९.८)
(२१७) बा ! **दुरभिमान** न बरा देइल धनपतिकरींहि खर्पर हा. ॥ (उद्योग. ९.७३)
(२१८) **कामें, कोपें, लोभें** नागविलें अमित, यांस जे भुलले; ।
यांच्या कुदृष्टिपातें तेजस्वी पुरुषहीरही उलले. ॥ (उद्योग. ९.७२)
(२१९) मी, माझें, हें घातक, लागो या आजि आग **मोहा**ला; ।
न मनांत अहंममताभ्यधिका लोकांचिया गमो हाला. ॥ (द्रोण. १.४०)
(२२०) बहु **काम, कोप, लोभ**चि खर; न प्रळयाग्नि, तपन, यम राया ! (द्रोण.१५.३३)
(२२१) येइल बहूपचारें वंध्योरसिजासि काय ओलावा ? ॥ (उद्योग. १.२०)
(२२२) होईल श्रीहंसी हे हंस त्यजुनि वायसा मान्य ? ॥ (उद्योग. १.१३)
(२२३) मारुतिभंग घडेल प्रचुरचणकचर्वणोद्धता प्लवगा ? ॥ (उद्योग. ४.३७)
(२२४) वाचाळनीचसख्यें न फळ, जसें वंध्यदारशुष्करतें. ॥ (उद्योग. ४.३८)
(२२५) झालें दीप्त अलातें जें गेह विझेल काय हाहांनीं ? ॥ (उद्योग. ४.८२)
(२२६) सोडुनि सदन्न सेविल कोण सुधी अशुचि वाळके तुकडे ? ॥ (उद्योग. ११.४८)
(२२७) न रविपुढें मिरवेसें चंद्रींहि, कसें असेल बळ भगणीं ? (उद्योग. १३.४२)
(२२८) पुष्कळ वाढेना कां विंध्य, नव्हे पात्र रत्नसानुजया. ॥ (भीष्म. १.६२)
(२२९) वृद्धहि सिंह महामदमत्ताही काय गा ! ढळे नागा ? । (भीष्म. १.७८)
(२३०) करिल कसें मांजर ? जें दुष्कर हरिहनन काज वाघास; ।
न शकति अग्नि विधु, कसा दिनमणिचा करिल काजवा घास ? ॥ (आदि. १२.२५)
(२३१) आकार सम दिसे, परि सरडा पावेल काय नक्रतुला ? ॥ (अवतार. २००)
(२३२) सुख व्हावें तरि, **धर्मा**प्रति ह्मण 'माथां वसे, नसे दूर'; ।
पूजा कैंची लोकीं, जरि दगड शिरीं धरी न सेंदूर. ॥ (आदि. ९.५८)
(२३३) निज धर्मचि संसारीं मुक्तीचे हेतु, सूत्रु गुंतीचे. ॥ (स्त्री. ३.८)
(२३४) रक्षील धर्म समयीं धरिती त्याचाचि भरंवसा सुकवी. ॥ (सभा. ४.१०२)
(२३५) धर्मन्याय त्यजितां तेजस्वीही तमीं न रविहि तरे. ॥ (वन. २.९२)
(२३६) जें धर्मनीति करितें राजहित, करी न उग्र सेना तें. ॥ (शल्य. १.३५)
(२३७) बापा ! धर्माच्या तों कोणीं सोडूं नयेचि कासेतें; ।
निष्फळ होती मेघें त्यजिलीं आलीहि जीविका सेतें. ॥ (वन. २.८१)

(२३८) सर्वेहि नीच प्राणी धर्मातें संकटीं बरें पाहे ।
वाहे अनयस्रोतें भलतेचिकडे सुखी असें आहे. ॥ (गदा. १.७७)

(२३९) भुजबळ देतें जय तरि कविनीं नयधर्मबळचि कां गावें ? (शल्य. ३.४०)

(२४०) होतें सद्धर्माच्या कासेला लागतां सदा शिव हो ! । (वन. १३.२७)

(२४१) धर्मासि न अनुमोदिति जे त्यांची आप्तता वृथा; पर ते. ॥ (आश्रम. ३.४५)

(२४२) देती सामग्री जय, तरि कां सन्नीतिला गुणी वरिते ? ॥ (विराट. (५.३७)

(२४३) धर्मन्यायविरोधें कोणाचेंहि न इष्ट साधेल. (उद्योग. ४,१५)

(२४४) ये धर्मचि; पुत्र, स्त्री, कोश, रथ, तुरग, करी न सांगातें. ॥ (भीष्म. ११.२६)

(२४५) धर्मरतिविना वानरजन्मांतचि कां न जन्म नर मोजी ? ॥ (द्रोण. ५.८७)

(२४६) धर्माच्याचि बळानें सद्विद्योत्पत्ति होतसे स्पष्ट; ।
तेव्हां नुरे अविद्या जीस्तव बहु जीव पावतो कष्ट. ॥ (हरि. ५४.६३)

(२४७) **श्रद्धा**चि करितसे हित धर्माचें, जेंवि माय तनयाचें; ।
जप, तप, मख, गुरुपूजा सुख्य श्रद्धाचि आयतन यांचें. ॥ (ब्रह्मो. १७.१)

(२४८) श्रद्धेनें भजल्यातें पाषाणहि फलद होय, जो अज्ञ ।
तोही सद्गुरु होतोः अश्रद्धेनें वृथा महायज्ञ. ॥ (ब्रह्मो. १७.२)

(२४९) दुःख परासि न द्यावें, सत्य वदावें, क्षमा न सोडावी, ।
जोडावी कीर्ति, असी **कुलरीति** तुम्हीं कधीं न मोडावी. ॥ (उद्यो. ८.६)

(२५०) सिंहीला तोचि उचित सुत, जो मारूनि सिंधुरा जाला. ॥ (उद्योग. १०.४७)

(२५१) **अयशस्कर तोक** पळहि मळवाया धाम बा ! न रांगावें; ।
जरि न गमेचि, तरि सुखें चित्ररचित रामवानरां गावें. ॥ (उद्योग. १०.५५)

(२५२) **सुजना**सि बिभीषणता रुचते, **कुजना**सि कीं दशाननता, ।
अनता जना शिवे रे संसारीं ओखटी दशा, न नता. (भीष्म. ६.२४)

(२५३) वांकेल ताजव्याचें भारावांचून काय बा ! परडें ? (द्रोण. १.४१)

(२५४) कांसेसि लागल्याचें क्षुद्र अलाबुहि करूनि अवन तरे. ॥ (द्रोण. ७.७६)

(२५५) शोकीं **आप्तसमागम** विषतरुचा जेंवि भरविला पाला. ॥ (द्रोण. ८.३३)

(२५६) ज्या वाटेनें गेले गुरु, धरिती छात्र त्याचि वाटेतें. ॥ (द्रोण. ११.३४)

(२५७) **मूलमहत्व** न हरिलें मोठ्या झाल्या तथापि टीकांहीं. ॥ (द्रोण. २३.७६)

(२५८) अप्रियकारि जनाचा अणुमात्र धरूं नयेचि विश्वास. (हरिवंश २.८८)

(२५९) चुकल्या जनासि कोणी सांगुनि निजहित, पथासि जो लावी, ।
धनदेंहि **उपकृती**शीं त्याच्या निजसंपदा न तोलावी. ॥ (हरि. ३.८२)

(२६०) **योगाभ्यासीं**च, धरुनि आत्मसुखप्राप्तिकाम लागावें. ॥ (हरि. ३.८६)

(२६१) जीर्णाचे केश जिरति, जीर्णाचे जिरति सर्वेहि दंत, ।
परि जीर्णाच्या **जीवितधनवांछा** ज्या तयां नसे अंत. ॥ (हरि. ५.१७)

(२६२) आर्तांच्या भीतांच्या देतातचि हाक **शूर** हाकेला. ॥ (हरि. १०.२१)

(२६३) अभिषेकें जों ओले अलक शिरीं तोंचि आर्य आधीतें ।
वारूनि, **प्रकृतीचें रंजन** जें करिति कार्य आधीं तें. ॥ (हरि. ११.१४)
(२६४) बहुतांचें संकल्पित जें तें होतेंचि निश्चयें कार्य; ।
बहुजनहितार्थ मृत्युहि जयचि असें ह्मणति सर्वेही आर्य. ॥ (हरि. २३.४८)
(२६५) आ लेकरूं करी जें, घालावें मधु तयांत कीं आलें? ॥ (हरि. २६.६१)
(२६६) पतिच्या छंदें केलें व्रत तप जें काय सर्व तें फळतें ॥ (हरि. २६.६५)
(२६७) सुहृदुक्त युक्त कटुही, ओखद बाळासि होय जेंवि हित. ॥ (हरि. २७.१०३)
(२६८) न करावें **परिणामीं तापप्रद** जें मनास देहास. । (हरि. २७.१०४)
(२६९) जें वारिरुह सुरस दे, वाळुनि त्या काय मधुकरी परते? ॥ (मंत्रमय भाग. ४५)
(२७०) घालिति **परार्थ**चि धवलतर यश लक्षुनि, न आंग जन कास. ॥ (हरि. ३५.७९)
(२७१) भूतद्रोहिजनाश्वीं घालीच **विपत्ति**वीर पल्याण. ॥ (गोपीगोडवा. ४१)
(२७२) **गणिकास्पर्शें** होतें क्षीण यशः पुण्यपुंजही जळती. ॥ (कुश. १२.३२)
(२७३) ज्वरितांसि शर्करा जशि, कटु होय **खळासि** सुरसही **कविता**; ।
शिष्टा पद्मां सुख दे, दुष्टां घूकांसि ताप दे सविता. ॥ (प्रश्नो. ७७)
(२७४) ज्या शाणघर्षणादिक संस्कार, चढे गुणासि तोचि **मणी**. ॥ (हरिश्चंद्र. ५.३९)
(२७५) स्वप्नींहि **परस्त्री**तें न शिवे ऐसें करी अधीन मन; ।
गोविप्राश्वत्थांचें न चुकों द्यावें तुवां कधीं नमन. ॥ (मदालसा. ५.२३)
(२७६) **सावध** सदा असावें संसारीं, स्वहितकृत्य लक्षावें, ।
पुरुषर्थाचें साधन बा ! धनसें हें शरीर रक्षावें. ॥ (ब्रह्मो. ११.३४)
(२७७) निर्दोष जे तयांची चित्तांत कधीं करूं नये शंका; ।
प्राणहि वेंचुनि रक्षी वृद्धा, बाळा, सुदुर्बळा रंका. ॥ (ब्रह्मो. ११.३६)
(२७८) त्यजुनि पथ वनीं शिरतां सांपडतो स्पष्ट हा दवा, खातो ।
कीं व्याघ्रादिक, पावे कीं कंठकविद्धपाद वाखा तो. ॥ (ब्रह्मो. ९.४१)
(२७९) तो **आप्तोत्तम**, कामा ये जो धांवोनि अवसरीं विषमीं. ॥ (अमृत. १.६२)
(२८०) जें सन्मार्गप्रचारें करुनिच असतें संग्रहीं **पुण्य** हो ! तें ।
सर्वव्यापन्महीध्रप्रशमनविषयीं वज्रवत् दक्ष होतें. ॥(कुशलवो. ४.८४)
(२८१) यश, सुख, पुण्य मिळे मग बंधूंनीं कां न नीट नांदावें? ॥ (आदि. ३६.२४)
(२८२) **सद्रसना** जसि विनतीं तसि न करी औरसींहि माय किव. ॥ (ब्रह्मो. ४.२१)
(२८३) खळ निंदिति, म्हणुनि बुधें टाकावी काय हरिगुणासक्ति? ।
दीरनणंदाजाचें साध्वी न त्यागिती सुपतिभक्ति. ॥ (मंत्ररा. उप. ५)
(२८४) विशुद्ध स्वांताला रुचति गुण पीयूषसम जे, ।
परी त्यांतें दुष्ट स्वमनिं विष ऐसेंचि समजे; ॥
घृतें क्षीरें होती प्रमुदित मखीं निर्जर खरे; ॥
परी तेही तापप्रद रस जयाला ज्वर भरे. ॥ (मंत्ररा. उप. ९)

(२८५) संतत सज्जनसेवन, सत्क्षेत्रनिवास, सत्कथाश्रवण, ।
यांहीं युक्त प्राणी **पश्चात्तापी** न जाहले कवण ? ॥ (ब्रह्मो. २२.२४)

(२८६) ह्री, सत्य, धर्म, आर्जव जिकडे; तिकडेचि कृष्ण जाणावा; ।
जिकडे प्रभु तिकडे जय जाय; न लागे स्तवूनि आणावा. ॥ (उद्योग. ५.७९)

(२८७) निद्राभंग बरा, परि न बरा आवश्यक **क्रियालोप.** ॥ (आदि. ५.१००)

(२८८) गुण वावडींस, सुदृढ **प्रेमाचि** स्त्रीस आवरायाचा. ॥ (आदि. ११.४५)

(२८९) स्पष्ट हिताहित कथिता जो होय, सहाय तोचि रायास, ।
प्रियवाक् नर कीं नरकीं भोगवितो भोगितो चिरायास. ॥ (सभा. ४.४४)

(२९०) **सदतिक्रम** करिल कसा जो धर्मन्याय गुरुमुखें पढला ? ॥ (वन. ३.३७)

(२९१) **सच्छळकर्म** स्वल्पहि सद्यःक्षयहेतु जेंवि गर-वारी. ॥ (वन. ८.३७)

(२९२) कलिमाजि लघुत्वप्रद शक्तीस, तसेंचि **नीच** कावेस. ॥ (विराट. १.१४१)

(२९३) उवडहि निधी **अभाग्या,** न दिसे मलिना जनासि अत्रिज गा !॥ (विराट. २.२३)

(२९४) **भेद** नसावा बुध हो ! भेदें स्वयश न परांसि ओपावें. ॥ (विराट. ४.५५)

(२९५) जो सोडिला **दयेनें** पावेल ध्रुवपदा न वेदांतें. ॥ (उद्योग. ५.५४)

(२९६) **अशुचिस्पृष्टा सच्छ्री** ह्मणवि भली तापल्या पहारेतें. ॥ (उद्योग. ५.९०)

(२९७) ज्यांनें मन सच्छ्रुतिमतपथ सोडुनि दुष्पथीं कदा न रते, ।
पावति भगवंताच्या जाणुनि **सद्भक्तिनें** पदा नर ते. ॥ (उद्यो. ५.८६)

(२९८) (श्लो०) प्राप्तप्रौढत्व सिंहीतनय न पळही क्रोष्टूयूथीं वसेल. ॥ (कृष्णविजय ५५.३४)

(२९९) .... **विश्वंभर** ।
त्राता होय जयास काय करिती विघ्नें तया शंभर ? ॥ (कृ. वि. ५५.४१)

(३००) ओपा योगाग्निमध्यें तनुहि, परि न हा (=ईश्वर) **भक्ति**वांचूनि सोपा ॥
(कृ. वि. ५८.१६)

(३०१) .... दृष्टि निवळे ।
न ज्यांची, त्या रोग्यां दिसति दरदुग्धेंदु पिवळे ॥ (कृ. वि. ६१.२)

(३०२) .... त्या माकडा ।
पाजी दुर्मति मद्य, दे खळ **पिशाहार्ती स्वयें कांकडा.** ॥ (कृ. वि. ६१.९)

(३०३) हंसातें हांसिलेंही, तरी **गुणयश** तें नाशिलें काय काकीं ? ॥ (कृ. वि. ६१.१९)

(३०४) ज्या जाणेंचि नसे किमर्थ पुसतां **ग्रामाचिया त्या पथा** ? ॥ (कृ. वि. ६५.१९)

(३०५) जो सिंधूसि तरे सुखें भुजबळें तो कां न डोहा तरे ? ॥ (कृ. वि. ६६.१६)

(३०६) कोल्यानें हरि रांधिला **विधिबळें,** भ्याला शिखी गांधिला ! ॥ (कृ. वि. ७७.१६)

(३०७) दुष्टाचारीं क्षमा ती निजविमलयशीं स्पष्ट दावील हानी. ॥ (कृ. वि. ६८.३)

(३०८) तेज दुःसहचि सिंहशावकीं, दाहशक्ति जसि अल्पपावकीं. ॥ (कृ. वि. ६८.१२)

(३०९) आप्तीं आप्तांस, लावी व्यसन न कर जों तों, बळें जागवावें. ॥ (कृ. वि. ६८.२१)

(३१०) पादत्राणहि कीं शिरीं सुमुकुटस्थानीं पहातें चढो, ।
वांछि विप्रसभेंत बैसुनि पदीं शूद्र श्रुतीतें पढो. ॥ (कृ. वि. ६८.२६)

(३११) करिति कुमति प्राणत्रात्याचिया अवमानना, ।
न निरखिति या साठीं ज्ञाते कधीं **अवमानना.** ॥ (कृ. वि. ६८.३५)

(३१२) कूपाला दोष कैचा त्रुघडुनि नयनें पाडितां अंधकारा ? ॥ (कृ. वि. ७०.१०)
(३१३) दीनीं देव दया करी तसि, जसी मातापिता नंदनीं. ॥ (कृ. वि. ७३.९)
(३१४) स्वामी ज्याचा न ठाके मृगरिपुसमरीं यूथ वांचेल काय ? ॥ (कृ. वि. ७६.१०)
(३१५) ईशक्षोभ करी तृणासि अशनी हें बोलती जाणते. ॥ (कृ. वि. ७८.२०)
(३१६) सिंध्वंतींहि बुडोनि शुष्क असिजे पोटीं शिळापर्वतें. ॥ (कृ. वि. ७८.१७)
(३१७) केलें जें **ईश्वरें** तें शुभचि, कुशलधी शोचती कां अतीता ? ॥ (कृ. वि. ७८.२२)
(३१८) मोहुनिही करी बद्ध न, **सद्धन** तत्पदचि, भाग्य लक्ष्मीचें, ।
ज्यास न वेंच, नवेंच प्राभव दे, नुरवि लौल्य पक्ष्मींचें. ॥ (कृ. वि. ८१.४९)
(३१९) ने **वित्तमद** श्वभ्रा, तापवि परि निर्धना यदा दभ्रा ।
वा करुणेच्या अभ्रा ! श्री दासी संपदा करी बभ्रा. ॥ (कृ. वि. ८१.५५)
(३२०) दयित ब्राह्मण मजला (=प्रभुला) कौस्तुभ ह्या दृष्टिमणि खरें समज, ।
जगदिष्ट श्री प्रियहि स्वचतुर्भुजरूप हें तसें न मज. ॥ (कृ. वि. ८७.७३)
(३२१) अमृतप्रद परमेश्वर 'माग' ह्मणे, त्यासि मागतो गरळ. ।
परळ श्रीमंतातें मागे हतविधि, शिजे कसा हरळ ? ॥ (कृ. वि. ८८.२०)
(३२२) संकट पतिव्रतेचें पतिव्रतेनेंचि कीं निवारावें, ।
नौकेनें नौकेला बुडतां यादोनिधींत तारावें. ॥ (कृ. वि. ८८.४८)
(३२३) रणयज्ञीं भूपाला व्हावें अंगें सहाय भूपानें, ।
सागरतृषा हरावी कैसी स्वादूदकेंहि कूपानें ? ॥ (कृ. वि. ८८.४९)
(३२४) **पूज्यातिक्रम** करितो जो तो हो मर्त्य कीं सुर क्षेमी ।
नोहें कधींच आंगें असमर्थ तयाचिया सुरक्षे मी (=प्रभु). ॥ (कृ. वि. ८८.८१)
(३२५) जी ती **कथा** सुखाची सरिता हरिताप तापस श्रोते ।
कवि मीन आंत बाहिर दिसति विचारें परस्परां हो ! ते ॥ (कृ. वि. ८९.२४)
(३२६) नवल हरिकथा सरिता वाहविति स्थिति न मोडिती दूर, ।
आधीं बुडविति मग तन्नेत्रांत भरे हळूहळू पूर. ॥ (कृ. वि. ८९.२५)
(३२७) **प्रभुचीं** अमितें **चरितें** जरि तें यश वर्णितां नसे अंत, ।
गातां दुर्गति चुकवी सुकविप्रिय हेंचि वर्णिती संत. ॥ (कृष्णविजय ८९.१००)
(३२८) **गुरु** हरिहर; बहु तरले गुरुचरिताच्या करूनि पठनातें. ॥ (उद्योग. १३.५७)
(३२९) कैसाहि असो **गुरु**, बहुमान्यचि चित्तें हि लंघ्य न भल्याला, ।
पूज्यचि दक्षमखांतक जरि अस्थि भुजंग भस्म नभ ल्याला. ॥ (उद्योग. १३.१५०)
(३३०) **गुरुचरणा**वरुनि सदा ओवाळुनि सांडिती असु ज्ञाते, ।
सुज्ञा हरिहरसे जे गुरुचरण, न मानती असुज्ञा ते. ॥ (उद्योग. १३.१५२)
(३३१) गुर्वनुमतें स्वधर्माचरणें कवि करिति कुळसमुद्धरण. ॥ (भीष्म. १.६८)
(३३२) गुर्वाशीर्बळवर्जित जो क्षणहि उभा न तो टिके शवसा. ॥ ६९ ॥
(३३३) भंगेल गुर्वपूजक साधुनि देईल गर्ग होरा जा (=ज्या) ॥ ७१ ॥
(३३४) सुगुरु सुशिष्यसुवश, कीं सुस्त्रीवश सुबहु मन्मथ नरा जा (=ज्या). ॥ ८७ ॥
(३३५) जे जे गुरुभक्तिरसिक ते न भ्रमले पडोनि संत तमीं. ॥ ९५ ॥

परिशिष्ट-ट.



मोरोपंती मंडळ.

(ग्रंथप्रसिद्धकर्ते, संपादक, टीकाकार, भक्त वगैरे)

(श्लोक) 'तरंगिणी तथा वाणी
पुरस्थानपि भूभृतः ।
तिरस्कृत्य समभ्येति
रसिकं रसवाहिनी ॥'

(गीति) 'समलंकरोति काव्यं सुकविः
कुकविश्च तदुभयं काव्यम् ।
अनलं तनोति चित्ते सहृदय-
हृदयं प्रविष्टमात्रं चेत् ॥
सदसि चमत्कारकरश्चतुर-
तरश्चित्रबाणसंधाने ।
कोशधरोऽप्यर्थपरो रसेश्वरो
जगति जयति कविराजः ॥

(विठोबा अण्णाकृत सुश्लोकलाघव
४५६,४५३,४४०)'



(भावार्थ) नदी व वाणी ह्या दोघीही रसवाहिनी (जलाला, पक्षीं नवरसांना वाहणाऱ्या) आहेत. त्या जवळच्या भूभृतांचा (पर्वतांचा, पक्षीं राजांचा) तिरस्कार करून रसिकाजवळ (रसिकपुरुषाजवळ, पक्षीं समुद्राला) प्राप्त होतात. ४५६ सुकवि व कुकवि हे दोघेही काव्याला 'समलंकृत' (सम्+अलंकृत=उत्तम रीतीनें शोभित, पक्षीं स+मलंकृत=दूषित) करितात; त्यांचें अर्थात् सुकविकुकवींचें-काव्य सहृदय मनुष्याच्या अंतःकरणांत प्रविष्ट होतांच 'अनलं करोति' ह्मणजे सुकविपक्षीं अन्+अलं ह्मणजे पुरेसें वाटत नाहीं; ह्मणजे सुकवीचें काव्य कितीही ऐकिलें तरी आणखी ऐकावेंसेंच वाटतें; कुकविपक्षीं अनल ह्मणजे अग्नि त्यासारखें संताप देणारें होतें. ४५३. उत्तम कवि हा जगांत राजाप्रमाणें जय पावतो. राजा हा रसेश्वर (रसा+ईश्वर) पृथ्वीपति असून सुकवि हाही नवरसांचा स्वामी असतो. राजा कोशधर (भांडारगृहाचा स्वामी) असतो, तसा सत्कवीही अमर, हैम, मेदिनी, विश्व इत्यादि कोशांचा स्वामी असतो. राजा अर्थपर (द्रव्याच्या ठिकाणीं तत्पर) असतो, तसा उत्तम कवि हा शब्दार्थयोजनेविषयीं तत्पर असतो. राजा सदसिचमत्कारकर म्हणजे सत्+असि अर्थात् उत्कृष्ट तरवारीचा चमत्कार (युद्धांत) दाखविणारा अर्थात् मोठा शूर तरवारबहाद्दर असतो, तर कविवर्य हा सदसि ह्मणजे (विद्वानांच्या) सभेंत चमत्कारकर ह्म. स्वरचित काव्याची चमत्कृति दाखविणारा (रस, अलंकार, गुण इत्यादि काव्य-

साहित्यानें आपलें काव्य किती खचून भरलें आहे तें दाखविणारा) असतो. तसेंच राजा विचित्रशरसंधानाविषयीं अतिशय चतुर असतो व कविश्रेष्ठ हा चमत्कारिक बाण ह्मणजे शब्द त्यांच्या योजनेविषयीं ह्मणजे मार्मिक, हृदयस्पर्शी काव्य करण्याविषयीं फार कुशल असतो.

सूचनाः—मोरोपंतांच्या काव्याचे मार्मिक रसज्ञ असे कीर्तनकार, कवि, लेखक, निबंधकार, ग्रंथप्रकाशक, व त्यांचे अनुकूल प्रतिकूल टीकाकार अशांपैकीं कांहीजणांची नांवें पुढें दिली आहेत. या शिवाय ज्यांची नांवें देणें योग्य असून ती चुकून राहून गेली असतील त्यांची आह्मी मनःपूर्वक क्षमा मागतों.

१ कीर्तनकारः—

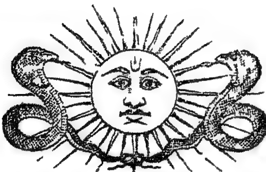


(गीति) अतिचित्रकलापातें उभवुनि
आर्यांस दे महाश्चर्य, ।
हरिदासकीर्तनगणीं बहु शोभे
तो **मयूर** कविवर्य. ॥

(१) चातुर्मासे संत विठोबादादा (समकालीन)
(२) चातुर्मासे मैराळबोवा (समकालीन)
(३) ताहराबादकर महीपतिसुत विठोबा (समकालीन)
(४) सोलापूरकर कविप्रवर रामजोशी (समकालीन)
(५) फलटणकर आत्मारामबुवा (समकालीन)
(६) तुकाविप्र (समकालीन)
(७) मटंगे नागेश्वर महादेव ऊर्फ नागेशकवि नंदिकेश्वरचरित्र या १८४ आर्याबद्ध काव्याचे कर्ते
(८) वुंडे वामनबुवा इंदापूरकर
(९) नासिककर त्र्यंबकबुवा
(१०) परांजपे गोविंदबुवा नासिककर
(११) वऱ्हाडकर बजाबा हरिदास
(१२) सागरकर हरिदासबुवा
(१३) रहिमतकरबुवा
(१४) पऱ्हाळकर गोसावी (निरीच्छ प्रेमळ हरिदास)
(१५) ओतुरकर पांडुरंगबुवा (पंतशिष्य)
(१६) पांडुरंग बोवाचे शिष्य सखारामस्वामी
(१७) चाकणकर गुजाजी
(१८) मसुरकर काशीनाथबावा
(१९) नागपुरकर दादाजी हरिदास
(२०) नागपुरकर गोपाळजी हरिदास
(२१) पातुरकर कृष्णबुवा
(२२) ढोले रामकृष्ण गोविंदबुवा
(२३) ब्रह्मनाळकर यशवंतबुवा
(२४) औंधकर पंतप्रतिनिधि बाळासाहेब बी. ए. सरकार
(२५) पटवर्धन डॉक्टर
(२६) चिंचणेरकर महाभागवत मुकुंदबुवा सातारा.
(२७) भागवत विनायकबुवा काशी.

(२८) जोशी बालहरिदास रामचंद्र पुरुषोत्तम पुणें
(२९) कुळकर्णी शंकर बळवंत बी. ए. एल्. एल्. बी.
(३०) काळे श्रीपाद विनायक
(३१) आठले रामचंद्र नारायण
(३२) चंवडे बाळकृष्णबुवा काशी
(३३) दांडेकर रामचंद्रबुवा
(३४) शिरवळकर रामचंद्रबुवा
(३५) वाशिमकर लक्ष्मणशास्त्री
(३६) सुरतकर रामचंद्र विष्णु दशपुत्रे.
(३७) सांगलीकर बंडुबुवा बाळकृष्ण
(३८) काशीकर गोपाळ बाळकृष्ण हरिदास
(३९) मुरुडकर बुवा पुणें
(४०) भिडे सदाशिवशास्त्री मुंबई
(४१) तांबे गणेश दत्तात्रय सातारा
(४२) तांबे सदाशिव धोंडो ऊर्फ तांबेशास्त्री
(४३) पाठक गोविंद त्र्यंबक पुसद.
(४४) कट्टी नारायण बिंदु अकोला
(४५) पुसदकर गोविंद त्र्यंबक शास्त्री
(४६) अभ्यंकर विनायकशास्त्री
(४७) वामनबुवा केमकर.
(४८) गाडे डाक्टर गोविंदराव वर्धा
(४९) कोटणीस हनुमंत पांडुरंग सांगली.

२ ग्रंथ प्रसिद्धकर्तेः—



(मासिकपुस्तकांचे प्रसिद्धकर्ते व संपादक)

(१) डुकले माधव चंद्रोबा (सर्वसंग्रहकार) (जन्म १८२५ मृत्यु १८८५)

(२) साने काशीनाथ नारायण बी. ए. ('काव्येतिहाससंग्रह'कार)

(३) मोडक जनार्दन बाळाजी बी. ए. (जन्म इ. स. १८४५ मृत्यु १८९०) ('काव्येतिहाससंग्रह'कार व 'काव्य-संग्रहाचे संपादक)

(४) चिपळूणकर विष्णु कृष्ण बी. ए. (जन्म इ. स. १८५० मृत्यु १८८२) ('काव्येतिहाससंग्रह'कार व 'निबंधमाला'कर्ते)

(५) तेंडुलकर बावाजी अनंत ('मयूरकवी'चे प्रसिद्धकर्ते)

(६) ओक वामन दाजी ('काव्यसंग्रहा'चे संपादक) (जन्म इ. स. १८४५ मृत्यु १८९७)

(७-९) चौधरी जावजी दादाजी (जन्म इ. स. १८३९ मृत्यु १८९२), चौधरी तुकाराम जावजी, चौधरी पांडुरंग जावजी — काव्यसंग्रहाचे प्रसिद्धकर्ते.

(१०) भानु चिंतामण गंगाधर बी. ए. (काव्यसंग्रहसंपादक)

(११) केळकर नारायण चिंतामण बी. ए. (काव्यसंग्रहसंपादक)

(१२) भिडे बाळकृष्ण अनंत बी. ए. (काव्यसंग्रहसंपादक)

(१३) के. व्ही. लक्ष्मणराव एम्. ए. (कर्णपर्वाचे संपादक)

(१४) पंडित शंकर पांडुरंग एम्. ए. (जन्म इ. स. १८४० मृत्यु १८९४) (बृहद्दशमाचे संपादक)

(१५) पंत पराडकर रामकृष्ण दत्तात्रेय बी. ए. ('मोरोपंताचे समग्र ग्रंथ' याचे प्रकाशक)

(१६) ओक दामोदर केशव बी. ए. ('सभापर्व' व 'द्रोणपर्व'यांचे संपादक)

(१७) डुबे शिवराम तानबा बी. ए. (संस्कृतमंत्ररामायणाचे संपादक)

३ केकावली सार्थ प्रसिद्धकर्ते.



(१) तर्खडकर दादोबा पांडुरंग (जन्म १८१४ मृत्यु १८८२) सुप्रसिद्ध 'यशोदापांडुरंगी' (इ. स. १८६५) टीकेचे कर्ते व व्याकरणकार

(२) गोडबोले परशुराम बल्लाळ (जन्म इ. स. १७९९ मृत्यु १८७५) 'नवनीत'कार व 'केकादर्श'कार (इ. स. १८६७)

(३) जोशी रामचंद्र भिकाजी 'शालापत्रक' कार व व्याकरणकार.

(४) चोणकर माधव रामकृष्ण (इ. स. १९१६)

(५) बोरवणकर

(६) घाणेकर

(७) केळकर केशव सदाशिव

(८) बेहेरे नारायण केशव एम्. ए. एल्. टी.

(९) श्रीरामदासानुदास

अनिर्दिष्ट—

केकावली इ. स—१८५८,१८८८,१८९०

केकावली टीकेसह. का वा. १८७७

बा. आ. कं. १८८८

केकार्थसूचिका—वि. ना. ता. १८७४

सार्थ केकासंचय—के. बा. व. १८७३

४ निबंधकार व लेखक.



(गीति) 'गुंफुनियां अष्टोत्तरशतरामायण-
मालिका गळां घाली ।
प्रभुच्या, अशी हिच्याविण
वाणी जन्मास कोणती आली ? ॥

झाला पद्ययुगाचा अंत
परत्रीं **पराडकर** जातां, ।
माध्यान्हीं गद्याचा आहे
सूर्य प्रवेशला आतां. ॥

(महाराष्ट्रजनविज्ञापना. गं. रा. मोगरेकृत)'

(१) हंस मल्हार बाळकृष्ण (मोरोपंतावरील निबंधाचे कर्ते) मयत.

(२) पांगारकर लक्ष्मण रामचंद्र बी. ए. ('मोरोपंती वेंचे' व 'मोरोपंताचें चरित्र' या सुप्रसिद्धग्रंथाचे कर्ते व संतचरित्रकार.

(३) गुंजीकर रामचंद्र भिकाजी (जन्म इ. स. १८४३ मृत्यु १९०१) (विविधज्ञानविस्तारकार)

(४) पंडित हरि माधव (जन्म इ. स. १८४९ मृत्यु १८९९) (स्वनामनिर्देश न करितां विविधज्ञानविस्तार, काव्य-संग्रह, शाळापत्रक इ. मासिकांतून मोरोपंतांवर लेख लिहिणारे विद्वान् कवि टीकाकार)

(५) गरब काशीनाथ पांडुरंग (जन्म इ. स. १८५३ मृत्यु १९०४)

(६) भागवत राजाराम रामकृष्ण (जन्म इ. स. १८५१ मृत्यु १९०८. ('अलंकारमीमांसा'कार व नलदमयंतीकथार्यांचे व 'भीष्मभक्तिभाग्य' प्रकरणाचे स्पष्टीकरण करणारे)

(७) ओक विनायक कोंडदेव(बालबोधकार) मयत.

(८) केळकर नरसिंह चिंतामण बी. ए. एल्. एल्. बी. ('मोरोपंताचे समग्र ग्रंथ' यांतील प्रस्तावनालेखक)

(९) परांजपे शिवराम महादेव एम्. ए. ('मोरोपंताचे समग्र ग्रंथ' यांतील प्रस्तावनालेखक)

(१०) पोतदार दत्तोपंत प्रोफेसर, बी. ए. (मोरोपंताचे समग्र ग्रंथ यांतील प्रस्तावनालेखक)

(११) वनहट्टी श्रीनिवास नारायण एम्. ए.

५ मोरोपंती वळणावर काव्यरचना करणारे लेखक.



(श्लोक) 'कवि मयूर पिसें बहु टाकुनी ।
विगत होय यशा भुवि ठेवुनी ॥
बहुत तीं लुटुनी शिरिं खोंविती ।
रुचिर तीं दिसती यमकें किती ? ॥
(रेव्हरेंड नारायण वामन टिळक-काव्यकुसुमांजलि अंक १ ला, २२)'

(१) मोगरे गंगाधर रामचंद्र

(२) लेले गणेश त्र्यंबक नासिककर

(३) लेले लक्ष्मण गणेश

(४) पाध्ये दामोदर गणेश एम्. ए.

(५) महाजनि विष्णु मोरेश्वर एम्. ए.

(६) कानिटकर गोविंद वासुदेव बी. ए. एल्. एल्. बी. ('संमोहलहरी'कार पृथ्वीछंदश्लोक १२१)

(७) पाळंदे भास्कर दामोदर (जन्म इ. स. १८३२ मृत्यु १८७४)

(८) पटवर्धन गणपतराव हरिहर ऊर्फ बापूसाहेब कुरुंदवाडकर (गणेशपुराणार्या ११०० यांचे कर्ते)

(९) फणसे केशव विश्वास

(१०) खानवलकर गंगाधर नारायण (रामदासचरित्रकार)

(११) केरीकर विठ्ठल (विठ्ठल नृसिंह) (शुकरंभा, गजगौरीव्रत ७६, कबीर व वामन यांच्या चरित्रांवर आर्या रचणारे)

(१२) धुंडिराज (प्रऱ्हादचरित्रार्या ५७, यांचे लेखक)

(१३) धुंडिराजपुत्र मोरेश्वर ('चंद्रावल्याख्यान'कार आर्या १०१)

(१४) ढवळे परशुराम बच्चाजी (गुरुचरित्रावर आर्या ३७८३ यांचे लेखक)

(१५) तंजावर सर (टी) माधवराव (जन्म इ. स. १८२८ मृत्यु १८९१) (यांनीं केलेल्या आर्या मागे सुधारकांत छापिल्या होत्या)

(१६) जोशी चिंतामणि (गोपीचंदाख्यान, गीति १८२ व सीतास्वयंवर गीति ९० हीं आख्यानें रचणारे)

(१७) आठल्ये कृष्णाजी नारायण माजी-एडिटर केरळकोकिळ व एडिटर लोकमित्र खानापुर)

(१८) नारायण कवि ('शिवमोहिन्याख्यान' या ३७ आर्यात्मक प्रकरणाचा कर्ता)

(१९) भास्कर कवि. (गणपति स्वयंवराख्यानाचा कर्ता. पद्ये संकीर्ण २१०)

(२०) उषास्वयंवर व गयगंधर्वाख्यानाचा कर्ता (उषा० संकीर्ण १५६ पद्ये, गय० संकीर्ण १२५) पांडुरंग कवि

(२१) नाईक सखोबा गोवेकर गोपीचंदाख्यानाचा कर्ता (पद्ये संकीर्ण ११८)

(२२) नरहरि रामजन्म गीति ६५ त्रयोदशाक्षरी मंत्रात्मक

(२३) नारायणविप्र कबीरजन्मचरित्रार्या १०० यांचा कर्ता

(२४) त्रयोदशाक्षरी चतुर्मंत्ररामायण गीति ९१ यांचा कर्ता अनामकवि.

(२५) द्वादशाक्षरी भागवतमंत्र साधलेल्या 'मंत्रमय ध्रुवचरित्रा'चा कर्ता. गीति २७६ अनामकवि.

(२६) कृष्णानंदनिमग्न 'राधाविलास' गीति ६२ यांचा कर्ता

(२७) जनार्दन 'दामाजीपंत चरित्र' गीति २४ यांचा कर्ता

(२८) महाजन देवीदास लक्ष्मण नांदेडकर.

६ भक्त व टीकाकार.



(१) बाबा पद्मनजी रेव्हरेंड कोशकार (जन्म १८३१ मृत्यु १९०६)

(२) टिळक रेव्हरेंड कवि नारायण वामन

(३) टिळक लोकमान्य गीतारहस्यकार बाळ गंगाधर बी. ए. एल्. एल्. बी.

(४) दप्तरदार विठोबा अण्णा 'सुश्लोकलाघव, गजेंद्रचंपू' इ. ग्रंथांचे कर्ते

(५) प्रासादी राजाराम

(६) जनार्दन रामचंद्रजी

(७) कानिटकर केशव बाळकृष्ण

(८) आणेराव गोविंद बळवंत बी. ए.

(९) बडवे नारायण गोविंद पंढरपुरकर

(१०) बापट गोविंद शंकर शास्त्री (जन्म इ. स. १८४४ मृत्यु १९०४)

(११) गाडगीळ गजानन महादेव

(१२) इनामदार बळवंत कृष्ण

(१३) कुळकर्णी बापूजी लक्ष्मण विंचूरकर

(१४) गाडगीळ कृष्णाजी परशुराम (जन्म इ. स. १८४७ मृत्यु १८९६)

(१५) सर मोकदम श्रीनिवास नीलकंठ वणीकर उर्फ अप्पाजी महाराज

(१६) तर्खडकर द्वारकानाथ राघोबा (जन्म इ० स० १८४६ मृत्यु १९०४)

(१७) देशपांडे शंकर गणेश बी. ए. एल्. एल्. बी. वकील वर्धा.
(१८) गुळवणी वासुदेव दत्तंभट
(१९) बर्वे रामचंद्र जगन्नाथ
(२०) खरे विनायक शिवराम
(२१) सबनीस दत्तात्रेय घनश्याम
(२२) शिगणे मोरो गणेश
(२३) कर्वे मोरेश्वर वासुदेव भिवंडीकर
(२४) पटवर्धन श्रीधर गणेश वसईकर
(२५) पंडित बळवंत मनोहर सोलापुरकर
(२६) गोसावी शिवराम बाबाजी
(२७) तेंडोलकर देवराव केशव
(२८) कानिटकर वामन हरी बी. ए.
(२९) ताह्मन केशव गोपाळ एम्. ए. महामहोपाध्याय 'गुमानी' कविकृत 'पुराणनीतिमाले'चे भाषांतरकार.
(३०) मोडक वामन आबाजी बी. ए. (जन्म इ. स. १८३५ मृत्यु १८९७)
(३१) आपटे हरि नारायण
(३२) रानडे शंकर मोरो बी. ए. (जन्म इ. स. १८५०–१८९९)
(३३) जोशी आनंदीबाई डॉक्टर (जन्म इ. स. १८६५ मृत्यु १८८७)
(३४) कानिटकर काशीबाई.
(३५) साठे अच्युत सीताराम एम्. ए. बी. एल्.
(३६) बापट नागेश विनायक
(३७) लोंढे मोरो गणेश
(३८) पटवर्धन वासुदेव बळवंत बी. ए. माजी प्रिन्सिपाल फर्ग्युसन कॉलेज पुणें.
(३९) श्रीखंडे मथुराबाई
(४०) कुंटे माधव मोरेश्वर बी. ए. (जन्म इ. स. १८३५. मृत्यु १८८८) 'राजा शिवाजी' कर्ते.
(४१) जोशी वि. बा. कन्नडकर.
(४२) चिपळूणकर कृष्णशास्त्री (जन्म इ. स. १८२४. मृत्यु १८७८)
(४३) रानडे न्यायमूर्ति माधव गोविंद एम्. ए. एल्. एल्. बी. (जन्म. इ. स. १८४२. मृत्यु १९०१.)
(४४) विलसन डाक्टर

मोरोपंतांची प्रभावळ.

(७) मोरोपंतांचे ग्रंथ उदयास आणून लोकप्रिय करणारे कांहीं प्रसिद्ध लेखक व प्रकाशक.



(१) डुकले माधव चंद्रोबा 'सर्वसंग्रह'कार (जन्म. इ. स. १८२५, मृत्यु. १८८५)
(२) मोडक जनार्दन बाळाजी ('काव्यसंग्रह'-कार, 'काव्येतिहाससंग्रह'कर्ते) (जन्म. इ. स. १८४५, मृत्यु. १८९०)
(३) ओक वामन दाजी ('काव्यसंग्रह'कार) (जन्म. इ. स. १८४५, मृत्यु १८९७)
(४) तर्खडकर दादोबा पांडुरंग ('यशोदा-पांडुरंगी'चे कर्ते) (जन्म. इ. स. १८१४, मृत्यु १८८२)

(५) पंडित हरि माधव ('काव्यसंग्रह'साहाय्यक, 'विविधज्ञानविस्ताराचे टीकाकार) (जन्म. इ. स. १८४९, मृत्यु. १८९९)

(६) चिपळूणकर कृष्णशास्त्री (पंतांचे टीकाकार) (जन्म. इ. स. १८२४, मृत्यु १८७८)

(७) चौधरी जावजी दादाजी ('काव्यसंग्रहा'चे प्रकाशक) (जन्म. इ. स. १८३९, मृत्यु. १८९२)

(८) चिपळूणकर विष्णु कृष्ण ('निबंधमाला'कार (जन्म. इ. स. १८५०, मृत्यु १८८२)

(९) दप्तरदार विठोबा अण्णा सुश्लोकलाघवकार (मयत)

(१०) पंतपराडकर रामकृष्ण दत्तात्रेय 'मोरोपंताचे समग्र ग्रंथ' याचे संपादक.

(११) पंटित शंकर पांडुरंग ('बृहद्दशमा'चे संपादक) (जन्म. इ. स. १८४०, मृत्यु. १८९४)

(१२) गोडबोले परशुराम बल्लाळ ('नवनीत'-कार, केकादर्शकर्ते) (जन्म. इ. स. १७९९, मृत्यु १८७५)

(१३) भागवत राजाराम रामकृष्ण ('अलंकार-मीमासा' कर्ते) (जन्म. इ. स. १८५३, मृत्यु. १९०८)

(१४) रानडे न्यायमूर्ति माधव गोविंद (जन्म इ. स. १८४२, मृत्यु १९०१)

(१५) हंस मल्हार बाळकृष्ण (मोरोपंतावरील निबंधकार) मयत.

(१६) पागारकर लक्ष्मण रामचंद्र मोरोपंताचे चरित्रकार.





परिशिष्ट–ठ.



'पंताची कविता आनंदजनक विचारांनी आणि चमत्कारिक कल्पनांनी ओतप्रोत भरलेली आहे. मोरोपंताची कितीएक पद्ये स्वतंत्रपणे आनंदजनक आहेत व कितीएक एकंदर प्रबंधांत संलग्न असतांना आनंदाला प्रसवतात. तथापि भारतादि ग्रंथरचनेंतील त्यांच्या स्वतंत्र कल्पना आणि स्वतंत्र रचिलेल्या ग्रंथांतील कल्पना ह्या सर्वांचें एकीकरण करून पाहिलें असता, मोरोपंतासारखी कवितास्फूर्ति आजपर्यंत झालेल्या कोणत्याही महाराष्ट्र कवीस नव्हती, व पंतांनी रचिलेला आहे इतका काव्यग्रंथही दुसऱ्या मराठीभाषाकवीनें रचिलेला नाहीं हे स्पष्ट दिसतें. दुसरे, कवितेचा आत्मा जो रस तो ज्या मायेच्या आश्रयानें राहतो ती चमत्कारिक कल्पनाही मोरोपंतांच्या काव्यांत सर्वत्र भरलेली आहे. कितीएक ठिकाणीं त्यांच्या कल्पना इतक्या उज्वल व उदात्त आढळतात कीं, त्या कामांत ते नामांकित संस्कृत कवींची स्पर्धा करीत आहेत कीं काय असा भास होतो. (हंसकृत पंतावरील निबंध– पृष्ठ ११७–११८)'

'The language of poetry consists in imagery, description, metaphors-similies and sentiment adapted with propriety to the subject.'

(*Goldsmith*).

सूचनाः–ही उपमांची यादी व वर्गीकरण अपूर्ण आहे. पंतांच्या काव्यांतील निरनिराळ्या विषयांवरील उपमांचें वर्गीकरण केलें असतां 'बहु कल्पना सुकविसा विजयहि बहु शरपरंपरा व्याला' ह्या पंतोक्तीप्रमाणें मोरोपंत हे महाकवि कसे ठरतात हे दाखविण्यापुरताच हा अल्प प्रयत्न केला आहे. ह्या दिशेनें मयूरकविभक्तांस उद्योग करण्यास आणखी पुष्कळ जागा आहे.

मोरोपंतांच्या उपमाः—

(१) अचेतनवस्तुविषयक उपमाः—

क्षोमे द्रौणि, जसा रविकांतमणि स्पर्शतांचि तत्किरणीं ॥ १ ॥

(कर्ण. १०.६१)

भोळ्या दिगंबराचें आक्रमिलें वतन, **जळ जसें तैलें.** ॥ २ ॥ (नामार्थी १०२)
तेल जसें उत्तेजन देतें तत्काळ दीपकलिकेला. ॥ ३ ॥
(मंत्रभागवत १०.७९८)
न विकत्थनरस रुचला कुलजाला काय चोखितां कुचला ? ॥ ४ ॥
(मंत्रभाग. १०.६६७)
अन्योन्यविशिखसदनीं शोभति रत्नप्रदीपसे शुद्ध. ॥ ५ ॥ (कर्ण. १४.५८)
क्षुब्ध कराया टाकी अरिवरि शर, जेंवि अग्न्युपरि घास ॥ ६ ॥ (कर्ण. १४.६४)
ते एकदांचि वर्षति शस्त्रांचे निकर, **जेंवि घन पाणी.** ।
साहे नगसा, ओपी धनपतिसा बाण बाणधनपाणी. ॥ ७ ॥ (कर्ण. १७.६)
बहु पेटला **धनंजय,** वरि पडतां शत्रुसैन्य तें **आज्य.** ॥ ८ ॥ (कर्ण. १७.१९)
संजय ह्मणे, सुयोधन, गिरिवरि हरिसा, रथांतरीं चढला; ।
मानस्नेहकटाहचि तो, **परिभवकोपपावकें कढला.** ॥ ९ ॥ (कर्ण. १८.३)
कुरुसेना **बहु कांपे पडतां शरवृष्टि फार जसि थंडी.** ॥१०॥ (कर्ण. १८.८)
तेव्हां दुर्योधन नृप सज्ज करुनि घे धनुर्लता दुसरी; ।
तींतूनि शरपंक्ति निघति, **शरयूआंतुनि जशा महा सुसरी.** ॥११॥(कर्ण.१८.९)
त्या शस्त्रांचीं पटलें त्वरित महास्त्रप्रयोगपटु कर्णे ।
लीलेनेंचि उडविलीं, **वातें गगनांत जेंवि तृण पर्णें.** ॥ १२ ॥ (कर्ण. १९.२२)
कल्पांतमेघसा तो, नर शरधारा नराधिपा ! सोडी ।
कुरुसेनेवरि पसरी शरपटला, **जेंवि भव्य पासोडी.** ॥ १३ ॥ (कर्ण. १९.२७)
मग मज पार्थांत सुकर, **जैसा क्षुब्धानिलासि अभ्रांत.** ॥ १४ ॥
(कर्ण. २०.४१)
संशप्तकांत झाला मग्न **जसा सागरोदरीं भेंडा.** ॥ १५ ॥ (कर्ण. ३०.२७)
पांडववनांत पेटे दावानलसाचि कक्ष रिपु ते जा(=ज्या) ॥ १६ ॥
(कर्ण. ३१.१५)
भाजा प्रतापदहनीं, खलबल हो, घस्मरांतका **हुरडा.** ॥१७॥ (कर्ण. ३१.४८)
कर्ण ह्मणे, 'तुज **सागर** भासे, मज भीम **कालवा** राया ! ॥१८॥ (कर्ण. ३२.१५)
स्नेहें लालन केलें माथां धरिलाहि मलिन वक्र **कच.** ।
तव शब्द तसा; भेदी हृदय, न दारुण असा नव क्रकच. ॥ १९ ॥ (कर्ण. ३२.१६.)
[ही कचाची उपमा इतर ठिकाणींही आलेली आहे.] (आदि. अ. १० गी. ९)
शररचितक्षत भूषणहेतु, **जसा रंध्रयोग मोत्यातें.** ॥ २० ॥ (कर्ण. ३२.२९)
जरि होति कोळसे परि धनंजयीं पडति टोळ सेना कीं ।
येथ रजीं रक्तीं वपु, तदधिक सुरतांत घोळसे नाकीं. ॥ २१ ॥ (कर्ण. ३३.३३)
वृष्टि करीच, न राहे प्रावृट्घन जेंवि जरि भिजे सार्थ. ॥ २२ ॥
(कर्ण. ३४.२८)

कुरुपतिहित गुरुसुत करि परिभव, परि नृप न कुरुकटक रक्षी, ।
गृहरक्षणा विझवितां उदकें स्नेहाग्नि जेंवि गृह भक्षी. ॥ २३ ॥
(कर्ण. ३४.३०)

शर सोडिले तयावरि **गिरिवरि जैसीं पयोधरें अर्णें.** ॥ २४ ॥ (कर्ण. ३४.३१)
तेव्हां परपुरुप म्हणे, 'पार्था! दिव्यास्त्र**वात** सोडावा, ।
झोडावा, मोडावा वैरद्रुमकर्ण, बाण जोडावा. ॥ २५ ॥ (कर्ण. ४९.२०)
कर्णावरि बहु कोपे पार्थ जई तेधवां अनळसाचा ।
देह ज्वालामाली भासे त्या **रणमखीं अनळ साचा.** ॥ २६ ॥ (कर्ण. ४९.२१)
तुटला ध्वजचि न केवळ, विजयाचा भरवसाहि तुटला हो! ।
सुहृदश्रुबिंदुसह तो पडला, **बळधैर्यसेतु फुटला** हो. ॥ २७ ॥ (कर्ण. ४९.४१)
तो शर **कृत्यानळसा** दुर्घटचक्रोद्धतिक्रियानळसा ।
गांठी कुरुबळविजय**प्रासादाच्या रविप्रभा कळसा.** ॥ २८ ॥ (कर्ण. ४९.५१)
शाणनिशितमुखबाणप्राणभृदीड्यार्क सूनुच्या अमळा ।
खंडी नाळापासुनि कमळा मारुत तसा शिरःकमळा ॥२९॥(कर्ण. ४९.५२)
जैसें खमुखींचें जळ खळबळ पळ, पळ न लागतां काढी ।
मरतांचि कर्ण, चिंता भीतिहि शिरली मनामधें गाढी. ॥ ३० ॥ (कर्ण. ४९.५८)
मथिलें अहिला विजयें; **रजतांसि न पाविजे तुळा कथिलें.** ॥ ३१ ॥
(कर्ण. ४८.९)

भस्म कराया न लगे दवदहना फार कोप **टोळाचें**, ।
तेंवि नरास न, अहिचें **खंडन करि जेंवि तो पटोळाचें.** ॥३२॥(कर्ण.४८.१०)
स्रवला प्रेमाश्रुजळ, द्रवला पाहोनि शांतनव तो यां, ।
जैसा प्रसवे, प्रेक्षुनि चंद्रकरा, चंद्रकांत नवतोयां ॥ ३३ ॥
(भीष्मभक्तिभाग्य ४४)

तें साहिलें परोपरि **परपादाक्रमण जेंवि सोपानें.** ॥ ३४ ॥ (गदा. ४.११)
सेना सर्व मिळाल्या धांवुनि अत्यंत शीघ्र दोघांतें ।
जैशा तटिनी गंगायमुनांच्या श्रावणांत ओघांतें. ॥३५॥ (द्रोण. १६.६१)
वरील बाह्य सृष्टींतील उपमा कितीतरी अनुरूप, उदात्त व हृदयंगम आहे!
शोक**ग्रीष्मविशुष्कीं धर्मसरीं** ताप बंधु**यादानीं** ।
धरिला, तो प्रशमविला भीष्म**घनें** चित्सुधेचिया दानीं. ॥ ३६ ॥ (भीष्मभक्ति. ९३)
यांतील रूपक किती खर्संग आहे!
न शरत्काळींच्याही, ये प्रभुदृष्टिप्रभाव पुनिवेतें. ॥ ३७ ॥ (भीष्मभक्ति. १०६)
पुण्यप्रदीप उजळी योजुनि तेथेंचि धनशरीराज्य ।
वोंवाळीं देवद्विजपद, यासाठींच तो करी राज्य. ॥ ३८ ॥ (भीष्मभक्ति. १९०)
चुंबक लोहासी तसा, वेणुरवें जनमनासि आकर्षी. ॥ ३९ ॥ (अवतारमाला २६०)

परमदुरासद सर्वहि भट, **तैलकटाह बहु जसा कढला.** ॥ ४० ॥
(मल्लारिविजय २८)

शिवकीर्ति किति स्वच्छा **अमृतनिधि ह्मणे, असी न मल्लहरी.** ॥ ४१ ॥
(मल्लारिविजय ४५)

जीचा प्रसाद बुद्धि ज्ञाना दे, **पावका जसा पवन.** ॥ ४२ ॥ (मदा. ३.१६)

तिसरेंहि 'शत्रुमर्दन' हें नाम व्यर्थ, सर्व देहांत ।

एकचि पुरुष बहु दिसे, **जैसा आदर्शजडित गेहांत.** ॥४३॥(मदालसो. ५.२८)

भुवनीं प्रसरत असतां यश सहजचि, **जेंवि वारिवर तेल.** ॥ ४४ ॥
(कर्ण. २७.२६)

परि **हृदयमृद्घटांतुनि उपदेशामृत हळूहळूं गळतें.** ॥ ४५ ॥
(मंत्रभाग. ६५८)

वाचिक तुमच्या दयिता कृष्णाचें सांगतों तुह्मां, परिसा; ।

ह्मणुनि असें ज्ञान कथी **घांसी सुविशुद्धकांचनीं परिसा.** ॥ ४६ ॥
(मंत्रभागवत १०.६०४)

भक्त प्रेमें प्रभुला चालवि, **जैसें तरंडका** शीड. ॥ ४७ ॥ (पांडुरंगदंडक ४७)

असि साधु साधुपतिसी गाठि पडे, ती **जसी अया परिसा.** ॥ ४८ ॥
(उद्योग. १.५८)

खळमळसंसर्गास्तव न रणकसीं गुरुहि सैन्यहेम तरे. ॥ ४९ ॥
(उद्योग. ४.३४)

विघरो दायादांचें बळ मन, **हें कुळ जसें जळीं विरतें.** ॥ ५० ॥
(उद्योग. ११.१५)

उदकें भेंडा जैसा, याच्या श्रवणेंचि तो विरो पापी. ॥ ५१ ॥ (उद्योग. १२.२९)

विटदृष्टि ते कलत्री भावी **स्वनखांत सूच वीरमणी.** ॥५२॥ (विराट. १.१२२)

जें कर्म **सिंधु** इतरां, मज द्विदासासि **आड** वाटे तें. ॥ ५३ ॥ (विराट. १.१७२)

उमगा वरें चतुरहो ! तो साधु तपःसमृद्धिचा **कुणगा.** ॥ ५४ ॥ (विराट. १.२१)

त्याच्या आह्मां, तेंव न पार्था बहु धाक रात्रि गर्ताचा. ॥ ५५ ॥ (विराट. ३.३०)

(२) अभूतोपमाः—

शोषण जलराशीचें, संसर्पण जेंवि रत्नसानूचें, ।

अद्भुत वृषमरण गमे, कीं गगनाहूनि पतन भानूचें ! ॥ ५६ ॥ (कर्ण. ६.२)

नृपति बहु विलाप करी सूतासि म्हणे, 'अहा ! कसे घडलें ? ।

या ! संजया ! अकस्मात् रविबिंब गळोनि भूतळी पडलें ! ॥ ५७ ॥ (कर्ण. ६.३.)

(३) अयोग्य उपमाः—

ह्मणति विभो ! भेटेल **क्षितिजेसह कीर्तिही नवी रमणी.** ॥ ५८ ॥
(मंत्ररामायण युद्धकांड ४२)

(सुग्रीवादिकपि रामसांत्वन करितांना जें वर ह्मणतात तें एकपत्नी रामाला शोभत नाहीं).

हा पलभोजन, गूथीं जसा कृमि, अघीं तसा रमे, यातें ।
मी पलमात्रे वधितों जैसा मृगकांत सारमेयातें. ॥ ५९ ॥

(रावणासंबंधीं मारुतीच्या भाषणांतील वरील गीतींतील दोन्ही उपमा अगदींच अयोग्य भासतात.)

पुनरपि ते रागानें जाउनि **गुडराशिला पिपीलिकसे;** ।
लंका व्यापुनि ह्मणती, 'खल हो ! अद्यापि वांचलेत कसे ?' ॥ ६० ॥
(मंत्ररामा. युद्ध. ३८९)

अस्थिरता जे श्रीची ते तूझ्या शत्रुजीवनीं राहो; ।
संतत कल्याण असो, **विपक्षलोकप्रतापरविराहो** ! ॥६१॥ (मंत्ररामा. युद्ध. ७५५)

(शत्रूला सूर्याची व रामाला राहूची उपमा शोभत नाहीं.)

अन्यनिशाचर**जीवनरस** नेला राममार्गण**भ्रमरीं.** ॥६२॥ (मंत्ररामा. युद्ध. ३३४)

(शृंगारप्रसंगी योजण्याची भ्रमराची उपमा युद्धप्रसंगीं शोभत नाहीं. तीमुळें 'प्रलयसंमर्दनादि वीररसोत्कर्षक क्रियांचा लोप होऊन चुंबनालिंगनादिकांचा भास होऊं लागतो.' म. बा. हंस)

न दिसति ह्मणउनि केवळ **काय नसति गुर्जरीस कुच,** राजा ! ॥ ६३ ॥
(विराट. २.१२)

स्वप्रिय दाउनि, तन्मन करुनि बहुत आपणापरिस वेडें, ।
ऐसा देवसुत बरा कांत, ह्मणे **सुपति, कुपति, पुर खेडें.** ॥ ६४ ॥
(हरिवंश ३६.१०१)

तेव्हां धर्मरथावरि नकुळ असा होऊनी पराभूत, ।
गेला मांत्रिकनिर्जितशक्ति **शरण काय ईश्वरा भूत.** ॥ ६५ ॥ (कर्ण. १४.७२)

हुडकिति शवें पहा पतिसुत वळखायासि बायका सारीं; ।
या **कमळवनविहारा शिरल्या हंसीच काय कासारीं** ? ॥६६॥ (स्त्री. ४.७)

दुर्योधन धर्माशीं युद्ध करी **जेंवि तेल तूपासी.** ॥ ६७ ॥ (कर्ण. ९.३)

(हा तेलतूपाचा दृष्टांत पंतांचा फार आवडता दिसतो. तो अनेक स्थलीं आला आहे. उद्योग. ६.३५ इत्यादि)

होते निर्भय आश्रित अवलंबुनि तुज, **जसे कुपा सरडे.** ॥६८॥ (सौप्तिक. २.३६)

बहु दिवसां सुत पाहुनि कुंती झांकून आननास रडे; ।
सरडीसही बहुप्रिय जे मत न पुरा न कानना सरडे. ॥६९॥ (स्त्री. ३.६०)

ती धर्मा मर्यादा सोसावी सर्वथा न रामाशीं; ।
जागृदवस्थेंत जशी नासाग्रीं बैसली नरा माशी. ॥ ७० ॥ (गदा. ५.२)

ते स्त्रीविलाप दुःसह भूपा, **अतिसारिया जसे हिरडे.** ॥ ७१ ॥ (शल्य. १.८)

तैसेचि निर्गमींही निजले, घालूनि **बाजसें हो तें.** ॥ ७२ ॥ (सौप्तिक. २.३०)

अरिकरिघटा पहातां तुज नरसिंहा विमूढगति हो; ऊ ।
जसि मर्कटासि रुचिदा, तसि तव बाणासि शत्रुचिति होऊ. ॥७३॥ (कर्ण. ७.१७)

मानिति ज्या अनपत्या धनपत्याखंडलादि लोकेश; ।
ज्यां होय जो अपुत्रिक जन नार्की, **भोजनांत** तो **केश.** ॥ ७४ ॥ (शांति. ४.६१)
गेला स्वर्गासि अमित सुकृतें जोडोनि राय; तें नार्की ।
होय सुदुःसह शक्रा, **जैसें बाळासि रायतें नार्की.** ॥ ७५ ॥ (आदि. ११.७५)
उत्तर म्हणे नको गे! पायां पडतों बृहन्नडे! सोड; ।
जोड दिली दुखवुं नको, **केवळ पितृकरतलस्थ हा फोड.** ॥ ७६ ॥
(विराट. ३.७४)

प्रभुला बिभीषण म्हणे 'पावेल जया न रावणि कदापि'; ।
निजकपटज्ञा पाणी जोडी, भोळया नरा वणिक दापी. ॥ ७७ ॥
(वन. १२.५३)

धृतराष्ट्रासि रुचेसी सांगे अत्युग्रनीति तो कणिक ।
वणिक ग्राहकहस्तीं देतो विषसर्पिशर्कराकणिक. ॥७८॥ (आदि. २८.५)

याचप्रमाणें यमकाकरितां पंतांनीं क्वचित् अयोग्यशब्दरचना, तसेंच अयोग्य वर्णनही केलेलें आढळतें.

मच्छत्रुविजय इच्छिसि दुष्टा! बंधुत्व हें तुझे **जळलें.** ॥ ७९ ॥
(मंत्ररामायण युद्ध. ७०)

'जळलें' हा बायकाच्या तोंडांत शोभणारा शब्द रावणाच्या मुखांत अयोग्य वाटतो. सावित्रीचें चरित्र ऐकण्यास 'योग्य साधु, पतित न या' असें वर्णन (वन. १३.३) तसेंच उषेनें पतीचें चित्र ओळखतांच चित्रलेखा 'आणि अनिरुद्धासहित उचलुनि **बाजे**' ह्या स्थळीं 'बाज' शब्दाची योजना हीं अयोग्य भासतात.

(४) उपमेवर उपमाः—

क्रोधि हृदय गुर्वक्षर मोडीं, कीं मूल लाडिकें लिहितें. ॥ ८० ॥ (उद्योग. १३, १६४)
काय शुका मदिराक्षी, खदिरा क्षीणल दे रणीं कदली ? ॥८१॥ (उद्योग. १३.१८९)
लब्धतदनुमोदन तो **जंबुक सिंहीस,** कीं सकाम ससा ।
व्याघ्रीस, सतीस बळें, शांतीस वरावयासि तामससा. ॥ ८२ ॥ (विराट. १.४६)
आस्तिकशपथ अहीचें, कीं हरिचें आवरी बल खलीन, ।
धर्म तसें भीमाचें, तो ह्मणतां भूखलीं खल खलीन. ॥ ८३ ॥ (विराट. १.६९)
तो शर गरधर खरसा, पविसा, रविसा, स्मरारिसायकसा; ।
पार्थभुजांतरिं शिरला, वाल्मीकामाजि नागनायकसा. ॥ ८४ ॥ (कर्ण. ४९. ३१)
सुरनरमंडलकुमुद प्रभु भासे पूर्णचंद्र विकसविता, ।
कीं त्या कमळवनीं हा शोभेचें पिकवि विपुल पिक सविता. ॥ ८५ ॥
(षष्ठ स्तोत्ररामायण ९२)

सार्थक पार्थ करी, ती कैरविणी तो सुधांशु गौरविता, ।
सविता विनसीसि वरि, कीं भेटे तो गुणज्ञ ती कविता. ॥ ८६ ॥ (कृष्ण. ८६.२७)

सूत म्हणे 'कविगुरुच्या जैसें रसिकांसि वाटलें कवनीं, ।
कीं उगवतां अदितिचा पांथा जायास वाट लेंक वनीं; ॥ ८७ ॥
किंवा जसें सुकंठप्लवगाला वाटलें कपींद्र वधीं, ।
वेननिधनीं प्रजांला, त्या पांचाळादिकां तसेंच तधीं. ॥ ८८ ॥ (गदा. ६. २. ३)
सद्धर्मबोध विनता सच्छिष्या, सिद्धरस जसा कथिला, ।
कीं लोहा स्पर्शमणी, होय तसा जो गुरूत्तमें कथिला. ॥ ८९ ॥ (कर्ण. ४१.७७)
वारण विदारिलें बहु बाणव्रातें, (१) जसे गिरी पविनें, ।
(२) रविनें किरणगणें घन, (३) की न्यायें बौद्ध खंडिलें कविनें. ॥९०॥ (कर्ण. ८.३२)

वरील गीतींत नैयायिक बौद्धमताचें खंडन करितात ही न्यायशास्त्रीय उपमा पंतांनीं दिली आहे. यावरून त्यांना त्या शास्त्राची ओळख होती असें मानणें गैर होणार नाहीं.

तो गज पळोंचि लागे, नाटोपे, (१) प्राकृता जसें चित्त; ।
(२) किवा जसें अनावर यत्नशतें, दैव कोपतां वित्त. ॥ ९१ ॥ (कर्ण. ८. २६)
क्षणहि न उरेल नकुळा! कर्णनृसिंहापुढें तुझा दर्प, ।
सर्पप्राण जसे खगपतिपाशीं, शंभुनिकट कंदर्प. ॥ ९२ ॥ (कर्ण. १४. ४४)

दुर्योधन परमेश्वर···कीं नृप रवि···(कर्ण. १४. ७४–७५) 'पौराणिक उपमा' व 'ज्योतिःशास्त्रीय उपमा' अनुक्रमांक १६६,९८ पहा.

अरुण रवीचा सारथि, दहनाचा वायु, यत्न कीं विधिचा; ।
सारथि हो तूं तैसा कर्णाचा धैर्यबळपयोनिधिचा. ॥ ९३ ॥ (कर्ण. २१.१२)
शवमांसमत्त जंबुक तूं, गजमुक्ताश सिंह तो जिष्णु; ।
तूं शशक पार्थ गजपति; कीं दानव तूं सिताश्व तो विष्णु. ॥ ९४ ॥ (कर्ण. २१.६)
आखु बिडाल, श्वान व्याघ्र, शृगाल द्विपारि, शशक करी, ।
विष अमृत, सत्य अनृतहि तूं पार्थ, तया तुझां नसेचि सरी. ॥९५॥ (कर्ण. २१.१३)

(५) कृमिपतंगसर्पादिसृष्टींतील उपमाः—

मोहळ कृष्ण सुरसमय, गोपी सरघाचि, त्यासि त्या चुकल्या. ॥ ९६ ॥
(मंत्रभागवत १०.३९८)
सुरदृष्टि**मक्षिकांचा** मोहक तो **इक्षुचा सुरस भेला.** ॥९७॥ (उद्योग. ८.५९)
प्रभु निजभुज त्या तुंडीं शिरवी, **जैसा महाबिळीं उरग.** ॥ ९८ ॥
(मंत्रभाग. १०.४६०), तसेंच कर्ण. १८.१९
पुच्छ रगडितां नागें धावावें, कडकडोनि चावावें. ॥९९॥ (कर्ण. १४.३)
कुरुसेनाभुजगीतें खंडी जो शरनखाननीं नकुल. ॥१००॥ (कर्ण. १४.३६)
कर्णाचे शरपातस्थळ सोडुनि पळति तेधवां दूर ।
शूरहि सोमक, **जैसे दंशाचे संघ लागतां धूर.** ॥ १०१ ॥ (कर्ण. १४.५५)
तसेंच कर्ण. २४.२०;
मोहमहाजगरानें पांडुसुताचा **चमूपती गिळिला.** ॥ १०२ ॥ (कर्ण. १६.४)

गळतां कवच नृपति बहु शोभे, **अहि जेंवि कंचुकापगमीं.** ॥ १०३ ॥
(कर्ण. ३१.१९)

कुंतीनंदन चंदन, झाली तत्खंडनक्षणीं जागी, ।
धांवे कर्णावरि भुजशाखेपासूनि, **शक्ति ते नागी.** ॥ १०४ ॥ (कर्ण. ३१.२१)
तरि पार्थासि न सेना त्यजिति, **मधुहरासि जेंवि सरघाली.** ॥ १०५ ॥
(कर्ण. ३३.५७)

सप्तद्वीपा पृथ्वी वृप उचली चार अंगुलें वरती. ।
बडिशासि जसी मत्स्यी नुगळी चक्रासि कांपवी पर ती. ॥१०६॥ (कर्ण. ४८.५७)
गेहांत भोगितें मन, **जैसें जाळयांत आपदा याद.** ॥ १०७ ॥
(मंत्रभागवत १०.६४२)

न विटे ब्राह्मणनमना क्षत्रमन, **जसें वनासि मीनमन.** ॥ १०८ ॥ (उद्योग.९३४)
सच्चित्त गुर्वनादर, **तोयानादर करी न मीन मनें.** ॥१०९॥ (उद्योग. १०.७७)
वात्सल्यदृष्टि जाणे प्रभुची, जाणे तसें न **कूर्मी** तें; ।
कूर्मी काय इचें यश, हासे अमृताब्धिच्याहि ऊर्मीतें. ॥ ११० ॥ (भीष्मभक्ति.१०७)
परजीवन हरितीच प्रखर शरें, **पद्मरस जसें भ्रमर.** ॥१११॥ (मल्लारिविजय. ३९)
सात्यकिचेही बाणव्रज झाले त्या वृपासि घोळसिते, ।
जेंवि पिपीलिक भुजगा, किंवा व्याघ्रासिं जेंवि कोळसिते. ॥ ११२ ॥
(कर्ण. १९.५)

भक्तयशस्वयशांतें गात्याच्या ठाकतो पुढें मागें; ।
डोलतसे परमसुखें; **डोलावें सुस्वरें जसें नागें.** ॥११३॥ (पांडुरंगदंडक १४)
बा! **दावपावकासीं समर करुनि पावतिल पतंग जया?** ॥ ११४ ॥
(उद्योग. ९.९२)

कु रुचीका मासीसी न सिवे क्लीवासि कीर्ति हो! कुरुची. ॥ ११५ ॥
(उद्योग. १२.४)

पावेल लय, **ज्योतिस्पृक् जेंवि पतंग मातला विलया.** ॥ ११६ ॥
(विराट. १.१६०)

दूर चढोनि पडावे ते **गोमयगोलकार कीटकसे** ।
अस्खलित उच्चपदवीप्रति लंघूं पाहतात नीट कसे? ॥ ११७ ॥ (विराट. २.१०)
कीचकरहित विराट स्पष्ट **जसा सर्प नीरदन दीन.** ॥ ११८ ॥ (विराट. २.३१)

(६) कृषिशास्त्रीय उपमाः—

राया! अशांत धावुनि तव सुतबळही धनंजया वेढी; ।
त्यांत दिसे पार्थरथध्वज, **जेंवि खळयांत वृपगणीं मेढी.**॥११९॥ (कर्ण. ११.५६)
भगवत्प्रसादकल्पद्रुमशिखरसमाश्रितापगेयपिकें ।
श्रोतृक्षेत्रीं सात्विकभावांचीं पिकविलीं अनेक पिकें. ॥ १२० ॥
(भीष्मभक्ति. ९४)

(७) छंदःशास्त्रीय उपमाः—

गोपीगोपयशोदानंदीं दिव्यांवरीं ललामगणीं ।
आधीं मध्यें मगही गौरव सम करि जसें भला मगणीं. ॥ १२१ ॥
(कृष्ण. ८४.४४)

(साकी) प्रभु तारात्मज दूतमुखें त्या हित कथि तें खळ न गणी, ।
त्यांत **वक्रपण आधीं मध्यें अंतिंहि जैसें मगणीं.** ॥ १२२ ॥
(मंत्रगर्भसाकीरामायण युद्ध. ४)

('म' गण=तिन्ही गुरुअक्षरें ^ ^ ^)

(गीति) **यगण** जसा **एक मुखीं मात्र सरल,** भूप **वक्र मग सर्व.** ।
ज्येष्ठत्व, राजसुतशत, औरस ज्याच्या मनीं असा गर्व. ॥ १२३ ॥
(मंत्रभागवत १०.६३८)

('य' गण आद्य लघु—^ ^)

(८) जादूटोण्यासंबंधीं:—

सन्मति अपवादा भी, **करणीच्याहि न वधू तशि बिभ्याला.** ॥ १२४ ॥
(वन. ७.५१)

वीर शतानीक गदा सोडी, **मांत्रिक जसी महाकृत्या.** ॥१२५॥ (कर्ण. १५.१०)

मांत्रिक मंत्रें मोहुनि धरितो जैसा पराक्रमें साप. ॥१२६॥ (कर्ण. २३.६)

मद्भूतग्रस्ता तुज धर्मात्मा सिद्धमंत्र पाहेल, ।
साधुपुढें मोह तसा, क्षणभरिहि न हा प्रलाप राहेल. ॥ १२७ ॥ (कर्ण. २४.२३)

कर्णानिलें उडविली, **रक्षामंत्रें जसी कुजनदृष्टि.** ॥ १२८ ॥ (कर्ण. ३०.६८)

(९) ज्योतिषीय उपमाः—

(गीति) सहदेव नकुळ दोघे दोभागीं, त्यांत धर्मरथ चाले; ।
भासति जाणों क्षितिवरि **पूर्णेंदुसमेत शुक्र गुरु** आले. ॥ १२९ ॥
(कर्ण. ३८.४७)

(श्लोक) आत्मतेज मुनि हा तुजमाजीं । ठेवुनी मथिल राक्षसराजी; ।
चंद्रमंडळिं जसा स्वकरांशीं । स्थापुनी रवि निशातम नाशी. ॥१३०॥
(छंदोरामायण सर्ग १४.११)

(गीति) रुक्मी जळे मनीं, परि **चंद्राचें तेज रविपुढें काय**? ॥ १३१ ॥
(मंत्रभागवत १०.७१८)

कोणासही न ह्मणविल यापरि **गुरु शनिहि कुजहि अष्टम 'हा!'** ॥ १३२ ॥
(शांति. ६.१२)

जैसे विमार्गगामी गुरु, कवि, बुध, मंगलग्रह क्रूर, ।
तैसे लोकक्षयकर युद्ध करिति पांडुगुरुजनी शूर. ॥ १३३ ॥ (कर्ण. ११.४)

नक्षत्रें इंदुविणें, स्त्रीरत्नें प्रभुविणें तशीं गमलीं. ॥ १३४ ॥ (मंत्रभाग. १०.३९७)

त्या धर्मावरि धांवे, **पूर्णसुधारश्मिवरि जसा राहू.** ॥१३५॥ (कर्ण. ३८.४९)

कुंडलमंडित पांड्यक्षितिपतिचें शिर धरातळीं पडलें; ।
भासे पतन **विशाखामध्यगपूर्णेंदुमंडला घडलें.** ॥ १३६ ॥ (कर्ण. १३.२८)

कीं वृष **रवि**, शर **कर**, भट **उडु**, शोणितपूर **अरुण**, भीरु **तम**, ।
विजय **इनकांत**, नृप **विधु**, बळप **ग्रह**, इष्ट **पद्म** हृष्टतम. ॥१३७॥ (कर्ण. १४.७५)
झालीं नष्टप्रायें शत्रुबळें, **जेंवि उदयिं नक्षत्रें.** ॥ १३८ ॥ (कर्ण. १९.३०)
कर्ण क्षतजें न्हाला त्या काळीं **तरुण अरुणसा शोभे** ॥ १३९ ॥ (कर्ण ३१.२४)
कर्णें त्या नृपवृंदा भेटि दिली, जसि कलेवरा जीवें; ।
करि भटमुखें विकसितें तो, **रविचा उदय जेंवि राजीवें.** ॥ १४० ॥
(कर्ण. २०.२०)

एकें अमृतकरेंचि व्योम धवळतें न तें उडुप्रकरें. ॥१४१॥ (कर्ण.२९.३६)
दुःशासनासि तेव्हां सात्यकि करि विरथ; आणि **आभाळीं** ।
केतू तीन तसे, शर तीनचि रोवी तयाचिया भाळीं. ॥ १४२ ॥ (कर्ण. ३० ६५)
तो **शर शिरे शरीरीं सौरीच्या, शिखरिच्या जसा** अशनी, ।
न शनि क्रूर अहिपतिहि, रत ते स्नेहामृतीं न असृगशनीं. ॥१४३॥(कर्ण. ३२.२८)
अर्जुन तुझ्या प्रसादें तेजस्वी, त्वांचि तेज निज यातें ।
दिधलें, **ज्वलनासि जसें रविनें पावावयासि विजयातें.** ॥ १४४ ॥
(कर्ण. ५०.३५)

राहुविमुक्तार्क तसा झाला गतमोह भासता पार्थ. ॥ १४५ ॥ (कर्ण. ४९.३८)
वेष्टुनि शिर सितवस्त्रें बहु पहिल्याहूनि पावला तो भा; ।
पूर्णेंदुमंडलानें उदयाचल जेंवि पावतो शोभा. ॥ १४६ ॥ (कर्ण. ४९.७९)
अहिचा जसा किरिटीं, नगशिखरीं न प्रहार अशनीचा; ।
अत्यंत तीव्र ह्मणती परी तसा दृष्टिपात न शनीचा. ॥ १४७ ॥
(कर्ण. ४७.७७)
अर्घाहि नव्हे काय ग्रहणीं रविमंडळ प्रभाविरहें? ॥ १४८ ॥
(गदा. ४. १४)
रविच्या रश्मिपुढें तम, तेंवि टिके ज्यांपुढें न अविचार. ॥ १४९ ॥
(अवतारमाला १०५)

वाटे **उदयनगाग्रीं शारदपरिपूर्णचंद्रमा** बसला. ॥१५०॥(अवतारमाला १६२)
निर्जीवन करि अहिता, **स्वकरांहीं जेंवि पल्वला सविता.** ॥ १५१ ॥
(अवतारमाला २४९)
विखरी स्मरहर खरतर शर सरसर, **अहिमकर जसे किरण.** ॥ १५२ ॥
(मल्लारिविजय ३८)
चंद्रातें, पावुनियां तपनद्युति, पावती अधिक कान्ती. ॥ १५३ ॥
(मदालसो. २.४४)

रविनें विधुसा, प्रभुनें स्वगृहागत मलिन ही न पोळविला ॥१५४॥ (उद्योग.१.४७)
रवि स्वगृहीं ह्मणजे सिंहराशींत असतां चंद्र आला तरी त्याचा अस्त होत नाहीं. या ज्योतिःशास्त्रनियमाकडे येथें कवीचें लक्ष्य आहे.

गगनमणिकरींच्या तम केव्हां तरि काय हो! शिवे कमला? ॥१५५॥
(विराट. १.१६)

(१०) तीर्थक्षेत्रादिपवित्रवस्तूविषयक उपमा:—

प्रद्युम्ना देवसुता मोठ्या भाग्येंकरूनि आवडती ।
झाल्यें, भगिनी हो ! मी **जैशी रामेश्वरासि कावड ती.** ॥ १५६ ॥
(हरिवंश ३६.९९)

हीच उपमा 'पांडुरंगदंडक'गी० १९ यांत आली आहे.

विष्णुपदीं पिंड जसा, शत्रुशिरीं पाय देय जो डावा ।
तो म्यां दिला अधिक याहुनि जन्मुनि काय अर्थ जोडावा. ॥ १५७ ॥ (गदापर्व)
लिंग पदच्युत भग्नहि लंघ्य नव्हे, साधुनीतिला पाहें. ॥ १५८ ॥
(गदा. ४.१३)

गुरुसदनीं वेद जसा, विषयीं तैसा न देह राबेल; ।
तो दास्यरूप वाहे त्या **नित्य चुकों न दे हरा बेल** ॥ १५९ ॥ (आदि. २.२५)
दारवियोग प्रभुला तो, **जेंवि ध्वजवियोग कलशाला.** ॥ १६० ॥
(अवतारमाला १३८)

भजती जैशा यात्रा गंगायमुनाख्यसुसरिदोघांतें, ।
तैशाचि रामकृष्णा गोपी; उपमा न दुसरि दोघांतें. ॥१६१॥ (अवतारमाला २३३)

(११) दैववाद व प्रयत्नवाद:—

शास्त्रप्रोक्तविधानें रथ कल्पुनि शीघ्र आणिला शल्यें, ।
जेंवि मनोरथ साक्षात् केला दैवेंचि सिद्ध वात्सल्यें. ॥ १६२ ॥
(कर्ण. २३.३३)

पार्थापुढें तसें **बळ कर्मविपाकापुढें जसें न चले.** ॥१६३॥ (कर्ण. ३०.१८)
आला कीं कर्ण बळी **जैसा अनिवार्य कर्मपरिपाक.** ॥१६४॥ (कर्ण. ३१.४६)

(१२) धार्मिक उपमा:—

जो कीं यथार्थनामा राजा ! पांडवसहाय वसुदान, ।
आचार्यें काळकरीं दिधलें समराध्वरीं तदसुदान. ॥ १६५ ॥
(कर्ण. ४.२४)

शिरले परमोदारा भगवंताच्या यथेष्ट शर देहीं; ।
ब्रह्मण्यवदान्यसधनसाधूच्या अर्थिजन जसे गेहीं. ॥ १६६ ॥
(कर्ण. ११.४७)

धर्मज्ञ गृहस्थ जसा, प्राप्तातिथिकारणें गृह निवेदी; ।
गुरुसुत तसा निजास्त्रें अर्पी, पार्थासि विमुख हों नेदी. ॥ १६७ ॥ (कर्ण. ११.४१)
संशप्तकांसि टाकी, स्वीकृति गुरुसूनुचीच पार्थ करी; ।
त्यजुनि अपांक्तेयातें पांक्तेयांतेंचि अतिथि जेंवि वरी. ॥ १६८ ॥
(कर्ण. ११.४२)

त्यांहीं केली प्रभुची कीर्ति **स्वप्रेमशिशुगळां जिवती.** ॥ १६९ ॥
(मंत्रभागवत १०.४२७)

रक्षी गुरुसेवा हे **सच्छिष्यशिशूसि** गालवा ! **जिवती** ॥१७०॥ (उद्योग. ८.८८)
जसि इष्टि दशहविष्का, तींत करिति पिष्टपिंड दशधा, ती. ।
आचार्यपुत्र दावी युद्धमखीं पांड्यगजवधीं, जाती. ॥ १७१ ॥ (कर्ण. १३.२९)
तूं (=धर्म) **समरयज्ञदीक्षित** धर्मात्मा सत्यसंध, **मी होता;** ।
अधिकार **धार्तराष्ट्राहुतिशतहोमीं** मला दिला होता. ॥१७२॥ (कर्ण. १८.२१)
यजमान पात्र ह्मणती **ऋत्विक् संचितफळाप्रति** ज्ञाते. ।
ज्यांचें त्याच्या हातें हो कर्म, न हो चला प्रतिज्ञा ते. ॥ १७३ ॥ (कर्ण. १८.२२)

ही रणयज्ञोपमा संस्कृतप्राकृतकवींस फार प्रिय आहे. पंतांनींहि आपल्या रामायण, भारत इत्यादि काव्यांतून ती वारंवार विस्तारानें वर्णिली आहे. सप्तमस्तोत्ररामायण गीति ६४–६८ ('लंका **रणमहाक्रतु**…') पहा. केकावलि पृ० ३३६ पहा.

पार्थहि रथातळीं निज तेजें सकळ स्वशत्रुभट लोटी, ।
स्वर्गाखालीं ढकली **शक्र जसा वेचतां सुकृतकोटी.** ॥१७४॥ (कर्ण.३३.३०)
दुर्व्यसन **राहु गिळितां पुण्यें सज्जनरविप्रभा वांचे** ॥१७५॥ (कर्ण. ५०.२६)
'शूद्र श्रुतिस', मज तसा हा' ह्मणुनि इणेंहि वा ! मरायाचा. ॥ १७६ ॥
(मदालसो. २.१८)

राज्ञीला शोक जसा **ताप तसा पापिया न रौरव दे.** ॥१७७॥ (मदा. २.८१)
भाद्रचतुर्थी कृष्णादेहचि बहुधा **कलाप** हा, याला ।
स्त्री बाळ वृद्ध साधुहि पुरजन वहु धाकला पहायाला ॥ १७८ ॥ (विराट. १.१७५)
अरिरक्त पहा **इक्तप्रिय गणपमुखस्थहि असा न सेंदूर.** ॥ १७९ ॥
(विराट. १.१५३)

(१३) पशुसृष्टींतील उपमाः—

वाघहि वळता परि खळ वळला नाहीं, तिलाचि बहु दापी. ॥ १८० ॥
(मंत्रभाग. १०.८४)
जाणों तो **सिंहें निजभागहर वृक** क्षणामध्यें धरिला. ॥ १८१ ॥
(मंत्रभाग. १०.४७५)
मोघश्रम जलदघटा परते, ते **जेंवि हरिपुढें कुतरीं.** ॥ १८२ ॥
(मंत्रभाग. १०.३६५)
न निजति दिवाहि काराद्वारांतचि जागती **जसे कुतरे.** ॥ १८३ ॥
(मंत्रभाग. १०.६७)

अन्योन्यातें भेदिति शस्त्रीं, **शृंगीं जसे हठी बैल.** ॥ १८४ ॥ (कर्ण. १६.१७)
भी सात्यकिला कौरवसेना, **व्याघ्रासि जेंवि वृषसेना.** ॥१८५॥ (कर्ण. ३०.५८)
जेव्हां असें महाबळ भीम शरें दिनकरांगजा ताडी, ।
तद्वेदना वृषातें क्षणभरि मोही, **जसी गजा ताडी.** ॥ १८६ ॥ (कर्ण. ३२.४६)
खलसेना निश्चेष्टा केली बांधोनियां तिचे पाय; ।

काय यशःपय घ्याया बांधियली फार मारकी गाय? ॥ १८७ ॥
(कर्ण. ३३.४१)

कीं कृष्णमतासि दिलें त्वां मन, **गीतासि जेंवि दे हरण.** ॥ १८८ ॥
(गदा. ५.३१)

सुर मथिति तद्बळातें, **हरिणांच्या व्याघ्र जेंवि कळपातें.** ॥ १८९ ॥
(मल्लारिविजय ३४)

रक्षीं, दुःखीं पडलों, **मृग जेंवि दवाकुळा अरण्यांत.** ॥१९०॥ (सदा.६.२२)
सुटला दाव्यापासुनि वत्स स्तन्यार्थ जेंवि गाईला ।
धांवे, अक्रूर तरा भेटाया कडकडुनि आईला. ॥ १९१ ॥ (मंत्रभागवत १०४८१)
तसा गजासि गंगा तसि हे आशीहि शुचितमा ! मातें. ॥ १९२ ॥
(उद्योग. २.१९)

ज्यासि न साधु सहावे, **जेंवि पहावे तुरंग न हल्याला.** ॥ १९३ ॥
(उद्योग. ९.९९)

फोडी जैशी व्याघ्रविमुक्त कुलभ्रष्ट धेनु हंबरडे. ॥ १९४ ॥ (विराट.१.७९)

(१४) **पक्षिसृष्टींतील उपमाः—**

मोर जसा मेघातें, प्रभुतें पाहूनि विधि तसा हर्षे. ॥१९५॥(मंत्रभाग.१०.२५५)
तसेंच उद्योग. १.३३ 'जाला **वृष्टीस मोरसा** मौन ॥'

वाट प्रभुची पाहे व्रज, **जलदाची तृषार्त चातकसा.** ॥ १९६ ॥
(मंत्रभाग. १०.२६३)

सुचिर गरगरां फिरवुनि लीलेनें, **गरुड जेंवि उरगातें.** ॥ १९७ ॥
(मंत्रभाग. १०.४५९)

नागासि गरुड तैसें, वोढी पुच्छीं धरूनिहि जडाला. ॥ १९८ ॥
(मंत्रभाग. १०.५३६)

ही गरुडभुजगोपमा वारंवार आढळते. कर्ण. १६.१८;१८,१४; विराट. (१.६७) पहा.
मोर भुजंगासि तसा, शाल्वासि प्रभु ह्मणे, उगा मंदा ! ॥१९९॥(मंत्रभाग.१०.९५९)
घालुनि धनुष्य कंठीं धरिला, धरि **गारुडी जसा अहितें.** ॥२००॥ (कर्ण.१४.६७)
न शिखंडी भी, तांडव करि, **जेंवि घनीं प्रमोदित शिखंडी.** ॥ २०१ ॥
(कर्ण. १६.१९)

मग त्या भोजें केला, सोडुनि तीव्रेषु, मूर्छित शिखंडी, ।
जैसा मेघें विद्युत्पातें वृष्टिप्रमोदित शिखंडी. ॥ २०२ ॥ (कर्ण. १६.१९)
ही मेघमयूरोपमा पंतांची अत्यंत आवडती आहे.
निर्मळ **विवेकमानसहंस** कसे शोककर्दमें किटला ? ॥२०३॥ (भीष्मभक्ति. ४६)
याच्या सुयशा सेविति सुकवि **जसे हंस मानसा सुसरा.** ॥ २०४ ॥
(अवतारमाला १७)

वायस यत्न करुनिही गतिला रोधील काय हंसाच्या? ॥ २०५ ॥
(अवतारमाला २१७)

ही हंसवायसाची उपमा पंताची फार आवडती दिसते. उद्योग. १.१३, १८ पहा.

तन्मतिस खररवें दे भय, **जेंवि श्येनगल बलाकेला.** ॥२०६॥ (मदालसो.२.२)

साचा, राया! माझ्या **चित्तखगा साधुसंग हा चारा.** ॥ २०७ ॥
(उद्योग. १.२४)

घूकासि जसा दिनकर, तुज सुजनोत्कर्ष पळ पहावेना, ।
तन्नाम तुला, **अहिला गरुडाचे नामासे** सहावेना. ॥२०८॥ (उद्योग. ९.४५)

यद्यश **बुजगवणें** दे भक्तासि **शिवों न काळकागातें.** ॥ २०९ ॥
(उद्योग. ८.६१)

ह्मणत्ये सभा तुज **जशी पिकरिपुकाकासि आंबराइ 'छी'!** ॥ २१० ॥
(उद्योग. १०.३)

सतुरगसारथिरथ मी झालों **शुक,** गुरुशरौघ **पंजरसा,** ।
शर शिरकले शरीरीं **कंजीं अळि शिरति जेंवि कंजरसा.** ॥ २११ ॥
(उद्योग. १३.१०६)

अंगारभुकूचकोरें पण न करावाचि पार खायाला. ॥ २१२ ॥
(उद्योग.१३.२१५)

(१५) पारमार्थिक उपमा:—

ज्यास रुचि अर्थिरतिची जेंवि **मुमुक्षूस भिक्षुसेवेची.** ॥ २१३ ॥ (द्रोण. ५.९४)

धर्मादि सर्व झाले दुःशासनपरिभवें परम हर्षी; ।
ज्ञानें मोहपराभव होतां जैसे तपःपर महर्षी. ॥ २१४ ॥ (द्रोण. ३.७५)

जो मृत्युलाहि न गणी, जैसा योगी मुनीज्य संसारी.॥२१५॥(कर्ण.६.६६)

नैराश्य उचित नोहे, स्पष्ट करावें धरूनि आव रण, ।
यत्नें परवळ भेंदू, **भेदिति योगेंचि जेंवि आवरण.** ॥ २१६ ॥ (कर्ण. ७.५)

त्यांच्याचि क्षतजनद्या त्यांतेंचि रणांगणांत वाहविती, ।
निजविषयवासना बहु खवळोनि जसे न धैर्य राहविती. ॥ २१७ ॥
(कर्ण. ११.५९)

अज्ञ तपस्वी शिरला **विषयांत** तपोबलें कधीं न तरे ॥२१८॥ (कर्ण. ३०.२८)

पांचाळपांडुकैकयवीरांनीं रोधिला चमूपाल, ।
लंघावया शकेना त्यांसि, **जसा ब्रह्मविज्ञना काल.** ॥ २१९ ॥ (कर्ण. ३०.८१)

तापविलें बळ सूर्ये भीमेंहि, जसें हुताशनीं चर्म; ।
पावे संकोच तसें, **भक्तिज्ञानोदयीं जसें कर्म.** ॥ २२० ॥ (कर्ण. ३३.६)

यमदूत दोष विघ्न त्वत्कीर्तनभयरवें जसे पळती, ।
तैसेचि मद्धनुर्ध्वनिभीतभट क्षिप्र पळति, ते गळती. ॥ २२१ ॥ (कर्ण. ३५.४)

जलदांधकार हरिला पार्थे योजूनि पावना सारा; ।
भक्तें मोह जसा हरिनामा योजूनि पावना सारा. ॥ २२२ ॥ (कर्ण. ४९.२५)

याच अर्थाची किंचित् भिन्न शब्दयोजनेची कर्ण. ४९.२६ 'वरुणास्त्रतिमिर…' ही गीति आहे.

कर्णें निष्फळ करितां **यतिनें ललनाकटाक्षसे बाण.** ।
आग्नेय अस्त्र योजी पार्थ तयाचे हरावया प्राण. ॥ २२३ ॥ (कर्ण. ४७.५)
अध्यात्में गुरुलब्धें जेंवि निवे कर्ण त्या जळेशास्त्रें. ॥२२४॥ (कर्ण. ४७.११)
मुक्ति मुमुक्षूस जसी, या तीच स्त्री रुचे, नको कांहीं; ॥२२५॥ (गदा. ४.१६)
हरिकिर्ति गीति जी त्यां देवा ! **व्हावें कुरंग रे ! तींत,** ।
लोळावा हा सत्पदधूळींत जसा तुरंग रेतींत. ॥ २२६ ॥ (सन्मनो. ३२)

(१६) **पुरुष उत्तम** (उदार, गुरु इत्यादि):–

करिति **वदान्य** जसे निज कोश, तसे क्षीण सर्व शर भाते. ॥२२७॥ (कर्ण. १७.१७)
विनवूनि पुसेन, जसा शिष्य ह्मणे इष्ट माग धीदासी. ॥ २२८ ॥ (कर्ण. २६.१६)
अर्जुन झाला रविसुतमर्मी वरबाणपंक्ति शिरकविता, ।
ती कांपवी तयाचें, **रसिकाचें जेंवि काय शिर कविता.** ॥ २२९ ॥
(कर्ण. ४७.४६)

रसिकांविषयींच्या आणखी उपमा परिशिष्ट 'ई' पहा.

(१७) **पुरुष हीन** (हीन वृत्तीचे, दरिद्री इ०):–

पाशीं व्याघ्र शिरकता तन्नाशीं करुणता नुठे व्याधीं. ॥ २३० ॥
(कर्ण. १८.२)
पिटतो आह्मांसि, **जसा गोप पशूंतें धरूनियां काठी.** ॥ २३१ ॥
(कर्ण. ३१.४०)
आतां मरा ! न वांचे दीप्तगृही जो न तोय सांचविता. ॥ २३२ ॥ (कर्ण. ४९.१३)
न जगे तो दुर्भिक्षव्यसनापूर्वी न धान्य सांचविता. ॥ २३३ ॥
(कर्ण. ४९.१४)
प्रभुनें प्रसादकामानुगसा अप्रिय मुखें न लेश वदे. ॥२३४॥ (गदा. ५.२३)
कुरुराज्य तुज न साजे, **प्रभुचें चोरासि जेंवि आभरण.** ॥ २३५ ॥
(उद्योग. ८.१०)
अंधापासुनि पावे भीष्मद्रोणोक्तही अनादर तें ।
जेंवि अनादरिजे, हरिहरकीर्तन सुबधिरें अनादरतें. ॥ २३६ ॥
(उद्योग. ४.४७)
हा गुरुचें दर्शन घे, **हेमंतीं जेंवि अधन घे ऊन.** ॥२३७॥ (उद्योग. १३.४६)
जनमतचि करावें, जें **स्त्रीमत करि जेंवि मानव ढिला तें.** ॥ २३८ ॥
(सन्मनो. ५०)

(१८) **पौराणिक उपमा:—**

गेला द्विज पाताळीं, **चापच्युत रावणारिचा शरसा.** ॥ २३९ ॥
(आदि. २.१०६)
गुरुपत्नीनें केला धन्य, **शिवादृष्टिनें जसा नंदी.** ॥ २४० ॥ (आदि. २.११९)

संशप्तक ते राक्षस, अर्जुन तो रघुपती, न वरचील।
दृष्टांत सज्जनप्रिय; यास्तव न कवि सुमती नव रचील. ॥ २४१ ॥ (कर्ण. १२.११)
गुरुसुत **महेंद्र,** धनु **घन,** शर ते **जलवृष्टि,** सैन्य तो **घोष,**।
नृप **गोवर्धन,** त्याचा धर्ता उत्साह **देव** निर्दोष. ॥ २४२ ॥ (कर्ण. १३.१२)
बळि जिंकितां जसा करि सुरपति सत्कार विष्णुचा भूपा!।
दुर्योधन पांडववधि द्रौणीची स्तुति करी तदनुरूपा. ॥ २४३ ॥ (कर्ण. १३.३०)
पांडवमार्गणपातस्थळ सोडुनि, पळति सर्व तव सैन्यें,।
श्रीरामनामकीर्तनरवभीताघें जसीं धरुनि दैन्ये. ॥२४४॥ (कर्ण. १४.५६)
दुर्योधन **परमेश्वर** वाटे, तो **वीरभद्र** कर्ण बळी,।
धर्मेहि **दक्ष,** समर **मख, ऋत्विज** पांचाळ. होय उग्र कळी. ॥ २४५ ॥
(कर्ण. १४.७४)
भेटे युयुत्सु धर्मा त्यजुनि ज्येष्ठा कृतानया आला।
जैसा साधु बिभीषण रघुकुलतिलका महादयाश्रा त्या. ॥ २४६ ॥
(भीष्म. १.१०८)
राजा धर्म महात्मा मर्दी कुरुसैन्य, त्यासि वाराया।
ये दुर्योधन, **जैसा अंधक रोधावया शिवा,** राया. ॥२४७॥ (कर्ण. १७.२०)
क्षोभे त्यावरि पांडवनृपमति, **महिषासुरीं जसी चंडी.** ॥२४८॥ (कर्ण. १८.७)
पटले कुरुसेनेवरि शर, **लंकेवरि पराक्रमी कपिसे;** ॥२४९॥ (कर्ण. १९.२९)
बळभद्रप्रियभगिनी कृष्णावरजा बळेंचि ज्या वीरें,।
शक्रसुधा जसि गरुडें, हरिलि सुभद्रा तसी महाधीरें. ॥२५०॥ (कर्ण. २०.३)
कुब्जेसि कृष्णसा तूं पटु मज्जयसिद्धिलागि उजराया. ॥२५१॥ (कर्ण. २१.३२)
शल्य तया उत्तर दे, **उग्र जसें विष हरासि अर्णव दे.** ॥ २५२ ॥
(कर्ण. २५.१६)
गुरुसागर बहु गर्जे, **परि मुनिचा एकही भरे न पसा.** ॥ २५३ ॥
(कर्ण. २९.३५)
धाकें धर्म पळाला, हरि अरिनें, **शंभु कीं वृकें पिटिला.**।
कर्ण धराया धांवे **जेंवि हिरण्याक्ष तो महाकिटिला.** ॥२५४॥ (कर्ण. ३१.२८)
उग्रतपोनिधि राजा **त्र्यंबकसा, काय साम्य** तुज आहे,।
स्त्रीसहि तुझ्या **रतीचें,** जरि कोपे तुजकडे नृपति पाहे. ॥२५५॥ (कर्ण. ३१.३३)
अरिहरिपासुनि सुटतां करि करिभूपति पलायन त्वरित,।
सरलें सुरांसि तेव्हां **कालयवनभीतशौरिचें चरित.** ॥२५६॥ (कर्ण. ३१.४३)
पूर्वी **शिवप्रसादें काळापासूनि विप्र तो सुटला;**।
संप्रति कर्णापासुनि नृप. नवल घट न महोपलीं फुटला. ॥ २५७ ॥ (कर्ण. ३२.४)
भीम वृषावरि ये, **विधिवरि जैसा भूतपाल कामारी.** ॥२५८॥ (कर्ण. ३३.९)
झाले विफळ गुरुसुतीं **रंभेचे श्रीशुकीं जसे** गमजे. ॥ २५९ ॥ (कर्ण. ३४.१६)

पाहे त्या विप्रा प्रभु **जैसा कीं पुष्पसायका पुरहा;** ।
तेव्हां वाटे होइल **देवद्दगर्गांत काय कापुर हा.** ॥ २६० ॥ (कर्ण. ३५.२९)

तसेंच कर्णपर्व अ० ५० गी० १९–२२ यांतही पौराणिककथांनी भरलेलीं सुंदर रूपकें दिलेलीं आहेतः—

तुमची आज्ञा **देवी** निजहस्तगतार्जुनायुधें आजी ।
कर्णमहिष मारुनियां विजयातें पावली रणामाजी. ॥ २६१ ॥ (कर्ण. ५०.१९)
त्वां **इंद्रें** प्रेरितसितवाहाशनिनें वृषाद्रिचें पिष्ट ।
केलें हें यश देवा ! गातील तुझें सदा महाशिष्ट. ॥ २६२ ॥ (कर्ण. ५०.२०)
तूं **नरसिंह** महात्मा, बीभत्सु तुझा **नखप्रकर** देवा ! ।
वृष **कनककशिपु,** महिमा **प्रऱ्हाद** तुझीच ज्या रुचे सेवा. ॥ २६३ ॥
(कर्ण. ५०.२१)

तूं **रुद्र,** तुझें तिसरें **लोचन** हें बंधुरत्न, नृप **काम;** ।
तूं **राम,** कर्ण हा **भव,** अर्जुनभुजतेज हें तुझें नाम. ॥ २६४ ॥ (कर्ण. ५०.२२)

तसेंच कर्ण. ५०,५९–६० यांत दुर्योधनाला रावणाची व वालीची व पांडवांस सुग्रीवाची व कृष्णास रामाची उपमा दिली आहे.

त्यजि न पराभूति खळा, **जसि अनसूया त्यजी न अत्रीतें.** ॥ २६५ ॥
(कर्ण. ३०.५१)

नळ होय धर्मराजा, कलहोत्सुक **पुष्करहि** तुह्मी सर्व. ।
बळ होतें सत्याचें, खळ हो ! तुमचा न चालिला गर्व. ॥ २६६ ॥ (कर्ण. ४९.१२)
नयनाग्निकील नीलग्रीवाचा मीनकेतुवरि जैसा ।
अरिवरि सायकनायक जाय कराया क्षय त्वरित तैसा. ॥ २६७ ॥ (कर्ण. ४९.५०)
प्रभुला सत्कीर्ति वरिति, **नृप कन्या भुलुनि जेंवि सौभरितें.** ॥ २६८ ॥
(अवतारमाला २४७)

त्या परमसंकटीं तो स्मरता झाला मदालसामुद्रा, ।
क्षुद्रा उपमा अन्या; त्या ती, **गंगा जसी हिता रुद्रा.** ॥२६९॥ (मदा. ६.१३)
पुष्पोत्कटाचि दुसरी गणितील अजान कीचकवितीतें ।
जी कृष्णा साध्वी कां ह्मणतील न **जानकीच** कवि तीतें. ? ॥२७०॥ (विराट. १.१६९)

(१९) भूतपिशाचादिसंबंधीं:—

अश्वत्था मागावा वर पूजुनि, परि **भला नव्हे मुंजा.** ॥ २७१ ॥ (कर्ण. ११.३१)
उग्रपिशाचाश्रय जो, छाया तापप्रदाचि त्या तरुची ॥ २७२ ॥ (कर्ण. ११.६६)
रक्त प्राशिति, मूर्छित करिती, बधितीच, लागती ज्यासी ।
त्याचें तेज हरिति, शर ते **ब्रह्मग्रहचि** पार्थतरुवासी. ॥ २७३ ॥ (कर्ण. १९.२८)
दुःशासन न वृषाला सोडी, **निधिला जसा बरा भूत.** ॥२७४॥ (कर्ण. ३०.६६)
पार्थितभग्नसुयोधन **मांत्रिकपरिभूतभूतसम** झाला. ॥ २७५ ॥ (कर्ण. ३४.३६)

निजजनविघ्नांत प्रभु हा, **जैसा शरभदेव मुंजांत.** ॥ २७६ ॥
(अवतारमाला २२५)

श्रीनृहरिनामगर्जन भूतातें होय, तेंवि पत्तीतें. ॥ २७७ ॥ (द्रोण. ९.२०)
परिभूतें होतीलच मन्मंत्रबळें पळांत अरिभूतें. ॥२७८॥ (उद्योग.५.२२)

(२०) राजनीतिशास्त्रीय उपमाः—

जसि योजिली सुचतुर प्रभुनें व्यापी समस्त जग नीति, ।
तसि गुरुसुतशरवृष्टि क्षितिला आक्रमुनि जाय गगनीं ती. ॥ २७९ ॥ (कर्ण. १३.१०)
श्रीरामासि भजावें भक्तें म्यां जेंवि तेंवि संतातें, ।
राजासि उपासावें तैसेंचि जनें प्रधानपंतातें. ॥ २८० ॥
(सन्मनोरथ. १)

नित्य महाराज **तुह्मी स्वामी; नाम प्रधानपंत** अजी ! ।
सोडविता जलधींत ग्राहग्रस्ता गजासमेत गजी. ॥ २८१ ॥ (नाममाहात्म्य ९९)

त्रिभुवनराज्य प्रभुचें प्रतिनिधिनें त्वां स्वहस्तगत केलें; ।
भोळ्यादिगंबराचें आक्रमिलें वतन, जळ जसें तेलें. ॥ २८२ ॥
(नाममाहात्म्य १०२)

(२१) वनस्पतिसृष्टींतील उपमाः—

मोचेला (=केळीला) **वात जसा,** गोपींतें कांपवी अरिष्ट खळ. ॥ २८३ ॥
(मंत्रभागवत १०.४३१)

ते एकदांचि निजले; **जाणों सर्वांसि चारिले धुतरे.** ॥२८४॥(मंत्रभाग. १०.६७)
डसले शर अहि मर्मी, सर्वांगें रक्तपूर तो वमला, ।
भ्रमला कृतवर्मा बहु; समरीं **पुष्पितपलाशसा गमला.** ॥ २८५ ॥
(कर्णपर्व १६.१५)

ही फुललेल्या पळसाची उपमा संस्कृतप्राकृतकवींची फार आवडती आहे. मोरोपंतांनीं आपल्या काव्यांत युद्धवर्णनांत पुष्कळच वेळां ही योजिली आहे. कर्ण. १८.११; ३१,५४;४७,२८;

लाजवि **पक्कफळनिचित,** त्यांच्या क्षतशतयुताकृतीस **वड.** ॥२८६॥ (कर्ण.१८.१०)
धर्मशरीरीं जडले शर, **कंटक जेंवि सर्वथा पनसा.** ॥ २८७ ॥ (कर्ण. ३१.२)

ही फणसाची उपमा कर्ण. ४९.३३ यांतही आली आहे.

कृष्णाविणें क्षिति मला **नलिनी मधुपासि जेंवि शुष्करसा.** ॥ २८८ ॥
(उद्योग. १.४४)

झाला म्लान, फिरविला पुष्पाचा जेंवि वन्हिवरि हार. ॥ २८९ ॥
(आदि. ५.१२)

स्पर्शावया सतीला पाहे, दव जेंवि कल्पलतिकेला. ॥२९०॥ (उद्योग. २.२७)

मज ह्मणति, **पारिजातें हि न लंघावी कदापि सुरसा**(=तुळसी) **रे**॥२९१॥
(उद्योग. १३.१४८)

बहु **पानवेल** मिरवे तेंवि न मिरवे यशास **मिरवेल.** ॥२९२॥ (विराट १.१७३)
वद केंवि आवरावी **अमृतफळद्दता रसज्ञमति तूतें ?** ॥ २९३ ॥
(विराट. १.१४)

भीमप्रतापतपनें झाले बहु शुष्क ते जसे **पळवे** (=पाचोळा). ॥ २९४ ॥
(विराट. १.१६७)

बहु सुखशोभाप्रद न **स्वस्तरुचाही** यशासम **स्तबक.**॥२९५॥ (विराट. २.३२)

(२२) **विवाहादि उत्सवांतील:—**

ठोकी सुकंठ, परि त्या न विटवि, **जशि बहुहि दुर्दशा स्याला.** ॥ २९६ ॥
(पंचमस्तोत्ररामायण ६९)

वानर परंतु वाली दडपी कक्षेंत तो दशास्याला, ।
या होय, **फाल्गुनमयी श्रीमंताच्या जशी दशा स्याला.** (=साळयाला)
॥ २९७ ॥ (परंतु—रामायण ३५)

खळकृतनिंदा सुखदा हो **श्यालकृता** जसीच मतिस **रळी.** ॥ २९८ ॥
(सन्मनो. २३)

प्रिय हरिजन हो, आला **जैसा माहेरचा वहायाला,** ।
स्त्रीजन जसा विवाहा, जावें म्यां सज्जना पहायाला. ॥ २९९ ॥
(सन्मनोरथ. ३९)

संसारदुःख विसरवुं सत्पद्धति मतिस, जेंवि काय घडी, ।
वरमायेसि विवाहीं विसरवि **चवरी गुलाल पायघडी.** ॥ ३०० ॥
(सन्मनो. ३६)

पांचालिकाविवाहीं जैसें पिशुनीं तसें असो रुसणें. ॥ ३०१ ॥
(सन्मनो. २०)

आवड असो कथेची, **जसि बाळा फाल्गुनांत पुनिवेची.** ॥ ३०२ ॥
(सन्मनो. ४७)

कृतकृत्य होय तव सुत, **जेंवि पिता अर्पितां वरीं दुहिता.** ॥ ३०३ ॥
(कर्ण. ७.३३)

विजयश्रीसीं होउनि युक्त सुखें श्रीवरा सख्यासंगें, ।
खेळे विजय शरकरें वीरशिरःकंदुकें क्षतजरंगें. ॥ ३०४ ॥ (कर्ण. ११.५)
झांकिति अन्योन्यांतें बाणपटीं, **उत्सवीं जसे व्याही.** ॥३०५॥ (कर्ण. १४.५४)
व्याह्या प्रियतनयेच्या लग्नीं जपला तसा नसे व्याही. ॥ ३०६ ॥
(हरिवंश. ३६.४)

प्रियसखसे यमनगरीप्रति **रक्तें रंगवूनि बोळवीती.** ॥३०७॥ (कर्ण. ३०.७८)
रिपुरक्ताचें खेळों पावुनियां समर फाल्गुना सिपणें. ॥ ३०८ ॥
(उद्योग.४.९९)

(२३) वेदांतादि शास्त्रीयोपमाः—

कर्ण तुझ्या अस्त्रातें, सर्पातें जेंवि गरुड खंडितसे, ।
रिपुशर विजयी गमती, **द्वैतीं अद्वैतवादि पंडितसे.** ॥३०९॥ (कर्ण. ४७.१५)
वारण विदारिलें बहु बाणव्रातें, जसे गिरी पविनें, ।
रविनें किरणगणें घन, कीं **न्यायें बौद्ध खंडिलें कविनें.** ॥३१०॥ (कर्ण. ८.३२)

(२४) वैद्यकीय उपमाः—

वधिलचि हा, **शूलार्ता वाटुनि केला जसा उडीदवडा.** ॥ ३११ ॥
(द्रोण.२१.७१)

कष्टे धर्मा झाला **बहु धिक्कार्तासि लशुनसा मान्य.** ॥३१२॥ (द्रोण. २१.७१)
न भजति सुयशस्काम क्लीबा, **आरोग्यकाम चिबुडाला.** ॥३१३॥ (भीष्म.१.६४)
शाकांत प्रवर जसें, पथ्यहि **तैसें न दोडकें** चव दे. ॥३१४॥ (विराट. ५.४७)
सभ्यें सोडावाचि, **स्वपरविकृतिकर कुसंग गंधकसा.** ॥३१५॥ (उद्योग.७.२८)
सेवावें सेव्य, जरी **पुत्रप्रेमाम्लपित्त ओकवीतें** ॥ ३१६ ॥ (उद्यो. ३.१०१)
हा विप्र उग्रकर्मा **क्लेशकरव्याधिसारखा;** यासी, ।
न उपेक्षावें आळस न धरील प्राणसार खायासी. ॥ ३१७ ॥ (कर्ण. ११.६५)
मंत्रौषधरत्नांहीं देहापासूनि रोगसा नेला. ॥ ३१८ ॥ (कर्ण. ११.७२)
युद्धीं परमार्थ मिळे निश्चित, मिळणें पलायनें तोटा; ।
हें जाणोनि पळे तो मातेच्या **रोग पातला पोटा.** ॥ ३१९ ॥ (कर्ण. ३१.३६)
रास्नादिकषाय शमवि वातादिस, अमृतरस नुरवि शेष, ।
मनुजप तसा प्रजाधिप राम असा स्तविति सुरवर विशेष. ॥ ३२० ॥
(नामांकरामायण १२६)

चोरास सुगम तिमिरीं धन; **खळकर्णासि हितवचें गमति मिरीं.** ॥ ३२१ ॥
(आर्यागीतिमुक्तामाला ४०)

देती बहु तेज स्तव, **सद्वैद्यें योजिले जसे काढे.** ॥ ३२२ ॥ (गदा. १०.१८)

हा काढ्याचा दृष्टांत वारंवार आढळतो. (आदि. ९,३९; १७.३; अश्व. १.६८; मंत्रभागवत १७.५५६.)

आलें मनासि माझ्या **तीक्ष्णहि परि पथ्य हें जसें आलें.** ॥ ३२३ ॥
(गदा. १०.१८)

रणमृत्यु नच रुचे, जरि बहु हित तरि, **जेंवि बोळ वीतीतें.** ॥ ३२४ ॥
(द्रोण. २३.६३)

सुरसाहि न बहु मानी जेंवि ज्वरदूषितास्य पित्तानें. ॥ ३२५ ॥
(स्त्रीपर्व २.१४)

पटु पथ्य गदापूर्वीं पूरापूर्वींच साधिती सेतू. ॥ ३२६ ॥ (स्त्री. ५.५०)

आर्ता धन्वंतरिसा, त्या नारद भेटला पथामाजी. ॥ ३२७ ॥ (अश्व. १.२१)

यद्यश यक्षगणा दे बळ, जेंवि **विषूचिका गदा पाणी.** ॥३२८॥ (हरिवंश ९.५१)

ह्मणती सद्यःकीर्तिप्रज्ञा**ग्निस्पर्श तोंडलें** कवि त्या. ॥ ३२९ ॥ (विराट. ३.५१)

होता तसाचि जागा द्रौणि **ज्वरदग्धकायसा राती.** ॥ ३३० ॥ (सौप्तिक. १.५)

बाळातें पोसावें, हित **भेषज लागतां कटुहि सोसावें.** ॥३३१॥ (कृष्ण.२९.२६)

ने एकदांचि निजले, जाणों सर्वांसि चारिले धुतरे. ॥ ३३२ ॥
(मंत्रभागवत १०.६७)

नयनें फिरवुनि पडला, **कर्कटिकाफळ जसें तसा उलला.** ॥ ३३३ ॥
(मंत्रभाग. ४६३)

गांजीन परि सहावें; **ह्मणिजे वैद्यें दिली सुधा कांजी.** ॥३३४॥ (कर्ण. २१.४०)

त्या धर्मव्यूहावरि जाय, **ज्वरसाचि तद्बळ हिराया.** ॥३३५॥ (कर्ण. १५.२०)

अमृतचि तें त्याच्या रिपुसिंहध्वनिशूलतप्तकर्णांचें. ॥ ३३६ ॥ (कर्ण. २०.१६)

दुःसह दुर्जय शिरला, **अपथ्यशीलांत रोगसा** पार्थ. ॥३३७॥ (कर्ण. ३०.२६)

मंत्रौषधिक्रियातिग रोग जरी रोधिला तरी खवळे, ।
तैसा कर्ण महाबळ रोधूं ह्मणती तथापि तो न वळे. ॥ ३३८ ॥ (कर्ण. ३०.८०)

निज नाशार्थचि पडले भट कृष्णाच्या गळां, न तन्नाशा, ।
मरति ज्वरार्त न जगति पुरवीतां दुग्धसर्पिरन्नाशा. ॥ ३३९ ॥
(कर्ण. ३३.२७)

परि न गणिलेचि तेणें **पथ्यैकपरें जसे स्वरिपु रोग.** ॥३४०॥ (कर्ण. ३४.१४)

हरिलें सदुक्तीनीं, **हक्तम वैद्यानें जसें शलाकांनीं.** ॥३४१॥ (कर्ण. ५०.३३)

शास्त्रसुशस्त्रें काढुनि धर्ममनांतीच मोहमय कुरुप, ।
सरतांचि दक्षिणायण मौन धरी तो **महाकुशल** कुरुप. ॥ ३४२ ॥
(भीष्मभक्ति. १०२)

मजवरि परमानुग्रह, **जेंवि सुधा ज्वरहतासि चाखवितां.** ॥ ३४३ ॥
(मदा. ४.२०)

हा बहु पापद, तापद, यापरी **कटुकी न कटु, न वा कुचला.** ॥ ३४४ ॥
(उद्योग. ३.८८)

पतितासि सांवरी मृदु शुचि हा उपदेश केशवा ! तूळ ।
जैसा अंबार्पित अतिरुग्णासि पदार्थलेश वातुळ. ॥ ३४५ ॥
(उद्योग. १०.८६)

न गिळी कटुकरस ह्मणुनि कोप करुनि काय बाळ कापावा ? ॥ ३४६ ॥
(उद्योग. १३.५२)

(२५) **व्यावहारिक उपमाः—**

यदुनाथातें गोष्टीं पाहे **जैसा चकोर सोमासी.** ।
त्याच्या प्रभुमूर्तिरतद्गुपमेसि **सितारता असो मासी.** ॥ ३४७ ॥
(मंत्रभागवत १०.४८४)

ही चंद्रचकोरांची उपमा पंतांची फार आवडती आहे. मदालसोपाख्यान २.५७ पहा.

आह्मां व्यसनार्तांची धर्मस्थिति हेचि **बाज,** पावें गा ! ।
त्वां मोडावें न इला, स्वस्वास्थ्यसुखार्थ बा ! जपावें गा ! ॥ ३४८ ॥ (सभा. ५.४१)

त्या सिंहनाद होय, **व्याला पुच्छीं जसा पदन्यास.** ॥ ३४९ ॥ (द्रोण. ३.४८)

ब्राह्मण पुष्कळ खवळे **पुच्छच्छेदार्तिनें जसा साप.** ॥३५० ॥ (कर्ण. ११.२०)

डसला काळाहि तया लागति हरिगुणगहूं कडु नरा जा(=ज्या)॥३५१॥
(हरिवंश २०.५८)

तो तैसा लज्जाकर, **जेंवि परपटोपभोग परिटांचा.** ॥३५२॥ (अनुशासन ६.१४)

करिति व्याकुळ ते **शरचोर प्रभुलाहि साधुसार्थाच्या.** ॥ ३५३ ॥
(कर्ण. ११.५५)

जैसे कुपुत्र, गजहि न आवरिति पदेंकरूनि तुडविती. ॥३५४॥ (कर्ण. ११.६०)

या चिंतेसि मदात्मा सांपडला **सुकर वाळवीस पट.** ॥३५५॥ (शल्य. १.१६)

स्त्रीजन विरहीं टाकी, **जैसा अग्नींत दिव्य पट किटला.** ॥ ३५६ ॥
(मंत्रभागवत १०.३८७)

शिष्यांहीं अनुभविलें लालनसुख, **जेंवि वृद्धतोकांहीं.** ॥३५७॥ (आदि. २.६७)

पितरांसि अपत्यांचा लोभ असे, त्यापरीस मज त्याचा. ॥ ३५८ ॥
(मंत्रभाग. १०.३४९)

बाळाच्या सत्कारें माता अतिवत्सला जसी हर्षे ।
भक्ताच्या पूजेनें प्रभु आनंदाश्रु हा तसा वर्षे. ॥ ३५९ ॥ (पांडुरंगदंडक २७)

बहु मेळवूनि बल्लव अन्न पळत जाय कृष्ण सोडून, ।
अधन शिशु जसा टाकुनि चिंतामणि बहु कपर्द जोडून. ॥ ३६० ॥
(उद्योग. १.४९)

मातेतें त्यजुनि पळहि जाय न भलतीकडे जसें बाळ, ।
सत्संगति सोडुनि, मन नच जाउ, तसेंचि घेउ हें आळ. ॥ ३६१ ॥
(सन्मनोरथ. ११)

सत्संगींच शिरावें, **बाळ जनन्यंचळीं जसें** शिरतें. ॥ ३६२ ॥ (सन्मनो. १३)

तुज नलगे शिकवावें, स्नेहें देतें परंतु आठउनि, ।
पतिभजनीं सुख पावो तव मति, **शीतांत जेंवि पाठ उनीं.** ॥ ३६३ ॥
(मदालसो. २-५३)

मातेच्या शिक्षेला होय वश **जसा सदश्व कविकेला.** ॥३६४॥ (मदा. ५-४३)

प्राज्य विषय सेवुनिहि **न तृप्त, अनळ जेंवि भक्षितां आज्य.** ॥ ३६५ ॥
(मदा. ६-१)

अंबांकस्थित शिशु शशिमंडळ कवळावया जसा पाहे, ।
तूं विजयासि वधाया वांछिसि हें कोण जाणता साहे. ॥ ३६६ ॥ (कर्ण. २७-४)
प्रेमकळेतें पाहुनि भुलतो, **बाळक जसा मिठाईतें.** ॥३६७॥ (पांडुरंगदंडक२)
कविहृदयासि बहु रुचे त्यागचि, **बाळास उद्धव नवासा.** ॥ ३६८ ॥
(सन्मनो. ३.१२)

विठ्ठल तेंवि कथेच्या, **सत्राच्या निकट तो वराडि कसा;** ।
हा तत्काळ प्रेमळजन हृदयीं **चिकटतो वरा डिकसा.** ॥३६९॥ (पांडुरंगदंडक५)
ही डिंकाची उपमा द्रोण. ७.१४ यांतहि आलेली आहे.
जो गहिंवरतो, निघतां प्रभूला वंदूनि भेटतो काय ।
'हाय !' प्रभुहि ह्मणे हो ! **कन्येला धाडितां जशी माय.** ॥ ३७० ॥
(पांडुरंगदंडक ५१)

हरि कुरुकुळहित इच्छी **तोकाचें नित्य माय जेंवि हित.** ॥ ३७१ ॥
त्यासि वराशी देतो, **देतो पुत्रासि जसि पिता ठेवी.** ॥३७२॥ (आदि. २.२३)
शलभा दीप, तसा प्रभु हळु हळु येऊंचि दे न त्या पळवी. ॥ ३७३ ॥
(मंत्रभाग. १०.१९२)

जसि शिशुची स्तनपानीं, धर्मश्रवणीं तसीच सादरता. ॥ ३७४ ॥
(भीष्मभक्ति. ८७)

सुकविमन न सोडी हरियश, **जैसें तोक थान,** यागा या, ।
बहुतचि अंतर, विसरे जो सुरसिक तो कथा न या गाया. ॥ ३७५ ॥
(अवतारमाला २९३)

वत्स जसा स्तन्यातें सादर पीतो धरूनि आस्यातें, ।
जें साधुमुखोद्गतयश तैसें प्यावें करूनि आ स्यां तें. ॥ ३७६ ॥ (सन्मनो. ३४)
उपहास मल्ल करि, परि रक्षी स्मरकाळ, कोप हा साचा ।
न धरीच सदय हृदयीं, **जेंवि जनक बाळकोपहासाचा.** ॥ ३७७ ॥
(मल्लारिविजय ५८)

तुज पांडवजय दुर्घट; **नारळ हरिजेल काय खवैतरें ?** ॥ ३७८ ॥
(उद्योग. ९.८१)

त्या स्मरणें मन पडलें तापीं बहु, **जेवि तळमळत डागें,** ।
हृदयें मोह उघडिला **जैसा ग्रीष्मांत तळमळ तडागें.** ॥ ३७९ ॥
(उद्योग. १७.५३)

हे मूर्ति मज जसी, **तसि धनिकाला बहुमता नसेल वही.** ॥ ३८० ॥
(उद्योग.११.१०६)

रक्षिति सर्वांचें मुनि सर्व, **जसे वृत्तिमंत वतनातें.** ॥ ३८१ ॥
(उद्योग. १३.१२४)

कवडी दुर्लभ ज्या त्या मोत्यांच्या जेंवि राशि खंडीची. ॥ ३८२ ॥
(उद्योग. १३.२३०)

(२६) सामाजिक चालीरीति, वगैरेः–

भूपसभा शोभेना कीं नव्हता कर्ण **सत्तिलक** भाळी. ॥३८३॥ (कर्ण. २०.१८)
सद्रसना नामातें, कीं **सोडी बंधुता न दायातें,** ।
तैसी क्षिति चक्रातें; श्रम झाला फारसा तदा यातें. ॥ ३८४ ॥ (कर्ण. ४८.५९)
न टिकति रिपु जिष्णुपुढें **जैसे दिव्यापुढें कुडे शपथ.** ॥ ३८५ ॥
(कर्ण. ३५.१२)

मणिकनकभूषणाहुनि सुबहुमता स्त्रीजना गळसरी ती. ॥ ३८६ ॥
(सन्मनो. ४८)

जी सत्पदभुक्त कुसुममाला **भव्यारि भालदोरी ती.** ॥ ३८७ ॥ (सन्मनो. ६०)
कर्णयुगांत भरावें हें हरिहरिजनयश प्रचुर म्यां तें, ।
जैसा दोंदीं कोंदी गुर्जरदेशस्थ विप्र चुरम्यातें. ॥ ३८८ ॥ (सन्मनो. ३)
हा हो सुतृप्त राघवनामें, **सारेंचि जेंवि तेलिंगा,** ।
शीला जपो, बहु जपति **जैसे अय्याख्य साधु ते लिंगा.** ॥ ३८९ ॥
(सन्मनोरथ. ४)

शील ह्मणजे (*character*). याला पंत फार महत्त्व देत होते हे त्यांच्या शीला–विषयींच्या अनेक उक्तींवरून दिसून येते. आर्याकेका ८९, उद्योग. ५.८० पहा.

मद्ग्रंथ असावा बहुजनबहुमत **जेंवि शंभुवृषभांड.** ॥ ३९० ॥ (सन्मनो. १४)
सूक्त करावें तसें जैसें तपकीरतत्परें जतन. ॥ ३९१ ॥ (सन्मोरथ. १८)

(२७) सूपशास्त्रीय उपमा (भोजनसंबंधी):–

रसिकें तैल न खावें, मिळतां नव विपुल धेनुचें आज्य ॥३९२॥ (अश्वमेध. १.१६)
ही तेलातुपाची उपमा पंतकाव्यांत वारंवार आढळते.

जा, मुग्धा! **दुग्धातें सोडुनि सेवील कोण तक्रातें?** ॥३९३॥(अश्व. १.२०)
हो पूर्णकाम, **सुरभीपोषकजन ताक काय गा! उकळी?** ॥ ३९४ ॥
(द्रोण. ६.७५)

यत्पदयशें सुधारस **विरस, सुरसिकांसि जेंवि भात शिळा.** ॥ ३९५ ॥
(द्रोण. ५.४)

हेंचि बहु सरस **अमृत त्यजुनि रसिक वरिल काय पां गूळ?** ॥ ३९६ ॥
(द्रोण. २०.३०)

तेला निजप्रतापें कढतां होतां प्रतप्त वन्हिच्च पी. ॥ ३९७ ॥
(मंत्रभागवत. १०.१९३)

देवासि जलाशयतटनिष्ठ बकाकार असुर, **सुग्रास** ।
क्षुधित ब्राह्मणसा, गिळि; भीति न शिशु सुरहि बळहि उग्रास. ॥ ३९८ ॥
(मंत्रभाग. १०.१९६)

देती जननीहस्तीं त्या स्त्री **माशाचि मूर्ति ही गुड ती.** ॥ ३९९ ॥
(मंत्रभाग. १०.१४६)

त्या बहु तापति, **जेंवि क्षुधित सदन्नांत गरळ भक्षूनी.** ॥ ४०० ॥
(मंत्रभागवत. १०.३९०)

मोठा गोड कठिण वरि आंत, गुळें घोळिला जसा गोटा. ॥ ४०१ ॥
(मदा.२.६७)

कीं विप्र **पुरोडाश,** क्षत्रकुळें त्यापुढें जसीं **दिवसीं**(=क्षुद्रपक्वान्न) ॥ ४०२ ॥
(उद्योग. १३.८१)

ती सिद्ध होय, **दधिचें जेविं करायासि सिद्ध ताक रवी.** ॥ ४०३ ॥
(उद्योग. १३.२०२)

केंवि म्हणेल रसज्ञा सोडुनि शालीस नाचण्यास हित ? ॥ ४०४ ॥
(विराट. १.१८२)

वीर स्वशक्ति चतुरा कळविती **गंधेंचि जेंवि चव घांस.** ॥४०५॥(विराट. २.४१)

(२८) स्त्रीविषयक उपमाः—

(गीति) मद्र महीपति गमला तो निजला धरुनि पोटिंगीं महिला, ।
ती व्यसुलाहि न सोडी श्री, **पतिला जशि पतिव्रता महिला.** ॥ ४०६ ॥
(शल्यपर्व. २.१०२)

देती प्रभूक्तितें श्रितमति, **कुलजा जेंवि मान सासूतें.** ॥४०७॥(द्रोण. ३.३०)
हो नियति बहुमता मम मतिस, **कुलवतीस जसि सदाश्वश्रू.** ॥ ४०८ ॥
(सन्मनो. ४१)

ती विप्रजना गयनृपवाक् हयमेधक्रियासुखनि वेदी, ।
मणिकनकमयी जसि तनु साध्वी व्हाया प्रिया सुख निवेदी. ॥ ४०९ ॥
(द्रोण. ५.९३)

मतिची पडो हरिगुणीं, **पतिकंठीं मिठि जसी सुदारांची.** ॥ ४१० ॥
(सन्मनो. ६)

हृदय हरिजना, **कांता सतिनें उघडें करूनि ओपावें.** ॥ ४११ ॥
(सन्मनो. ४०)

वरिति स्वयंवरवधू सद्गति सत्कीर्ति याचि सन्मरणीं. ॥४१२॥(कर्ण.७.४)

नव नव निघति विजयशर, **माहेरीं गीत जेंवि दळपांत.** ॥ ४१३ ॥
(कर्ण. १२.१६)

प्रेमें नवीं नवीं तीं माझ्या रसनेसि सुकविकुलगीतें ।
गीतें यावीं, येती **माहेरीं जेंवि बहुत मुलगीतें.** ॥ ४१४ ॥
(सन्मनोरथराजि. २२)

(अनुष्टुबार्ध) **धीला** सद्गुण हे जैसे **मुलीला** नग मोहिती. ॥ ४१५ ॥
(पुंडरीकप्रार्थना. ३७)

(श्लोकचरण) भुले सुकविवाग्वधू तव गुणा **अनर्घ्या नगा.** ॥ ४१६ ॥ (केका. ९९)

कौसुंभरंगरंजितवस्त्रानें शोभती जसी महिला, ।
हतकटकरक्तरंगे आली शोभा रणीं तसी महिला. ॥४१७॥ (कर्ण. ३३.१५)
द्विजशाप **मान्य पतिसा** गुरु, तीस **न** कर्णे **मान्य चाकरसा.** ॥४१८॥
(कर्ण. ४९.३७)

निश्चित धरा रथातें, पलपिंडातें गिळी जसी मकरी, ।
जाररता कुलटासी, पतिबांधवघात हा असीम करी. ॥ ४१९ ॥ (कर्ण. ६.५५)
शुंडा तसि होय, बळें **जसि पडली साधुच्या गळां कुलटा.** ॥ ४२० ॥
भीष्मद्रोणवियोगज्वरतप्ता निज मनांत तव सेना, ।
इच्छी आलिंगाया कर्णातें, **अन्य कांत गवसेना.** ॥ ४२१ ॥ (कर्ण. ७.६)
त्या कर्णाच्या अंगीं खोंवी आपुंख धर्म शर तीस, ।
परि कर्णशक्ति न दमे; **कलहीं कुलटा अजिंक्य गरतीस.** ॥ ४२२ ॥
(कर्ण. ३१.६)

होय सतीस प्रेमें उत्सव पाहोनि नित्य कांत, नवा; ।
विधु पाहतां चकोरां, प्रभुमूर्तिविलोकनीं हि शांतनवा. ॥४२३॥ (भीष्मभक्ति. १०९)
त्या स्तुतिमणिमालेनें कुरुवर **भक्तिस्वयंवरवधूतें** ।
मूर्तश्रीभाग्यें वरि; जें मनि धरिजें शिवेंहि अवधूतें. ॥ ४२४ ॥
(भीष्मभक्ति. ११५)

मुग्धा मतिस पहाया, तसि माझी दृष्टि, तरळली **लाजे.** ॥ ४२५ ॥
(अनुशासन. ३.६३)

स्वप्रियलब्धरसकथन करिती स्वसखीजनीं जसी बाला, ।
प्रेमळजनीं कथूं निजसुख रसना स्तवुनि आपल्या भाला. ॥ ४२६ ॥
(सन्मनोरथ. ४२)

ऊर्वश्यादि सहस्र प्रभुपदपरिचारिका स्त्रिया धन्या ।
पाहुनि लज्जित झाल्या, **नागरकन्या पुढें जशा वन्या.** ॥ ४२७ ॥
(अवतारमाला. ३६)

म्यां कीर्तना टपावें, मार्जारें सर्वदा जसें दुग्धा, ।
सन्मति विनयादिगुणां वाहो, **प्रेमें नगा जसी मुग्धा.** ॥ ४२८ ॥ (सन्मनो. ३८)

सत्पदरजांहुनि अधिक मज चिंतामणि सुरद्रु न गमावे, ।
सन्नतमति**महिलांगीं नवनव** सेवाधिकार **नग** मावे. ॥ ४२९ ॥
(सन्मनोरथ. ६४)

स्त्रीस जसें न त्यजवे केलें उच्छिष्ट मांजरें दुभतें, ।
सद्भजन दूषिलें जरि दुष्टें, सद्बुद्धि न त्यजूं शुभ तें. ॥ ४३० ॥ (सन्मनोरथ. ८)

पूज्य असो मतिस जसा जन **जैसा जड अशक्त जामाता,** ।
सद्दृष्टि या जनीं अवलोकुनि लाजोत साधु **ज्या माता.** ॥ ४३१ ॥
(सन्मनो. १५)

भाग्यवतीला दुर्बळ कन्यासी सत्सभेसि हे उक्ति ।
व्हावी परिपाल्या कीं घेती शिशुचीहि जाणते युक्ति. ॥ ४३२ ॥
(सन्मनो. १९)

साध्वी स्त्रीनें न ढळों द्यावा हा **सुमतिनें तसा पदर,** ।
सेवावें रसिकें वच याचें श्रीराघवें जसें बदर. ॥ ४३३ ॥ (सन्मनो. २५)

साध्वीला जें कांहीं कांतप्रिय तेंचि कार्य होय जनीं. ।
स्वाहाधवानभिमतीं आग्रह काशास आर्य हो! यजनीं. ॥ ४३४ ॥ (सन्मनो. २९)

निश्चय करुनि, न मागें तिळही ठेवी पतिव्रता चरण, ।
भगवद्भजनीं माझी तैसीच करु मति व्रताचरण. ॥ ४३५ ॥ (सन्मनो. ३०)

भजुनि कुमतिला बुडतो, **सुसमर्थहि सर्व जेंवि गणिकेला.** ॥ ४३६ ॥
(मल्लारिविजय ४७)

कीं कुलवतीस गुरुजनभजन न घडतां, वृथा जिणें वाटे. ॥ ४३७ ॥
(आश्रम. ३२)

श्वश्रूकर जेंवि शिरे गेहीं जरि न ह्मणती सुना सीर; ।
व्यूहीं तेंवि कुरुचमू धिक्कारुनि तो घराशुनासीर. ॥ ४३८ ॥ (द्रोण. १०.३१)

सासू करी उपेक्षा त्यागीना **स्वविनयासि परि सून.** ॥ ४३९ ॥
(अश्वमेध. १.१८)

तद्भार्या अनसूया मजवरि करि **सासुमायसी** माया. ॥ ४४० ॥
(सीतारामायण. १२)

श्वश्रूपुढें स्नुषा, तसि भक्तिपुढें शक्ति नच नटावी हो. ! ॥४४१॥ (भीष्म.५.४८)
शोचूं नयेचि सुज्ञे, **जैसी कन्या निवेदिली पतितें.** ॥४४२॥ (उद्योग. ३.४२)
कीर्तन असो मतिस बहु मत, **जैसें स्त्रीस हळदकुंकुं** तरी. ॥ ४४३ ॥
(सन्मनो. ४३)

वरि संकोच असावा आंत बहुत कृष्णकीर्तनीं काम; ।
गुरुजनसमक्ष पतिचें घेतां आर्याग्रहें जसें नाम. ॥ ४४४ ॥
(सन्मनोरथ. ५६)

मुख्य स्वबंधु पांडव, तन्नाशातेंचि हे अकवि टपती, ।
विश्वस्तां मीनातें **परदारातें** जसे बक **विट–पती.** ॥ ४४५ ॥ (उद्योग. ८.९)
क्लीबाला कन्यासी तुज कां द्यावी बळेंचि हे महि म्यां ? ॥ ४४६ ॥
(उद्योग. १०.९४)

तसेंच, सरस उपमेचीं कांहीं उदाहरणें केकावलि पृ० ३३७-३३८ यांत दिलीं आहेत तीं पाहावीं.

बांधी बाहुगुणांनीं दक्षा वामा, न मान दामानीं. ॥ ४४७ ॥
(उद्योग. १३.१६२)
वृद्धकलत्र युव्या, मज हें तेंवि पहावयासि पद लागे. ॥४४८॥(विराट.१.११८)
संगासि उर्वशीच्या स्वप्नीं तरि काय गा ! ढवा लाहे ? ।
सैरंध्री वीरवधू या तुज नरकाय गाढवाला हे. ॥ ४४९ ॥ (विराट. १.३३)
उलटा आंत, स्पष्ट व्यवहार दहांत दाखवी सुलटा, ।
मन्मति हो तैसी **परपुरुषासक्ता सदा जसी कुलटा.** ॥ ४५० ॥
(सन्मनो. ४५)
वाटावें इतराचें, **कामिजना परकलत्र सुंदरसें.** ॥ ४५१ ॥ (सन्मनो. ६६)
क्रीडावें मुक्तींनीं, **माहेरीं जेंवि लाडक्या मुलिंनीं.** ॥४५२॥ (गंगास्तुति ३५)
(श्लोकार्ध) तत्बाणाहत ते **अधःपतनभाक्** झाले महासंगरीं ।
जो कन्याद्रविणें स्वजीवन करी तत्पूर्वजांचे परी. ॥ ४५३ ॥
(कुशलवो० ७.३६)

मुलीच्या लग्नाचा पैसा घेऊन त्यावर उपजीविका करणाऱ्या वधूपित्याप्रमाणें मुलाच्या लग्नाचा चापून हुंडा घेऊन मुलीच्या आईबापांना तळतळत ठेवणारे वरपिते नर हेहि क्षुद्रार्थी होऊन नरकभाक् होत नाहींत काय ? वर दिलेल्या भिन्नभिन्न विषयांवरील मोरोपंतांच्या उपमा वाचून तत्कालीन परिस्थिति, चालिरीति वगैरे गोष्टींवर पुष्कळच प्रकाश पडून पंतांचे त्यासंबंधीं विचारही कळून येतात. असाच प्रकार त्यांच्या काव्यांत इतरत्र त्यांनीं केलेल्या वर्णनावरूनही कळून येतो. पुढील परिशिष्ट 'ड' पहा.





परिशिष्ट-ड





मोरोपंताचे तत्कालीन परिस्थिति, चालीरीति वगैरे गोष्टींविषयीं कांहीं विचार.

हें परिशिष्ट त्रोटक असून केवळ दिक्प्रदर्शनापुरतेंच आहे. मागल्या **'मोरोपंताच्या उपमा'** या 'ठ' परिशिष्टांत यासंबंधीं बरेच विचार आले आहेत. येथें फक्त स्वतंत्र रीतीनें तत्संबंधीं आणखी कांहीं विचार ग्रथित केले आहेत. पंतांच्या शोधक वाचकांस या वार करण्यास मुबलक जागा आहे. स्थलसंकोचास्तव यापेक्षां जास्ती विचार येथें यत नाहींत.

१ कौटुंबिक प्रेमः-

(अ) अपत्यवात्सल्य मातापित्यांचेंः-

(१) कन्यापुत्राची समानताः-

पुत्रचि अधिक, न कन्या, अन्यास गमे, मला न लोभ्याला. ।
नयनयुगांतुनि एकहि द्याया स्वप्नीं न कोण तो भ्याला ? ॥१॥ (आदि. ३१.१८)

(२) कन्येची इच्छाः-

जनककुळाहुनि पतिकुळ अधिक असावें असा वधूकाम. ॥२॥ (हरिवंश ३५...)

(३) कन्येविषयीं समजूतः-

परिसे असें पृथा जों तोंचि ह्मणे त्यांसि कन्यका, मातें ।

द्या, **द्यायाचीच सुता, हे किमपि न येचि अन्य कामातें.** ॥ ३ ॥
आत्मा पुत्र, सखा स्त्री,**कन्या चिंताचि** सर्व काळ, जिला ।
प्रसवोनि वाहती मनिं श्रीमंतहि पितर सर्व काळजिला. ॥४॥(आदि. ३१.२८.२९)
'सुता असाव्या ! ही इच्छा अरिसहि न शिवो' ॥५॥ (उद्योग. १३.२०१)

(४) सामान्यः–

मन मातेचें चिंतुनि अगुणाहि मृता मुलास कळकळतें. ॥६॥ (स्त्रीपर्व. ३.९)
चिरतें काळिज कानीं कन्येचें करुणवच जसें शिरतें. ॥७॥ (स्त्रीपर्व. ५. २३)
द्यावें वचनकराला प्रेमें सर्वस्व वतन यश तातें. ॥८॥ (हरिवंश. २९.)
अहित कथील तरि कसा गुरु ? बाप कसा ? तसीच आइ कसी ? ॥९॥(उद्योग.९.७४)
मातृस्तन्यावांचुनि शिशुचा कृश होय वरदुधे काय. ।
बालकपालक जननीस्नेहचि, बोलोनि बहु वुधें काय ? ॥ १० ॥ (नाममाहात्म्य७४)

(आ) अविभक्त कुटुंबस्थितिः–

(१) पितृप्रेम कन्येचेंः–

कन्या जशि पितृभाग्यें, साधुयशें तेंवि **फुगति** देवधुनी. ॥ ११ ॥
(साधुसत्कार १०)

(२) पितृमातृप्रेमः–

भगवंत भगवदनुगां, आह्मां तों संत सदनुगां ठावें. ।
बाळें प्रथम बयेचे, बापाचे तदनु चरण गांठावे. ॥ १२ ॥
(साधुसत्कार ३०)

मज दीना देवाहुनि अधिक तुह्मी संत सर्वथा धर्में. ।
बाळा जेंवि पित्याहुनि अधिका माताचि द्यावया शर्मे. ॥ १३ ॥
(साधुसत्कार ३१)

(३) बंधुप्रेमः–

पडून
ंनीं

आत्मा जसा तसाचि **भ्राता** येथें न भेद कांहींच ।
वेदस्मृतिशास्त्रमतें; स्वानुभवेंही विशेष नाहींच. ॥ १४ ॥ (स्त्रीपर्व. ३.३६)
यश सुख पुण्य मिळे, मग बंधूंनीं नीट कां न नांदावें ? ॥१५॥ (आदि. ३७.२४

लक्ष्मणाचें बंधुप्रेम राम वसिष्ठादि गुरुजनांजवळ वर्णितोः–

"वदे राम, 'स्वामी ! सुमति धृति दे हा समवन,
प्रभो ! नित्य प्रेमें करि, गमवि गेहासम वन. ।
न सौमित्रि भ्राता, सकळगुरुसुस्नेह सजला,
प्रवासीं रक्षाया द्रवुनि मजला स्पष्ट भजला.' ॥ १६ ॥" (श्रीगुरुरामायण २३)

रामलक्ष्मणांचें बंधुप्रेम वर्णितांना कवि ह्मणतातः–

छाया तनूची तनुला न सोडी । त्या बंधुंची एक तशीच जोडी ॥
परस्परीं त्यांसि अपार गोडी । त्या मित्रभावा उपमाचि थोडी. ॥१७॥ (छंदोरामायण).

रामभरतांचें बंधुप्रेम सीतारामायणांत सीता वर्णन करित्येः–

(श्लोक) तीर्थ, क्षेत्र, तपोवनें, मुनिजन प्रेमार्द्रधी पाहुनी,
स्वामी या विषया पुरा विसरते, पुण्याश्रमीं राहुनी; ।
स्वप्नीं न त्यजिते विरक्ति; असती चित्तें सखी हो ! ढिले,
आले, गाय तसेचि, वत्सभरतस्नेहेंचि हे ओढिले. ॥ १८ ॥ (सीतारामायण १७८)

(इ) साध्वीधर्म व साध्वीचें पतिप्रेमः–

पतिच्या छंदें केलें व्रततप जें काय सर्व तें फळतें. ॥ १९ ॥ (हरिवंश. २६.६५)
मज भक्षीलचि तो (=राक्षस) तरि विधुरपणें सर्वथा नका राहूं, ।
ती स्त्री मीच, ह्मणा, जी ! मागें सारुनिया नकारा, हूं. ॥२०॥ (आदि. ३१.२६)

(ई) सासूसासऱ्यांचें जामात्यावरील प्रेमः–

सासूसि सासऱ्यासहि सुतशतसत्कार्य होय **जामाता**; ।
विहिणीव्याह्याकरवीं धुवविति निजपादतोयजा माता. ॥२१॥ (उद्योग. २१९)
बहुतकरुनि तों एका कन्येच्या या जनांत जा (=ज्या) माता, ।
त्यांसि गमे स्वतनुपरिस अधिक सुतासूनुपरिस जामाता. ॥२२॥ (स्त्रीपर्व ५.२१)
यद्यपि चिंताकारण दे कन्या त्यांसि एक, जामाता– ।
कन्यांच्या संसारीं त्यां होय सुधाभिषेक जा (=ज्या) माता ॥२३॥ (मंत्रभागवत १०)

(उ) सासूसासऱ्यांचें सुनेवर प्रेमः–

(१) सासऱ्याचें प्रेमः–

अग्निशुद्धीनंतर दशरथमामंजीनीं दाखविलेलें सीतास्नुषेवरील प्रेम व त्यांनीं केलेला तिचा गौरवः–

(श्लोक) संसारीं असतात साधु कुलज स्नेहाढ्य कें सासरे,
घेता कें मामाजी परि एक, यासह दुजा साम्यास कैसा सरे ? ।
पोटासीं धरिलें, सये ! मज शिरीं हुंगोनियां दाटले,
प्रेमें तातचि वाटले, नयनिंचे नाहीं झरे आटले ! ॥ २४ ॥

(गीति) अस्मद्दर्शनशोकें, तृणसें सर्वस्व जीवित त्यजुनी, ।
स्वर्गीहि खिन्न होते; प्रीति नव्हे सन्मनांत सत्य जुनी. ॥ २५ ॥
मातें ते वदले, 'तुवां उपवनें, तैसींच वत्से ! वनें,
केलीं; जें पतिभक्तिसद्व्रत सतीसर्वस्व, तत्सेवनें ।
भर्ता तारुनि संकटीं, कविसभा श्रीसंपदे, वारिला,
विश्वोपद्रव, जाहला तव तपें या कंप देवारिला. ॥ २६ ॥
'त्वां सूर्यवंश सुयशें सति ! धन्य केला, । वैदेह धन्य तुज पावुनि कन्यकेला,' ॥
प्रेमें असा मज दिला बहुमान, लज्जा । सांगे मदीय नयनांसि 'पदींच मज्जा.' ॥२७॥
(सीतारामायण १५०–१५३)

(२) सासूचें प्रेमः–

कौसल्यासासूबाई सीतास्नुषेचें गौरव करितांना ह्मणल्येः–

(श्लोक) श्वश्रूंतें क्षितिजा नमी, तंव तिहीं आलिंगिली आदरें,
कौशल्या मग ते वदे सुचुबुकीं स्पर्शोनि तीतें करें, ।
'रामाशीं चिरकाळ सर्वसुखसंपूर्णा स्वपत्या रहा,
पातिव्रत्यबळें तुझ्याचि तरला दुःखाब्धिला वत्स हा. ॥ २८ ॥
वत्से ! तूं रघुवंशभूषणमणी, स्तुत्या सतींच्या गणीं,
चारित्रासि तुझ्या सुरेंद्ररमणी गाती सुखे स्वांगणीं; ।
त्वत्कोपेंचि दशास्य दुर्मति कथाशेष त्रिलोकांत या
झाला, कोण असा असे त्रिभुवनीं मारावयाला तया ?' ॥ २९ ॥

(कुशलवोपाख्यान १.११–१२)

अत्रिभार्या अनसूया हिचें सीतेवर स्नुषाकन्यासदृश प्रेमः–

(श्लोक) वेणी घालुनि, लोचनीं निजकरें, ती लेववी कज्जळ;
लावी चंदन, सुव्रता; मज गमे गंगाचि तें तज्जळ. ।
गुंफी सत्कुसुमें शिरीं, सुरुचिरा माळा गळां अर्पुनी, ।
प्रेमे धर्म कथी, सुधाधिकरसें सूक्ते मला तर्पुनी. ॥ ३० ॥

(गीति) तैसाचि मल्ललाटीं, साध्वी सिंदूरतिलक जो लावी, ।
तोहि अगतसार सदा, कैसी तत्सुकृतकीर्ति बोलावी ? ॥ ३१ ॥
वत्से ! मांडवि ! मद्विवाहचरित प्रेमें पुसे ती सती,
सांगावी मज लागली, निजमुखे सर्वा कथा तीस ती. ।
आशीर्वाद बहु प्रसन्नहृदया, दे मायसी लोभवी;
त्या आर्येसि, तसेंचि ईसहि महावात्सल्य हें शोभवी. ॥ ३२ ॥

(सीतारामायण १३,१४,१७)

(ऊ) स्वामीचें सेवकावरील प्रेम व सेवकाची लीनताः–

मारुतीनें सीताशुद्धी करून सीतेचा चूडामणि रामास आणून दिला तेव्हांचें वर्णन लक्ष्मण वसिष्ठादिगुरुजनांजवळ करितोः–

(श्लोक) आर्येचा, प्रभुला, पदें नमुनियां, दे वीर चूडामणी,
त्या आलिंगुनि हा निवे बहु जसा सच्चंदनाला फणी; ।
घे माथां उपकार मेरुहुनही भारी स्वचित्तीं गणी,
याचा होय हरिप्रवीरनिकरीं बंदी रघूंचा धणी. ॥ ३३ ॥
रघुपति ह्मणे, 'याचा साचा ऋणीच सदा असे'
हृदय कळवी शांता दांता स्वसाधुसदा असें. ।
हरि वरि न तो पाहे साहेचिना स्तवभार हा,
कवि म्हणति, 'या लोकीं शोकीं न मज्जुनि बा ! रहा.'॥३४॥ (श्रीगुरुरामायण३१,३२)

(६) भावंड बुद्बुदाचें **वपु** अति निःसार **मित्र** फेंसाचें ॥

(७) जो तोंचि आपणांतहि **आकाश जसा** घटांत तेविं असे.॥ (मंत्रभा.११)

(८) दुर्योधन पंचाक्षरिमंत्रे परमोग्र **भूत**सा खवळे. ॥ (सभापर्व)

(९) **ग्रथिली उपनिषद्** प्राकृता कशी पशो ! कवनांत॥ (दोहारामा. द्वितीय,४६)

(१०) **प्रेमा कैसा** किति **हा** पटु अपटु असे कीं नसे दंभ गर्व. ॥

(कृष्ण. उत्तरार्ध उपसं. ३)

(११) **'दार'** शब्दाविषयीं विवेचन पृ० २८ पाहावें.

(१२) राज्यच्युतसंगें श्रमपात्र करिसि दिव्य **देह** कां गे **हें** ? ॥ (वन. ९-८)

(१३) श्रीरामरावणसमर होय श्रीरामरावण**समरसा.** ॥ (वन. १२-६६)

(आ) **संस्कृत विभक्तिः—**

(१४) परिभवखिन्न युधिष्ठिर **रात्रौ** प्रभुला ह्मणे अगा अजिता ! ॥ (भीष्म.३,१)

(१५) अंगीकृतगहनाटन **दाशरथी** त्यक्तधैर्य 'हा !' **करिती.** ॥

(निरोष्ठरामा. २३)

(१६) झालें त्वन्नाथवरें यापासुनि देवि ! **कालि !** याही तें. ॥ (द्रोण. १३-२५)

तसेंच (१७) **'अष्टौप्रहर'** असें रूप आढळतें.

विशेषणाला विशेष्याची विभक्तिः—

(१८) जो **तापशमनें, स्वच्छें, यशें** लाजवि कापुरा ॥ (मंत्रिरामायण १२)

(१९) **त्वन्मतिला** जीवनासि **विटलीला**'. ॥

(२०) **'गुरुला दंडा'** (=मोठा दंड) (अहिल्योद्धार, प्रथम गी० २४)

(२१) ते नंदयशोदोद्भव **रात्रीला** नेणतीच **सरलिला.** ॥

(मंत्रभाग. १०-५८९)

(इ) **संस्कृत क्रियापदः—**

(२२) निद्राभंग करिल जो त्या माझे **भस्मसात् करो** नयन ॥ (हरिवंश २३)

(२३) थोडें याहुनि, पाहुनि **नटती** कादंबिनीस केकी तें. ॥ (वन. ६,५८)

(ई) **संस्कृताप्रमाणेंअवग्रहलोपः—**

(२४) विप्रसती ह्मणति 'शिवे ! ऐसेंचि सदा कथोक्त **देऽगाई**' ॥ (द्रोण.५.१९)

(उ) **संस्कृताप्रमाणें सामासिक रूपः—**

(२५) **पुण्ययशा** प्रभु भार्गवराममनःक्षोभ शमवि दे शांती.॥(तीर्थरामायण ७)

(ऊ) **संस्कृताप्रमाणें संधिः—**

(२६) ज्ञान टिकावें व्हावें ऐसें **श्रीकांतसंयशो गान.**॥ मंत्रभागवत ४.१७४

(२७) मातेचा अस्नेहहि होय **यशोहेतु** साधु रामाला ॥(वन.३.७५)

(२८) **'सद्यशोर्थ'** (सभा १-१६)

(२९) न अज्ञहृदयें तशीं तव **यशोरसीं** रंगती । (केका)

(३०) गेलों गृहासि मी जों स्मरत **स्मर-तम-इना** शरण्यातें. (अनु. ६.७५)

(ऋ) **संस्कृताप्रमाणें प्रयोगः–**

(३१) प्रेमें रक्षितिल सदा ह्मणुनि **दिलें मी** जयासि **मत्तातें** ॥ (विराट अ० १)

(३२) पार्थ ह्मणे 'तूं मुनिनीं चित्तीं षडरिक्षयार्थ **धरिलास**' ॥ उद्योग. १

(३३) **वरिलासि मत्सखीनें** स्यांही **वरिलासि** तूं मनें मातें॥(आदि.११)

(३४) जाउनि तो सूत वदे 'कृष्णे ! द्यूतांत **तूं** स्वयें **धर्में** ।
हारविलीस सुयोधन सदनाप्रति ये करावया कर्में. ॥ (सभा. ४)

(३५) प्रद्युम्न ह्मणे **केलों** पूर्वी ऐसाच **मी हरें** काय ? ॥ (हरिवंश ८.१००)

(ऋ) **संस्कृताप्रमाणें शब्दरचनाः—**

(३६) **हा जन** सखीसमाजीं तुमचा सोडूनि काय पद रमला ? (स्त्रीपर्व ४.४३)
हा जन='**अयं** जनः' प्रमाणें योजना. तसेंच 'यशस्' (नपुंसक) शब्द संस्कृताप्रमाणें सकारांत योजिला असून 'यश' असाही योजिलेला आढळतो. 'स्व**यश**तोय' (कर्ण २१-७) '**यश** हरिचें ज्यांसि रुचे' (भागवतारंभ)

(ऌ) **संस्कृत-छंदःशास्त्रानुसरणः**–संस्कृत छंदःशास्त्राप्रमाणें 'पादांतगो वर्णो लघुर्गुरुर्भवेद्वा (छंदोमंजरीटीका)' ह्मणजे पादांतांतील अक्षर दीर्घ असलें तरी लघु, व लघु असलें तरी दीर्घ मानावें हा नियम पंतांनीं पाळलेला आढळतो. थोडीं उदाहरणें:–

(३७) प्रभुसि भरत चरण धरुनि विनवि, परमकरुण तरिहि न परत**ला**, ।
धृतमुनिपथ समजुनि महिसमवनगुरुकथित विहिततप रत**ला**. ॥ ६ ॥
(लघुरामायण)

(३८) सुरसरिदुपपदपितृसख मुनिस नमुनि पुसुनि निववि गुहमति**तें** ।
भरतअनुजसहित जिववि निववि विरहविकळ सकळ पुर अति **तें**. ॥४६॥
(लघुरामायण)

(३९) आधींच श्रीराम क्रव्यादांच्या चमूसि जाळू**न**, ।
विश्वामित्रातें दे आनंद प्राज्य याग पाळू**न**. ॥ (दिव्य अथवा दीर्घ रामायण ६)

('दिव्य' रामायणांतील प्रत्येक गीतींत शक्य तितके 'म'गण योजिले असून फक्त षष्ठस्थानीं 'ज' गण किंवा 'य' गण घातलाच पाहिजे ह्मणून तेथें मात्र 'म' गणाची योजना न करितां 'ज' गण घातला आहे. प्रत्येक गीत्यर्धात २ अक्षरें लघु असून १४ अक्षरें गुरु आहेत.)

(४०) चित्तांत ह्मणे, 'कैसा केला अरिमीन ह्रद अगाध रिता'?॥(उद्योग. १.५०)

(४१) गज जेंवि यूथपतिला पंकह्रदांतूनि उद्धरायासी. ॥ (कर्ण ३७.१३)

(वरील दोन उदाहरणांत 'ह्र' या अक्षरानें मागील अक्षरास गुरुत्व येऊन एकमात्रा अधिक वाढते व छंदोभंग होतो असें प्रथमदर्शनीं वाटतें परंतु 'प्रन्हेवेति पुनः पिंगलमुनेर्विकल्पविधायकं सूत्रम्' असें छंदोमंजरींत सांगितलें आहे. त्याचा अर्थः–'प्र' व 'न्ह' या संयुक्ताक्षरांच्या पूर्वाक्षरांस विकल्पानें गुरुत्व येतें. छंदःशास्त्रांतील हा विकल्पाचा नियम पंतास परिचित असल्यामुळें त्यांनीं वरील प्रमाणें प्रयोग केला आहे. 'न्ह' मुळें मागील अक्षरास द्वित्व आणण्याचें उदाहरण ही पंतकाव्यांत आढळतें. तें खालीं दिलें आहे.)

गंगेंत गतीच्छु तसे ते रक्तनदह्रदांत रिपु न्हाती. ॥ (कर्ण. ३७-१३)

या ठिकाणीं 'न्ह'च्या मागच्या 'द' कारास गुरुत्व आणिलें आहे. मोरोपंताच्या छंदःशास्त्राच्या सूक्ष्म परिचयाचें हें एक ठळक प्रमाण आहे.